Con. 3. X.10.49
320

अंक 10
संख्या 10

सोमवार
17 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट
(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
सदस्यों के भत्ते सम्बन्धी प्रस्ताव	3333-3338
संविधान का मसौदा-(जारी) [अनुच्छेद 59, 62, 147, 175, 13 तथा अनुच्छेद 302 ककक, अनुसूची 3 क, भाग 18, अनुच्छेद 315, 306 क, और प्रस्ताव पर विचार]	3338-3448

भारतीय संविधान सभा

सोमवार, 17 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रात: 9 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत् हुई।

सदस्यों के भत्ते संबंधी प्रस्ताव

***अध्यक्ष:** सबसे पहले श्री मुनिस्वामी पिल्ले के प्रस्ताव को हम लेंगे।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपकी अनुज्ञा से मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> "कि भारतीय संविधान सभा के सदस्यों के भत्तों को शासित करने वाले नियमों में निम्नलिखित संशोधन किये जायें:
>
> '(1) That in rule (D), relating to daily allowance, in paragraph 4 of the Handbook for members, and in paragraph 8 (relating to allowances admissible to members residing at the place where the Assembly meets) of the said Handbook, for the figure, brackets and words 'Rs. 45 (Rupees forty-five)', The figure, brackets and words 'Rs. 40 (Rupees forty)' be substituted.
>
> (2) That exception (c) to Note 1 under rule (A) in paragraph 4 of the Handbook for members, be deleted.'
>
> [(1) कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में दैनिक भत्ते संबंधी नियम (घ) में और उपरोक्त गुटका की कंडिका 8 में (जो उन भत्तों के संबंध में है जो सभा समवेत् होने के स्थान में रहने वाले सदस्यों को ग्राह्य हैं) 'Rs. 45 (Rupees forty-five)' संख्या, कोष्ठक और शब्दों के स्थान में 'Rs. 40 (Rupees forty) संख्या कोष्ठक और शब्द रखे जायें।
>
> (2) कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में नियम (क) के अधीन टिप्पणी 1 का अपवाद (ग) अपमार्जित किया जाये।]"

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

श्रीमान, कुछ कारणवश इस प्रस्ताव को सभा के सामने लाया गया है। इस महान सभा का प्रत्येक सदस्य भारत की वर्तमान सामान्य आर्थिक स्थिति से परिचित है तथा वर्तमान वित्तीय संकट से भी परिचित है। समस्त देश में इस बात की चीख पुकार मची हुई है कि सरकार को मदद करने के लिये इधर-उधर से कुछ बचत करनी चाहिये। यह जो संशोधन मैंने पेश किया है उसमें ये बात है कि दैनिक भत्ते के रूप में जिन सदस्यों को 45 रुपये प्रति दिन पाने का हक है वे उसमें से 11 प्रतिशत छोड़ देंगे और इस प्रकार वह 40 रुपये रह जायेगा। यद्यपि मैं यह मानता हूं कि यह एक छोटा-सा त्याग है। आज जो आर्थिक स्थिति वर्तमान है उसको सुधारने के लिये इस महान निकाय को देश के समक्ष एक मार्ग प्रदर्शन करना है।

श्रीमान, यह 40 रुपये की राशि, जिसे हम अपने दैनिक भत्ते के रूप में कम करके रखने का प्रस्ताव कर रहे हैं हमारा वेतन नहीं है। यह विषय कर्मचारी-वृन्द और वित्त समिति के सामने आया था और इस समिति के सदस्यों ने यह सोचा कि इस विषय को संविधान सभा के समक्ष रखा जाये। सदस्य स्वेच्छापूर्वक अपने दैनिक वेतन में से 11 प्रतिशत की कमी कर रहे हैं। इस महान सभा के कई सदस्यों से मैंने बातें कीं और मुझे विदित हुआ कि वे सब इस विचार से सहमत थे कि दैनिक भत्ते में से पांच रुपये की कमी से कोई कठिनाई नहीं होगी। ऐसी दशा में मैं आशा करता हूं कि सदस्यों के दैनिक वेतन को 45 रुपये से घटा कर 40 करने में यह सभा अपनी सम्मति देगी।

मेरे संशोधन का दूसरा भाग यह है कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में के नियम (क) के अधीन टिप्पणी 1 के अपवाद (ग) को अपमार्जित किया जाये। मद्रास से आने के कारण मैं जानता हूं कि दिल्ली से बलहरशाह तक तथा बलहरशाह से दिल्ली तक गाड़ी में उपाहार के लिये एक डिब्बा लगाने का प्रबन्ध है। इस प्रबन्ध से सदस्यों को भोजन तथा अन्य बातों में कुछ सुविधा मिलती है। एक बार यह समझा गया था कि इस उपाहार के लिये लगाये गये डिब्बे में अधिकतर पाश्चात्य ढंग की मांगों की पूर्ति नहीं होती है। पर वर्तमान प्रबन्ध जो अधिकांश रूप में भारतीय ढंग का है वह शाकाहारी तथा मांसाहारी दोनों प्रकार के भोजनों की व्यवस्था करता है। मेरी राय से दिल्ली से मद्रास और वापसी यात्रा के लिये किया गया यह प्रबन्ध संतोषजनक है। बलहरशाह से मद्रास तक प्रबन्ध पूर्णतया संतोषजनक नहीं है, क्योंकि बलहरशाह पर उपाहार का डिब्बा काट दिया जाता है। पर मार्ग में प्रथम कोटि के उपाहारगृह मिलते हैं और प्रत्येक महत्वपूर्ण स्टेशन पर भोजन का प्रबन्ध करने वाले सेवक यात्रियों से मिलते हैं और उनसे आदेश प्राप्त कर व्यालू तथा अन्य बातों का प्रबन्ध या तो गाड़ी ही में या गाड़ी के रुकने के स्थानों पर करते हैं।

अतः नियमों में ये दो परिवर्तन आवश्यक हैं और मैं आशा करता हूं कि सदस्य इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से स्वीकार करेंगे।

***अध्यक्षः** इस प्रस्ताव पर श्री शंकरराव देव ने एक संशोधन की सूचना दी है।

***श्री शंकरराव देव** (बम्बई : जरनल): श्रीमान, मैं अपने संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (सी.पी. और बरार : जनरल): सभापति महोदय, मैंने श्री मुनिस्वामी पिल्ले जी के इस मोशन पर एक अमेंडमेंट भेजी है उसे मैं पेश करता हूं और वह इस तरह है। श्री मुनिस्वामी जी का मोशन है कि इस असेम्बली के सदस्यों को जो 45 रुपये रोज का डेली अलाउंस मिलता है उसके बजाय 40 रुपया मिले। मैंने श्री मुनिस्वामीजी के इस मोशन पर कि 40 रुपया मिले यह अमेंडमेंट भेजी है कि 40 रुपये के बजाय इस हाउस के हर सदस्य को 20 रुपया रोजाना भत्ता मिले। मेरी इस अमेंडमेंट के भेजने का खास कारण है, वह यह कि जब हम इस देश को स्वतंत्रता प्राप्त कराने के लिये लड़ते थे उस वक्त हममें से हर एक व्यक्ति ने और इस देश के लाखों और करोड़ों व्यक्तियों ने इस देश को स्वतंत्र बनाने के लिये जितना चाहिये उतना त्याग किया। और त्याग करने के बाद महात्मा जी की कृपा से हमें स्वराज्य मिला और हमने इस देश को स्वतंत्र बनाया। स्वतंत्र बनाने के बाद, सभापति जी, इस देश में इस प्रकार का वातावरण पैदा हुआ कि जो कोई भी स्वतंत्रता की लड़ाई में भाग लेने वाला था वह हर आदमी अब यह चाहता है कि मैं कुछ न कुछ ज्यादा कमाऊं और अब मैं अपना जीवन सफल और सुखी करूं। परन्तु स्वतंत्रता मिलने के बाद भी उसको निभाने के लिये इस देश के हर एक व्यक्ति को त्याग करने की जरूरत है। अगर हम इस देश की स्वतंत्रता निभाने के लिये त्याग न करें और आज जो देश की परिस्थिति है यही परिस्थिति आगे चलती रही तो मुझे डर मालूम होता है कि देश की स्वतंत्रता कब तक ठीक रहेगी और कब तक टिकेगी। देश की सरकार की आर्थिक दशा भी बहुत बुरी होती जा रही है और इसलिये उस आर्थिक दशा को दुरुस्त करने के लिए जितना ज्यादा हो उतना ज्यादा त्याग करना चाहिये।

हम तो पहले ही सब त्यागी पुरुष हैं। श्री शंकरराव देव जी ने अपनी अमेंडमेंट मूव नहीं की। मैं चाहता था कि वे मूव करते और उन जैसे आदमी को, जो सात हाथ धोती नहीं पहनते, कुरता और टोपी भी नहीं पहनते उन्होंने जो अमेंडमेंट भेजी है वह खास उनके लिये ठीक नहीं थी। उनकी अमेंडमेंट तो ऐसी होनी चाहिये थी कि इस हाउस के सदस्य को एक पैसा भी नहीं लेना चाहिये। वह तो बैचलर हैं, यानी उनकी शादी नहीं हुई। दूसरे, उनके कोई घर और द्वार नहीं है। तीसरे, वह जो कपड़ा पहनते हैं वह मेरे जैसा नहीं हैं। मैं तो उन्हें महान् त्यागी पुरुष कहूंगा। इतना ही नहीं, वह तो बैरागी हैं। ऐसे बैरागी और त्यागी पुरुष को इस तरह की अमेंडमेंट भेजना ठीक नहीं था।

***श्री एम. सत्यनारायण** (मद्रास : जनरल): मैं पूछना चाहता हूं कि क्या इस तरह किसी व्यक्ति के बारे में कहा जा सकता है?

श्री एच.जे. खांडेकर: नहीं, नहीं। मैं तो उनकी तारीफ कर रहा हूं। मैं तो उन्हें त्यागी, बैरागी, सब कुछ कह रहा हूं। उनके खिलाफ तो मैं कुछ भी नहीं कह रहा हूं। मैं तो यही कहना चाहता हूं कि उन जैसे नेता को इस प्रकार की अमेंडमेंट लानी थी कि हम में से किसी को भी एक पाई नहीं लेनी चाहिये। मैं यही कहना चाहता हूं।

[श्री एच.जे. खांडेकर]

लेकिन मैं तो घरबारी आदमी हूं, मैं कपड़े पहनने वाला हूं, मेरे बाल बच्चे हैं, मेरे मकान हैं और मेरा संसार है। इसलिये मैं तो कुछ न कुछ लेना चाहूंगा। लेकिन उसके साथ-साथ कुछ त्याग भी करना चाहूंगा। तो इन दोनों बातों को मद्देनजर रखते हुए मैंने ऐसी अमेंडमेंट पेश की है कि इस हाउस के हर सदस्य को जो मेरे जैसा है और शंकरराव जी जैसा नहीं है उसको कम से कम 20 रुपये डेली अलाउंस लेना चाहिये। इन शब्दों के साथ, सभापति जी, मैं कहना चाहता हूं कि मेरा जो यह अमेंडमेंट है वह बहुत रीजनेबुल है और हर सदस्य को जिसने आज तक इतना त्याग किया है उसे आगे भी त्याग करने की कोशिश करनी चाहिये और त्यागियों के लिये मेरी ही अमेंडमेंट ठीक है ऐसा मेरा विश्वास है। हर त्यागी को इसे पसन्द करना चाहिये।

त्याग की बातें तो हम इस सभागृह के बाहर हर इन्सान से और हर व्यक्ति से, इस असेम्बली के सदस्यों से और कांग्रेस मंच से सुनते हैं और हमारे नेतागण यह कहा करते हैं कि हमको देश के लिये जितना ज्यादा हो सके उतना अधिक त्याग करना चाहिये। लेकिन अगर हम मुनिस्वामी पिल्ले जी की इस अमेंडमेंट को जिसमें सिर्फ पांच रुपये का त्याग है—इससे ज्यादा का त्याग तो उसमें है नहीं—हम स्वीकार करें तो यह इस हाउस के बड़े-बड़े सदस्यों के लिये बहुत अच्छी बात नहीं है। यह आपके योग्य त्याग नहीं है और अगर आप देहात में जायेंगे और कहेंगे कि हमने अपनी आमदनी में से 5 रुपये रोज का त्याग किया है तो सब लोग हंसेंगे।

***श्री शंकरराव देव** (बम्बई : जनरल): क्या इस प्रश्न पर वाद-विवाद करना आवश्यक है?

***श्री एच.जे. खांडेकर:** श्रीमान, अब मैं अपने भाषण को समाप्त कर रहा हूं। इसलिये, सभापति जी, मेरी जो अमेंडमेंट है वह बहुत ठीक है और मैं आशा करता हूं कि इस अमेंडमेंट को हाउस मंजूर करेगा।

(श्री आर.के. सिधवा भाषण देने के लिये खड़े हुये।)

***अध्यक्ष:** क्या कोई वाद-विवाद आवश्यक है?

***माननीय सदस्यगण:** इस विषय पर अब मत लिया जाये।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान, इस प्रस्ताव का मैं हार्दिक समर्थन करता हूं जिसको..........

***अध्यक्ष:** इस वाद-विवाद से क्या लाभ?

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, केवल एक बात जिसे मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि यह कमी स्वेच्छापूर्वक होनी चाहिये। मंत्री स्वेच्छापूर्वक कमी कर रहे हैं। हम सर्वसम्पति से यह घोषणा कर सकते हैं कि हम भी 5 रुपये प्रति

दिन छोड़ देंगे। नियमों में संशोधन करने तथा इसे अनिवार्य बनाने की अपेक्षा यह अधिक अच्छा होगा। और कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा का आशय यह है कि नियमों में संशोधन करने की बजाय इसे एक संकल्प के रूप में रहने दीजिये जिसका प्रत्येक सदस्य पालन करेगा। उनका आशय यह है कि नियमों के संशोधन द्वारा इसे अनिवार्य बनाने की बजाय इसे संकल्प के रूप में रहने दिया जाये जिसे प्रत्येक सदस्य स्वीकार कर लेगा।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** श्री खांडेकर द्वारा पेश किये गये संशोधन पर क्या मैं कुछ शब्द कह सकता हूं। जहां तक श्री सिधवा की बात का संबंध है एक संकल्प का व्यवहार में वही अर्थ होता है।

***अध्यक्ष:** कार्यालय बिल किस प्रकार बनायेगा?

***श्री आर.के. सिधवा:** संकल्प के आधार पर।

***अध्यक्ष:** जी नहीं, स्वेच्छित संकल्प के आधार पर कार्यालय बिल नहीं बना सकता। जब तक कि सम्बद्ध सदस्य लिखित रूप में न दे। क्या यहां के प्रत्येक सदस्य के लिये आप ऐसा कर सकते हैं? प्रत्येक सदस्य को व्यक्तिगत रूप से ऐसा करना पड़ेगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** मंत्रियों के वेतन एक अधिनियम द्वारा अधिनियमित हैं। उस अधिनियम का संशोधन नहीं किया गया है। फिर भी कटौती स्वेच्छापूर्वक की गई है। इस दशा में भी ऐसी ही प्रक्रिया स्वीकार कर लेनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** मंत्री संख्या में बहुत कम हैं और सब इस बात को लिख कर दे सकते हैं। परन्तु हम यहां पर 300 से भी अधिक हैं। हम सब यहां उपस्थित भी नहीं हैं।

***सेठ गोविन्द दास** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): एक बात और है, हमारे बहुत से सदस्य यहां नहीं हैं। इस कारण सभा को ही इस प्रश्न पर विनिश्चय करने दीजिये।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** श्रीमान, इन नियमों को इस सभा ने बनाया था और मैं समझता हूं कि यही ठीक है कि एक प्रस्ताव पेश किया जाये और वह पारित किया जाये। श्री खांडेकर इस प्रश्न का उल्लेख कर रहे थे कि सदस्यों को क्या कोई अतिरिक्त व्यय मिलता है। मैं भी यह समझता हूं कि यह बात संगत है। इस सभा में हमने जब मूल प्रस्ताव स्वीकार किया था तो किसी व्यक्ति विशेष का न कोई संबंध था न उल्लेख किया गया था। कुछ सदस्य ऐसे थे जिनके परिवार तथा सेवक यहां थे। इस प्रकार बहुत खर्च वाली दो व्यवस्थायें उनकी थीं। जिस समय नियम बनाये गये थे सत्ता ने सर्वसम्मति से 45 रुपये भत्ता स्वीकार किया था अब इस प्रस्ताव द्वारा उसमें से 5 रुपये कम करके 40 रखने का प्रयास किया जाता है और बम्बई होकर चक्करदार मार्ग के बजाय तथा इस प्रकार सरकार से अधिक रुपया देने की बजाय हम सबसे छोटे मार्ग के लिये व्यवस्था कर रहे हैं और जो राशि वास्तव में है उसे देने की व्यवस्था कर रहे हैं।

***अध्यक्ष:** सबसे पहले मैं श्री खांडेकर के संशोधन पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि नियम (घ) और कंडिका 8 पर के संशोधन में प्रस्थापित 'Rs. 40 (Rupees forty)' संख्या, कोष्ठक और शब्दों के स्थान में 'Rs. 20 (Rupees twenty)' संख्या, कोष्ठक और शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि भारतीय संविधान सभा के सदस्यों के भत्तों को शासित करने वाले नियमों में निम्नलिखित संशोधन किये जायें:

'(1) That in rule (D), relating to daily allowance, in paragraph 4 of the Handbook for members, and in paragraph 8 (relating to allowances admissible to members residing at the place where the Assembly meets) of the said Handbook for the figure, brackets and words 'Rs. 45 (Rupees forty-five)' the figure, brackets and words 'Rs. 40 (Rupees forty)' be substituted.

(2) That exception (c) to Note 1 under rule (A) in paragraph 4 of the Handbook for members, be deleted.'

[(1) कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में दैनिक भत्ते संबंधी नियम (घ) में और उपरोक्त गुटका की कंडिका (8) में (जो इन भत्तों के संबंध में हैं जो सभा समवेत् होने के स्थान में रहने वाले सदस्यों को ग्राह्य हैं) 'Rs. 45 (Repees forty five)' संख्या, कोष्ठक और शब्दों के स्थान में 'Rs. 40 (Rupees forty)' संख्या, कोष्ठक और शब्द रखे जायें।

(2) कि सदस्यों के लिये गुटका की कंडिका 4 में नियम (क) के अधीन टिप्पणी 1 का अपवाद (ग) अपमार्जित किया जाये।]"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संविधान का मसौदा–(जारी)

अनुच्छेद 59

***अध्यक्ष:** इसके बाद हम कार्यावली के अनुच्छेदों पर विचार करना आरम्भ करेंगे। अनुच्छेद 59 संशोधन संख्या 445।

***माननीय श्री के. सन्तानम** (मद्रासः जनरल): क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि हम उन अनुच्छेदों को लें जिन पर संशोधन कुछ समय पहले घुमा दिये गये थे। ये संशोधन तो हमें आज सुबह ही दिये गये हैं।

***अध्यक्षः** सदस्यों में ये कल सायंकाल को, जब कि हम सभा में बैठे हुए थे, बांट दिये गये थे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 59, 62, 141, 175 और 13 पर संशोधनों का अर्थ यह होगा कि जो अनुच्छेद पास हो चुके हैं उनको फिर से लिया जाये। क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि सभा की अनुज्ञा ले ली जाये?

***अध्यक्षः** क्या इन अनुच्छेदों को फिर से ले लेने के लिये सभा अनुमति देती है।

***माननीय सदस्यगणः** जी हां।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> "कि अनुच्छेद 59 के खंड (1) के उपखंड (ख) के स्थान में निम्नलिखित उपखंड रखा जायेः
>
> '(b) in all cases where the punishment or sentence is for an offence under any law relating to a matter to which the executive power of the Union extends;
>
> [(ख) उन सब अवस्थाओं में जिनमें कि दंड अथवा दंडादेश ऐसे विषय सम्बन्धी किसी विधि के अधीन अपराध के लिये दिया गया हो जिस विषय तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है;]"

मूल अनुच्छेद 59 का उपखंड (ख) जो राष्ट्रपति की क्षमा प्रदान करने की शक्ति के संबंध का है वह इस प्रकार हैः

> "(ख) उन सब अवस्थाओं में जिनमें कि दंड अथवा दंडादेश ऐसे विषय संबंधी किसी विधि के अधीन अपराध के लिये दिया गया हो जिस विषय के लिये विधि बनाने की शक्ति संसद को है और उस राज्य के विधान मंडल को नहीं है जिसमें कि अपराध किया गया हो।"

इसका अर्थ यह है कि समवर्ती क्षेत्र एक बहुत ही अस्पष्ट स्थिति में छोड़ दिया जायेगा। अनुच्छेद 60 में यह उपबंध किया गया है कि जिन विषयों के लिये संसद ऐसा विनिश्चित करे उन विषयों में संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार समवर्ती क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले विषयों के संबंध में राज्यों तक होगा। यह

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

स्थिति अस्पष्ट रह जायेगी। अत: इस संशोधन द्वारा इस दोष के निराकरण का प्रयत्न किया गया है और राष्ट्रपति के क्षमा करने की शक्ति का विस्तार उन सब विषयों तक कर दिया है जिन तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है।

अनुच्छेद 141 में, जिसमें कि राष्ट्रपति को क्षमा करने की शक्ति दी गई है, एक आनुषंगिक संशोधन करना पड़ेगा जिसे मैं, यदि सभा द्वारा यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो, अभी पेश करूंगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** श्रीमान इस पर मैंने एक संशोधन रखा है। पर मैं इसे इस समय से पूर्व न भेज सका।

मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 20 के संशोधन संख्या 445 में अनुच्छेद 59 के खंड (1) के प्रस्थापित उप-खंड (ख) में 'offence under any law' शब्दों के पश्चात् 'made by Parliament' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन संख्या 445 के प्रयोजन को मैं समझता हूं, पर वह अपने उद्देश्य से भी अधिक व्यापक हो गया है। क्योंकि संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार संसद द्वारा निर्मित विधियों तक ही नहीं होता है वरन् राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई हुई कुछ विधियों तक भी होता हे। उदाहरणार्थ अनुच्छेद 234 और 234 क में, जो निदेश देने के संबंध में हैं, संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार राज्य के विधान मंडल द्वारा निर्मित विधियों तक है। कल वित्त संबंधी आपात के विषय में हमने यह उपबंध किया है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार उन विषयों तक है जिनका संबंध मुद्रा विधेयकों तथा वित्तीय विषयों से है। हम यह नहीं चाहते हैं कि राज्य के विधानमंडल द्वारा निर्मित विधि के अधीन अपराधों की अवस्था में क्षमा करने का अधिकार राष्ट्रपति को हो। इस कारण मैं इसे संसद द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन अपराधों तक ही समिति रखना चाहता हूं। बात यह है कि जब संसद कोई विधि समवर्ती सूची के अधीन बनाती है और संघ की कार्यपालिका को कार्यपालिका शक्ति दे देती है तब तो क्षमा की शक्ति राष्ट्रपति को होनी चाहिये। परन्तु राष्ट्रपति को क्षमा करने का अधिकार हम नहीं देना चाहते हैं चाहे कार्यपालिका शक्ति का विस्तार राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधियों तक हो। अत: मैं समझता हूं कि संशोधन बहुत अधिक व्यापक है और मैं उसे संसद द्वारा निर्मित विधियों तक सीमित रखना चाहता हूं।

मसौदा समिति जो कि बहुत थकी हुई है जल्दी में बनाये हुए संशोधनों को पुन:स्थापित करने का प्रयास कर रही है। न तो जांच करने का उसके पास समय है और न हमारे पास ही।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान् औचित्य प्रश्न पर क्या मैं यह कह सकता हूं कि माननीय सदस्य को अपने प्रति कहने का पूर्ण अधिकार है। उनके पास समय नहीं था, हम इस बात से सहमत हैं। पर यह कह कर कि मसौदा समिति के पास जांच करने के लिए समय नहीं था, मैं नहीं समझता हूं, कि उन्हें मसौदा समिति की निन्दा करनी चाहिये। यदि इन संशोधनों की जांच करने का समय हमारे पास नहीं होता तो हम इन्हें प्रस्तुत न करते।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई : जनरल)**:** यह कहना कि मसौदा समिति के पास समय नहीं था मसौदा समिति की किसी प्रकार से निन्दा करना नहीं है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** उनके उद्देश्य या योग्यता के प्रति मैं शंका नहीं कर रहा हूं, मैं तो केवल यह कह रहा हूं कि वे जल्दी में हैं जो कि एक सच बात है।

***अध्यक्ष:** अब हम खंडों की समाप्ति पर हैं और चार या पांच खंडों पर हमें झगड़ा नहीं करना चाहिये।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** पर जो संशोधन प्रस्तुत किये गये हैं उनमें से कुछ ऐसे सारवत् विषय के हैं कि मैं समझता हूं कि उन पर देर तक वाद-विवाद करना होगा। श्रीमान् इस विषय को मैं आप पर छोड़ता हूं, परन्तु जहां तक इस वर्तमान विषय का संबंध है, मैं समझता हूं कि “made by Parliament” शब्द अर्थ को स्पष्ट तथा ठीक करने के लिए नितान्त आवश्यक है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल)**:** श्रीमान्, मेरे मित्र श्री सन्तानम द्वारा पेश किया गया संशोधन बिल्कुल अनावश्यक है। चूंकि वे अनुच्छेद 60 में दिये गये उपबन्धों को ध्यान में रखना भूल गये इस कारण उन्होंने यह पेश किया है। अनुच्छेद 60 में यह कहा गया है कि संघ की कार्यपालिका का विस्तार उन सब विषयों तक होगा जिनके लिये संसद को विधियां बनाने की शक्ति है, परन्तु जब तक संसदीय विधि इस प्रकार उपबंधित न करे उसका विस्तार उन विषयों तक इस प्रकार से नहीं होगा जिनके सम्बन्ध में विधि बनाने की शक्ति राज्य के विधान मण्डल को भी है अर्थात् समवर्ती सूची के विषयों तक। अतः अनुच्छेद 59 के खंड (1) के उप-खंड (ख) में जो संशोधन मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने पेश किया है वह संसद की विधि बनाने की शक्ति से परे नहीं जा सकता है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** इस अनुच्छेद में केवल उन्हीं विधियों तक सीमित रखने की बात नहीं कही गई है, उसका और आगे तक भी विस्तार हो सकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** नहीं, उसका और आगे तक विस्तार नहीं हो सकता है। उपखंड (ख) में संशोधन करने की यह आवश्यकता है कि केन्द्र की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार केवल सूची 1 में दिये हुए विषयों तक ही

[माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर]

नहीं है वरन् सूची 3 में दिये हुए विषयों तक भी है। और मसौदा समिति की स्थिति यह है कि जब कभी संसद द्वारा कोई विधि बनाई जाती है तो सूची 3 में दिये हुए किसी विषय के सम्बन्ध में यदि वह विधि केन्द्र को कार्यपालिका शक्ति देती है तो राष्ट्रपति को प्राविलम्बन मंजूर करने की शक्ति का विस्तार उस विधि तक होना चाहिये। इस कारण ये शब्द आवश्यक हैं। श्री सन्तानम का संशोधन पूर्णतया अनावश्यक तथा प्रसंग विरुद्ध है क्योंकि अनुच्छेद 60 के अंतर्गत वह बात आ जाती है।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 20 के संशोधन संख्या 445 में अनुच्छेद 50 के खंड (1) के प्रस्थापित उपखंड (ख) में 'offence under any law' शब्दों के पश्चात् 'made by Parliament' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 59 के खंड (1) के उपखंड (ख) के स्थान में निम्नलिखित उपखंड रखा जाये:

'(b) In all cases where the punishment or sentence is for an offence under any law relating to a matter to which the executive power of the Union extends;

[(ख) उन सब अवस्थाओं में जिनमें कि दंड अथवा दंडादेश ऐसे विषय सम्बन्धी किसी विधि के अधीन अपराध के लिए दिया गया हो जिस विषय तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है।]"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 62

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (5) में 'who from the date of his appointment is, for a period of six consecutive months, not a member' शब्दों के स्थान में 'who for any period of six consecutive months is not a member' शब्द रखे जायें।"

मंत्रियों की योग्यता अथवा कदाचित् निर्योग्यता के संबंध में यह एक कोरा शाब्दिक परिवर्तन है। यदि मेरी स्मरण शक्ति ठीक है तो जिस समय हम इस

अनुच्छेद को पारित कर रहे थे तो उस समय मेरे माननीय मित्र श्री गुप्ते ने यह कहा था कि यह श्ब्दावली अधिक उपयुक्त है। और मैं समझता हूं कि इस स्थिति का परीक्षण करने का विचार डॉ. अम्बेडकर के मन में था। हम समझते हैं कि यह शब्दावली अधिक उपयुक्त है और इसी कारण हमने इस संशोधन का सुझाव रखा है।

इस प्रसंग में मैं यह भी कह दूं कि एक संशोधन मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम ने दिया है जो बिल्कुल सही हो सकता है, पर वह भी भाषा परिवर्तन करने का ही विषय है। वास्तव में संशोधन में कोई सार-विषय नहीं है वरन् शब्दों को एक ऐसे ठीक रूप में रख दिया है कि जिससे भविष्य में किसी भ्रमपूर्ण निर्वचन से बच सकें।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** जैसा कि मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने कहा है वह बिल्कुल ठीक बात है कि मेरा संशोधन विषयों के स्पष्टीकरण मात्र के लिए है, क्योंकि जिस रूप में सरकारी संशोधन है उसमें यह बात स्पष्ट नहीं है कि छः महीने की अवधि को कहां से आरम्भ किया जाये और उसकी किस प्रकार गणना हो। यह भी अर्थ लगाया जा सकता है—यद्यपि वह अर्थ ठीक प्रतीत न हो—कि उसके मंत्री होने के पूर्व से ही इस अवधि की गणना की जाये क्योंकि यह कहा जा सकता है कि यदि कोई व्यक्ति संसद् का सदस्य नहीं है तो उसे मंत्री नियुक्त नहीं किया जा सकता। हमारा उद्देश्य यह है कि कोई व्यक्ति, जो संसद का सदस्य नहीं है मंत्री नियुक्त किया जा सकता है, पर इस नियुक्ति के पश्चात् वह छः महीने के अन्दर सदस्य हो जाये और बाद में सदस्य बना रहे। इस कारण मेरा संशोधन यह है:

> "कि सूची 20 के संशोधन संख्या 446 में प्रस्थापित 'who for any period of six consecutive months is not a member' शब्दों के स्थान में 'who, 'after the date of his appointment is for any period of six consecutive months not a member' शब्द रखे जायें।"

जब हमने भारत शासन अधिनियम, 1935 की शब्दावली में परिवर्तन किया था तो उस समय मुझे याद है कि इस बात पर हमने वाद-विवाद किया था और उस अवधि के आरम्भ के लिए हमने 'नियुक्ति तिथि से' शब्द रखे थे। पर उस का यह भी निर्वचन हो सकता था कि बाद में छः महीने के पश्चात् वह सदस्य न रहे और ऐसी अवस्था उसके अंतर्गत न आ सके। अतः मैं इस बात से सहमत हूं कि संशोधन वांछनीय है। परन्तु यदि नियुक्ति तिथि के बाद' शब्द रख दिये जायें तो वह और अधिक ठीक हो जायेगा।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि श्री सन्तानम ने जिस 'बाद' शब्द का सुझाव दिया है उसके स्थान में 'से' शब्द अधिक उपयुक्त होगा? 'बाद' सही नहीं है।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** 'से' का यह अर्थ हो सकता है कि प्रथम छः महीने तक वह सदस्य रहे और उसके बाद यदि वह सदस्य न रहे तो भी मंत्री बना रह सकता है। इस कमी को दूर करने का हम प्रयास कर रहे हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्री सन्तानम के संशोधन के संबंध में केवल एक बात मैं कहना चाहूंगा। उनका संशोधन लगभग वैसा ही है केवल एक जरा-सा अन्तर है वह यह कि कोई व्यक्ति मंत्री है और उचित रीति से निर्वाचित होने के पश्चात् और बाद में मूल निर्वाचन के चार या पांच महीने के पश्चात् निर्वाचन में कोई अनियमितता मालूम हुई और उस निर्वाचन को रद्द कर दिया तो श्री सन्तानम के संशोधन के अंतर्गत ऐसी अवस्था के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। अतः मैं यह सुझाव दूंगा कि हमें ऐसी गलती करनी चाहिये जिसमें कम क्षति हो और सभा को वह संशोधन स्वीकार कर लेना चाहिये जिसे मैंने पेश किया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम :** मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्ष:** तो फिर मैं संशोधन संख्या 446 पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (5) में 'who from the date of his appointment is, for a period of six consecutive months, not a member' शब्दों के स्थान में 'who for any period of six consecutive months is not a member' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 147

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं संशोधन संख्या 447 को पेश करता हूं, जो इस प्रकार है:

"कि अनुच्छेद 147 में 'with respect to which the Legislature of the State has power to make laws' शब्दों के स्थान में 'to which the executive power of the State extends' शब्द रखे जायें।"

संशोधन संख्या 445 पेश करते समय मैं इस स्थिति की व्याख्या कर चुका हूं और उस संशोधन को इस सभा ने कृपापूर्वक स्वीकार कर ही लिया है। इसमें जहां तक राज्यपाल की क्षमा करने की शक्तियों का संबंध है वहां तक उस स्थिति को संभालने का प्रयास किया गया है।

अध्यक्षः प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 147 में 'with respect to which the Legislature of the State has power to make laws' शब्दों के स्थान में 'to which the executive power of the State extends' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 175

श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 175 के साथ निम्नलिखित परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided further that the Governor shall not assent to, but shall reserve for consideration of the President, any Bill which in the opinion of the Governor would, if it became law, so derogate from the powers of the High Court as to endanger the position which that Court is by this Constitution designed to fill.' "

[परन्तु यह और भी कि जिस विधेयक से, यदि वह विधि हो गया तो, राज्यपाल की राय में उच्च न्यायालय की शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण हो कि वह स्थान, जिसकी पूर्ति के लिए वह न्यायालय इस संविधान द्वारा बनाया गया है, संकटापन्न हो जायेगा, उस विधेयक पर राज्यपाल अनुमति न देगा, किन्तु उसे राष्ट्रपति के विचारार्थ रक्षित रखेगा।]

इस स्थिति में हमें यह संशोधन क्यों लाना पड़ रहा है इसका कारण यह है कि संशोधनों पर संशोधनों के अंक 2 के संशोधन संख्या 3406 को डॉ. अम्बेडकर ने भेजा है जिसमें अनुसूची 4 को फिर से बनाने का प्रयास किया गया है, पर सभा ने इस समय उस अनुसूची को छोड़ देने का विनिश्चय किया है और इस कारण डॉ. अम्बेडकर उस संशोधन को पेश न कर सके। उस संशोधन के खंड (7) में इस परन्तुक के संबंध में उपबंध कर दिया था जिसे मैंने अभी पेश किया है। यदि चतुर्थ अनुसूची होती तो यह संशोधन आवश्यक न होता। जब हमने अनुच्छेद 175 पर विचार किया था हमें पूर्ण विश्वास नहीं था कि चतुर्थ अनुसूची संविधान का अंग होगी या नहीं। इस संशोधन को प्रस्तुत करने के पक्ष में मेरी यह व्याख्या है।

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

औचित्य के आधार पर सभा यह स्वीकार करेगी कि जहां तक उच्च न्यायालय की नियुक्ति, क्षेत्राधिकार तथा ऐसी ही बातों का संबंध है यह केन्द्रीय सक्षमता का ही विषय होता है। पर ऐसे भी विषय हैं जिनमें प्रान्त भी हस्तक्षेप कर सकते हैं और यह परन्तुक उच्च न्यायालय की शक्तियों के संबंध में प्रान्तों द्वारा जल्दी में की गई कार्यवाही से बचने के उद्देश्य से है और इसमें यह निदेश है कि राज्यपाल ऐसे विधेयकों को राष्ट्रपति की अनुमति के लिए रक्षित रखे।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय मैं अपने मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी से यह निवेदन करूंगा कि इस विषय के एक अस्पष्ट पहलू पर वे कुछ प्रकाश डालें—जो कि मेरे लिये अस्पष्ट है। मैं उनके इस तर्क को न समझ सका जब कि उन्होंने यह कहा था कि कुछ ऐसे उपक्रम तथा विधेयक पुर:स्थापित हो सकते हैं जो स्थिति को संकटापन्न बना दें। सर्वप्रथम यदि ऐसे विधेयक पुर:स्थापित किये जाते हैं तो क्या आरम्भ में ही यह कार्य विधान मंडल की शक्तियों के परे नहीं होगा। क्या उस विधेयक का पुर:स्थापन संविधान द्वारा नहीं रोका जा सकेगा? और फिर इस संशोधन के अंन्तिम भाग में प्रयुक्त की गई भाषा पर मुझे कुछ आपत्ति है। वह बहुत जटिल है। उसको सरल बनाया जा सकता है जिससे कि उन सबको फायदा हो सके जिनका उससे संबंध है। "वह स्थान....संकटापन्न हो जायेगा" यह सब कहने की अपेक्षा क्या "उच्च न्यायालय की संविधान द्वारा (या अधीन) दी गई शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण होगा" शब्द कहना पर्याप्त नहीं होगा? इससे अनुच्छेद का अर्थ स्पष्ट हो जायेगा, संशोधन के अंत में इस जटिल शब्दावली की मुझे कोई आवश्यकता नहीं दिखाई देती है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी द्वारा पेश किया गया संशोधन बहुत पुराना है। भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन प्रांतों के राज्यपालों को दिये गये अनुदेशों की लिखत में वह मिलता है। अनुदेशों की लिखत की कंडिका 17 में यह कहा गया है:

> "विधेयकों को रक्षित रखने की उसकी शक्तियों की व्यापकता का विरोध किये बिना हमारा गवर्नर यहां उल्लिखित किसी विधेयक की या किसी खंडों की अनुमति नहीं देगा वरन् हमारे गवर्नर जनरल के विचारार्थ रक्षित रखेगा, अर्थात्–
>
> (ख) किसी विधेयक को जिससे, यदि वह विधि हो गया तो उसकी राय में उच्च न्यायालय की शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण होगा कि वह स्थान जिसकी पूर्ति के लिए वह न्यायालय इस अधिनियम द्वारा बनाया गया है, संकटापन्न हो जायेगा।"

यह खंड अनुदेशों की पुरानी लिखत में है, जिसे मसौदा समिति ने चतुर्थ अनुसूची में ज्यों का त्यों रख दिया है। इस अनुसूची का पुर:स्थापन करने का मसौदा समिति

का विचार था और यह संशोधनों की सूची अंक 2 के 368-369 पृष्ठों पर मिलेगा। इस तथ्य के कारण कि मेरी सिफारिश पर सभा इस परिणाम पर पहुंची कि उस समय मैंने जो कारण बताये थे उनके आधार पर भाग 1 में के राज्यों के राज्यपालों के लिए अनुदेशों वाली किसी अनुसूची को रखना अनावश्यक था, अत: मसौदा समिति ने यह समझा कि किसी न किसी तरह से प्रस्थापित अनुदेशों की लिखत का यह विशेष भाग अर्थात् कंडिका 17 संविधान में रखी जाये। श्रीमान् ऐसा करने के कारण ये हैं:

उच्च न्यायालय केन्द्रों के तथा प्रान्तों के भी अधीन रखे गये है। जहां तक उच्च न्यायालय के संगठन और प्रादेशिक क्षेत्राधिकार का संबंध है वे निस्सन्देह रूप से केन्द्र के अधीन है और उच्च न्यायालय के संगठन तथा प्रादेशिक क्षेत्राधिकार में परिवर्तन करने का प्रान्तों को कोई अधिकार नहीं है। परन्तु अर्थ संबंधी क्षेत्राधिकार के संबंध की और सूची 2 में दिये गये किसी विषय संबंधी क्षेत्राधिकार के संबंध की शक्ति नये संविधान के अधीन राज्यों को है। उदाहरणार्थ इस बात की पूरी संभावना है कि राज्य का विधान मंडल उस दावे का मूल्य बढ़ाकर जो उच्च न्यायालय में जा सकता है उच्च न्यायालय के अर्थ संबंधी क्षेत्राधिकार को कम कर दे। यह एक प्रकार है जिसके द्वारा राज्य उच्च न्यायालय के प्राधिकार को कम करने की स्थिति ग्रहण कर सकता है।

दूसरी बात यह है कि सूची 2 में दी हुई किसी प्रविष्टि के अधीन किसी उपक्रम को अधिनियमित करने में, उदाहरणार्थ ऋण रद्द करने अथवा ऐसे किसी विषय में प्रान्त यह कह सकते हैं कि किसी ऐसे न्यायालय अथवा मंडल द्वारा दी गई आज्ञप्ति अंतिम होगी, और उच्च न्यायालय का इस विषय में कोई क्षेत्राधिकार नहीं होगा।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि किसी ऐसे अधिनियम का अर्थ यह होगा कि वह उच्च न्यायालय के उस प्राधिकार का अल्पीकरण करेगा जिसे यह संविधान उच्च न्यायालय को देना चाहता है। इस कारण यह आवश्यक समझा गया कि ऐसी विधि के अंतिम स्वरूप ग्रहण करने के पूर्व राष्ट्रपति को इन बातों का परीक्षण करने का अवसर मिले कि क्या ऐसी किसी विधि को प्रभाववर्ती होने दिया जाये अथवा क्या यह विधि उच्च न्यायालय के प्राधिकार का इतना अल्पीकरण करती है कि उच्च न्यायालय एक निर्जीव शरीर की भांति रह जाता है।

अत: मैं निवेदन करता हूं कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उच्च न्यायालय एक ऐसी महत्वपूर्ण संस्था है जो संविधान द्वारा विधान मंडल और कार्यपालिका में तथा नागरिकों में परस्पर अभिनिर्णय करने के उद्देश्य से बनाई गई है इस कारण संविधान द्वारा सृजित इस महत्वपूर्ण संस्था के पोषण के लिए राष्ट्रपति को ऐसी शक्ति देना बहुत आवश्यक है। इस प्रयोजन के लिए यह संशोधन पुर:स्थापित किया जा रहा है।

***श्री एच.वी. कामत:** भाषा को सरल बनाने के हेतु मेरे सुझाव पर क्या विचार है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** इस समय मैं मसौदा संबंधी किसी संशोधन पर विचार नहीं कर सकता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** बहुत ठीकः बाद में ही करिये।

***अध्यक्षः** अब मैं इस प्रश्न पर मत लूंगा।

प्रश्न यह हैः

"कि अनुच्छेद 175 के साथ निम्नलिखित परन्तुक जोड़ दिया जायेः–

'Provided further that the Governor shall not assent to, but shall reserve for the consideration of the President, any Bill which in the opinion of the Governor would, if it became law, so derogate from the powers of the High Court as to endanger the position which that court is by this Constitution designed to fill.'

[परन्तु यह और भी कि जिस विधेयक से, यदि वह विधि हो गया तो, राज्यपाल की राय में उच्च न्यायालय की शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण हो कि वह स्थान, जिसकी पूर्ति के लिए वह न्यायालय इस संविधान द्वारा बनाया गया है, संकटापन्न हो जायेगा, उस विधेयक पर राज्यपाल अनुमति न देगा किन्तु उसे राष्ट्रपति के विचारार्थ रक्षित रखेगा।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 13

***अध्यक्षः** एक पहले का संशोधन है जिसकी सूचना दी जा चुकी है—संशोधन संख्या 415।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मैं उसे पेश करना नहीं चाहता हूं। श्रीमान् मैं प्रस्ताव पेश करता हूंः

"कि अनुच्छेद 13 के खंड (2) में 'defamation' शब्द के पश्चात् 'contempt of court' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

श्रीमान् सभा को यह विदित होगा कि पहले संशोधन सं. 415 रखा गया था, चूंकि हमारे विधि संबंधी मंत्रणा देने वालों ने यह मंत्रणा दी थी कि जहां तक अनुच्छेद 13 के खंड (1) के उपखंड (क) का संबंध है अनुच्छेद 13 के उपखंड (2) के अपवादों पर कुछ कठिनाइयां होंगी। पर, श्रीमान् इस सभा के कई माननीय सदस्यों ने इस संशोधन के बारे में मसौदा समिति के सदस्यों को कहा, और उन्होंने सोचा कि यह संशोधन केवल किसी कमी को पूरा करने वाला ही नहीं है वरन् वह पूर्णतया उस खंड की रूप रेखा को बदलने वाला भी है। उन्होंने "सार्वजनिक व्यवस्था" इन दो शब्दों के सम्मिलित करने पर आपत्ति की

थी। उस संशोधन के एक भाग के संबंध में विचार यह था कि वाक् स्वातंत्र्य तथा अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य के प्रयोग में तत्कथित कमियों की एक श्रेणी उसके अंतर्गत आ जाये: अर्थात् कोई व्यक्ति एक ऐसे विषय पर भाषण दे जो न्यायालय के अधीन हो और इस प्रकार न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप करे। यह उस श्रेणी के अपराध हैं जो अनुच्छेद 13 के खंड (2) में दिये हुए अपवादों के अन्तर्गत नहीं आते हैं जहां तक कि वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य का संबंध है। इस सभा के माननीय सदस्य यह स्वीकार करेंगे कि हमारा उद्देश्य यह नहीं था कि बिना किसी रुकावट के न्यायालय का अवमान होने दिया जाये, और हमारा विचार यह भी नहीं है कि अनुच्छेद 13 के खंड (1) के उपखंड (क) का इस प्रयोजन के लिए प्रयोग हो।

अत: श्रीमान्, हमने यह सोचा कि खंड (2) में दिये हुए अपवादों के क्षेत्र को विस्तृत करने की अपेक्षा हम केवल इस कमी को दूर करने तक ही अपने आपको निर्बन्धित रखें और इसी कारण हमने मूल संशोधन 415 को छोड़ देने का निश्चय किया और संशोधन संख्या 449 को रखा है जिसमें न्यायालय-अवमान को अपमान-लेख, अपमान-वचन, मानहानि के अथवा किसी ऐसे विषय के जो शिष्टता तथा शील के विरुद्ध है अथवा जो राज्य की सुरक्षा को दुर्बल करने वाले अथवा राज्य को उलटने की प्रवृत्ति वाले विषय हैं उनके बराबर रख दिया है। वास्तव में न्यायालय-अवमान पहली तीन बातों के साथ रहेगा और मैं आशा करता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार करने में सभा को कोई आपत्ति नहीं होगी।

***अध्यक्ष:** प्रो. सक्सेना का एक संशोधन है। मैं उसे नहीं समझ सका हूं। क्या वे उसकी व्याख्या कर देंगे?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): "न्यायालय-अवमान" के स्थान में "अथवा न्यायालय अवमान" पढ़ा जाये। वह भूल से रह गया है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** "न्यायालय-अवमान अथवा कोई विषय": यह बाद में आता है। पारिभाषिक रूप से "मानहानि" के पश्चात् अर्द्ध-विराम होना चाहिये।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपकी अनुज्ञा से मैं संशोधन संख्या 435 पेश करता हूं जो संशोधन संख्या 415 में संशोधन करने के लिए था पर यह संशोधन पेश नहीं किया गया। मेरे संशोधन द्वारा "किसी विधि" शब्दों के स्थान में "किसी युक्तियुक्त विधि" शब्द रख दिये जायें। संशोधन संख्या 415 के संबंध में यह एक पुराना संशोधन था। अब संशोधन संख्या 415 के स्थान में श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने 'मानहानि' शब्द के पश्चात् 'सदाचार, सार्वजनिक व्यवस्था अथवा न्याय-प्रशासन' के स्थान में 'न्यायालय-अवमान' शब्द रखने का संशोधन पेश किया है: और जब मैंने यह संशोधन भेजा था तो वह 'सार्वजनिक व्यवस्था अथवा न्यायप्रशासन' शब्दों को ध्यान में रखकर भेजा था। यह सब कुछ होते हुए भी मेरे संशोधन का मूल्य इस रूप में कम नहीं हुआ है

[पं. ठाकुर दास भार्गव]

कि मैंने यह चाहा था कि अनुच्छेद 13 में संशोधन किया जाये। श्री कृष्णमाचारी के संशोधन में परिवर्तन से मेरे संशोधन में कोई अन्तर नहीं आता। अतः आप की अनुज्ञा से मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> "कि 'any law' शब्दों के स्थान में 'any reasonable law' शब्द रख दिये जायें।"

***एक माननीय सदस्यः** विधि सदैव युक्तियुक्त है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** विधि की परिभाषा केवल एक उपक्रम के रूप में की है जिसे विधान मंडल पार करता है। विधि दोनों प्रकारों की हो सकती है युक्तियुक्त तथा अयुक्तियुक्त भी। यह विधि कि सब नीली आंखवालों को मार डाला जाये एक अच्छी विधि हो सकती है यद्यपि है अयुक्तियुक्त। हम किसी भी विधि को पार करने के लिए सक्षम हैं जो युक्तियुक्त हो अथवा अन्यथा हो। यह सत्य है कि अज्ञानता, आवेश विप्लव तथा ईर्ष्या के कारण हम ऐसी विधि पारित करते हैं जो कुछ को युक्तियुक्त प्रतीत हो और कुछ को अयुक्तियुक्त। इसलिए न्यायालयों को यह देखने की शक्ति दी गई है कि विधियां युक्तियुक्त हैं अथवा अन्यथा। मूल अनुच्छेद 13 में आपने कुछ संशोधन किये हैं, संशोधित रूप में अनुच्छेद 13 में यह कहा गया है कि न्यायालयों को यह देखने की शक्ति दी जाती है कि कोई निर्बन्धन युक्तियुक्त है या नहीं। विधानमंडल को किसी भी प्रकार की विधि पारित करने की क्षमता है और इस कारण कुछ विषयों में न्यायालय को यह देखने की शक्ति है कि विधान मंडल द्वारा प्रयोग में लाई गई शक्तियां युक्तियुक्त हैं। जहां तक मूल रूप का संबंध है मैं नहीं समझता हूं कि कोई भी व्यक्ति इस बात में संदेह करेगा कि न्यायालयों को इस प्रकार की शक्ति से सुसज्जित किया जा सकता है क्योंकि इन शक्तियों से हम न्यायालयों को सुसज्जित पहले ही कर चुके हैं।

अब श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन को लीजिये—वे यह चाहते हैं कि अनुच्छेद 13(2) में "मानहानि" के पश्चात् "न्यायालय अवमान" शब्द जोड़ दिया जाये और फिर वह खंड इस प्रकार पढ़ा जायेगा:–

> "इस अनुच्छेद के खंड (1) के उपखंड (क) की कोई बात अपमान-लेख, अपमान-वचन, न्यायालय अवमान से अथवा शिष्टाचार या सदाचार पर आघात करने वाले, अथवा राज्य की सुरक्षा को दुर्बल करने अथवा राज्य को उलटने की प्रवृत्तिवाले किसी विषय से, जहां तक कोई वर्तमान विधि संबंध रखती हो वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव, अथवा सम्बन्ध रखने वाली किसी विधि को बनाने में राज्य के लिए रुकावट न डालेगी।"

इस न्यायालय-अवमान के संबंध में मेरा विचार यह है कि ये शब्द अनुच्छेद 13 में जोड़ने नहीं चाहियें क्योंकि वास्तव में जिस रूप में न्यायालय-अवमान को हम समझते हैं वह एक ऐसा व्यवहार है जिसके लिए यह आवश्यक नहीं कि

उसका संबंध वाक-स्वातन्त्र्य से हो, क्योंकि जब आप न्यायालय-अवमान संबंधी विधि को पढ़ेंगे तो आप दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 480 में देखेंगे कि बहुदा सामान्य न्यायालय अवमान भारतीय दंड संहिता की धारा 175, 178, 179 और धारा 180 तथा 288 के भंग करने में है। ये सब धारायें व्यक्ति विशेष के एक खास प्रकार के व्यवहार से संबंध रखती हैं। उदाहरणार्थ धारा 175 का संबंध न्यायालय के चपरासी से आह्वान पत्र के न लेने से तथा लेख्य प्रस्तुत न करने से है; धारा 178, 179 और 180 का संबंध न्यायालय द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर देने से इंकार करने अथवा शपथ लेने से इन्कार करने से है। इसी प्रकार से धारा 288 तब लागू होती है जबकि किसी न्यायिक कार्यवाही में हस्तक्षेप हो अथवा जबकि न्यायालय का कोई अपमान हो; अपमान कई प्रकार से हो सकता है और यह आवश्यक नहीं है कि वह भाषण द्वारा ही हो।

अत: मेरा निवेदन यह है कि इनमें से किसी भी धारा का सार यह है कि किसी गलत बात, गलत व्यवहार या प्रवृत्ति पर दंड दिया जाता है न कि स्वयं भाषण पर। अवमान कार्य पर कार्यवाई करने की शक्ति न्यायालयों को है और वे तुरन्त उन अपराधों का निपटारा कर सकते हैं। अत: मेरी प्रथम बात यह है कि ये 175, 178, 180 और 288 धारायें जो धारा 480 में अवमान का विषय हैं इनका वाक्-स्वातन्त्र्य से कोई संबंध नहीं है अत: यह संशोधन वाक्-स्वातन्त्र्य अभिव्यक्ति-स्वातन्त्र्य के विषय से संगत नहीं है।

और फिर श्रीमान्, इस संविधान में हम अनुच्छेद 118 पार कर चुके हैं। उस का संबंध उच्चतम न्यायालय की शक्तियों से है, और जहां तक उच्चतम न्यायलय के अवमान का सम्बन्ध है वह विधि के अन्तर्गत आ चुका है और अवमान के मामलों को निपटाने का उच्चतम न्यायालय को पूर्ण हक है। श्रीमान्, अन्य न्यायालयों के संबंध में यह विधि सामान्यतया या तो मानहानि विधि के या 1926 के अधिनियम 12 के अंतर्गत है। जैसा कि भारतीय दंड विधि की धारा 480 में है न्यायालय के सामने किये गये प्रत्यक्ष अवमान के अलावा न्यायालय तथा दंडाधिकारियों के न्यायिक कार्यों की टीका टिप्पणियां एक प्रकार का पारिभाषिक अवमान है, और यदि आप इस विधि को बदलना चाहते हैं जिनका ऐसे अवमान से संबंध है, यदि आप वाक्-स्वातन्त्र्य की शक्तियों को छीनना चाहते हैं तो आप को यह अधिनियम बनाना चाहिये कि यदि विधान मंडल ऐसी कोई विधि पार करता है तो वह न्यायालयों के परीक्षण के अधीन रहनी चाहिये।

'मानहानि' जिसके अधीन बहुधा ऐसे अवमान आते हैं वह दंड संहिता के उपबंधों के अंतर्गत आ जाती है। मानहानि का प्रश्न बड़ा जटिल है जहां तक व्यवहार सम्बन्धी मानहानि का सम्बन्ध है सत्य पूर्ण प्रतिरक्षा है पर जहां तक अपराध संबंधी मानहानि का संबंध है उसका जितना अधिक सत्यरूप होता जाता है उतनी ही अधिक मानहानि बढ़ती जाती है। जब आप विधान मंडल को कोई भी विधि बनाने की मुख्य शक्ति से सुसज्जित करते हैं और उस विधि की न्यायालय जांच नहीं कर सकते हैं तो इसका यह अर्थ है कि विधान मंडल को बहुत अधिक स्वतंत्रता दी जा रही है और वाक्-स्वातन्त्र्य एक तमाशा-सा हो जायेगा। अभी कुछ दिनों पहले एक अधिनियम पूर्ववर्ती सरकार ने बनाया था और उस अधिनियम द्वारा न्यायालयों को उन व्यक्तियों को दंड देने का अधिकार दिया गया था जो कुछ निर्णयों की टीका टिप्पणी करते थे। वह न्यायिक-पदाधिकारी-रक्षक अधिनियम कहा

[पं. ठाकुर दास भार्गव]

जाता था और उस अधिनियम के उपबंध बहुत ही विस्तृत तथा व्यापक थे। यह भी हो सकता है कि न्यायालय-अवमान के अन्तर्गत ऐसे अवमान भी आ जायें। ऐसे अवमान के मामलों में जो पारिभाषिक रूप में अवमान के मामले हैं और जो न्यायालय के समक्ष उसी समय नहीं किये जाते है वे विधि-अवमान के अंतर्गत आ सकते हैं और इसी प्रकार से उन पर नियंत्रण होना चाहिये। और उनके निर्वचन का उत्तरदायित्व न्यायालय के क्षेत्राधिकार में होना चाहिये। यदि हम ऐसा नहीं करते तो मुझे इस बात का भय है कि वाक्-स्वातन्त्र्य अथवा अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य प्राय: नष्ट हो जायेगा।

यदि आप अनुच्छेद 13 के छ: खंडों को कृपा कर देखेंगे तो आपको "युक्तियुक्त निर्बन्धन" शब्द मिलेंगे। पर खंड (2) में "युक्तियुक्त निर्बन्धन" जैसे शब्द नहीं हैं। जिसका अर्थ यह है कि विधान मंडल को किसी प्रकार के भी निर्बन्धन लगाने की शक्ति दी गई है युक्तियुक्त अथवा अयुक्तियुक्त। जबकि खंड (2) का मूल विषय कुछ विषयों तक ही सीमित था तब तो मैं समझ सकता था कि "युक्तियुक्त" शब्द लुप्त कर दिया होगा। फिर भी जहां तक राजद्रोह का संबंध है जबकि मूल अनुच्छेद हमारे सामने था हमने इस विधि का संशोधन किया था और हमने यह देखा था कि "राजद्रोह" के अंतर्गत वे मामले नहीं आते थे जिन पर इसके अंतर्गत विचार नहीं हो सकता था। इस कारण हमने शब्दों में इस प्रकार परिवर्तन कर दिया था: "जो राज्य की सुरक्षा को दुर्बल बनाने अथवा राज्य को उलटने की प्रवृत्ति वाले" और चूंकि इन शब्दों में परिवर्तन कर दिया गया था इस कारण "युक्तियुक्त" शब्द खंड (2) में नहीं रखा गया था। अब खंड (2) द्वारा केवल सामान्य विषयों पर ही विचार नहीं किया जायेगा बल्कि न्यायालयों के कार्यपालिका प्राधिकार संबंधी वाक्-स्वातन्त्र्य के प्रश्न का पुर:स्थापन भी इसमें किया जा रहा है।

अत: चूंकि हम खंड (2) के क्षेत्र को बढ़ा रहे हैं, यह बात युक्तियुक्त प्रतीत होती है कि विधान मंडल की शक्तियों पर निर्बन्धनों के क्षेत्र को हम यहां तक विस्तृत कर दें कि यदि हम "विधि" शब्द के पूर्व "युक्तियुक्त" शब्द रख दें तो हम अपने उद्देश्य की पूर्ति कर लेंगे और मानहानि, अपमान-लेख तथा अपमान-वचन, इत्यादि की अथवा किसी ऐसे विषय की जो शिष्टाचार या सदाचार पर आघात करने वाला है, परिभाषा करने में विधान मंडल के क्षेत्र को निर्बन्धित करने के उद्देश्य की भी हम पूर्ति कर लेंगे। ये सब विषय किसी सीमा तक तर्कसम्मत हो जायेंगे और गणराज्य के नागरिकों के अधिकार तथा विशेषाधिकारों को कम करने की अपेक्षा यदि हम उनकी स्वाधीनता के क्षेत्र विस्तृत कर दें तो अधिक अच्छा होगा और इस कारण मैं यह सुझाव देता हूं कि "किसी विधि" शब्दों के स्थान में "किसी युक्तियुक्त विधि" शब्द रख दिये जायें। यदि इन शब्दों को जोड़ कर हम इसमें और आगे संशोधन करने से सहमत नहीं हैं तो मुझे इस बात का भय है कि हम फिर उसी रीति को अपनाने में अग्रसर होंगे जिसे दुर्भाग्यवश हम अपनाते रहे हैं अर्थात् यह कि अनुच्छेद 13 में जो कुछ दिया गया है उसे किसी न किसी रूप में छीन लिया जाये। अनुच्छेद 24, 241, 278 और 307 तथा अन्य अनुच्छेदों को अधिनियमित करके हम ऐसा कर चुके हैं।

अतः मेरा विनम्र निवेदन यह है कि वाक्-स्वातन्त्र्य तथा अभिव्यक्ति संबंधी इस अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय में हमारा इस प्रकार का प्रबन्ध हो कि जो दिया जा चुका है वह छीना न जाये और विधान मंडल को हमने जो शक्तियां दी हैं उनकी यहां तक कमी कर दी जाये कि वे न्यायालय के परीक्षण के अधीन हों। आखिर जिस सरकार ने जिस प्रकार से विधान मंडल का सृजन किया है उसी सरकार ने उसी प्रकार से न्यायालयों का सृजन किया है। अतः जब आप स्वयं विधान मंडल को यह शक्ति दे रहे हैं कि वह न्यायालय को अवमान के अपराध में लोगों को दोषी ठहराने का अथवा न्यायालय-अवमान के संबंध में उन पर कार्यपालिका रीति से कार्यवाही करने का अधिकार दे तो न्यायालयों के प्राधिकार के प्रति शंका करने की कोई बात नहीं है। इस संशोधन द्वारा आप न्यायालयों को यह देखने की शक्ति दे रहे हैं कि न्यायालय-अवमान के संबंध में अधिनियमित की हुई विधि ठीक है या नहीं। वास्तव में एक प्रकार से आप न्यायालयों की सहायता कर रहे हैं और दूसरे प्रकार से न्यायालयों के प्राधिकार को विस्तृत कर रहे हैं। इसलिए मैं निवेदन करता हूं कि सभा मेरे इस संशोधन को स्वीकार करे।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, यह संशोधन अनुच्छेद 13 खंड (1) (क) के संबंध में है। खंड (1) (क) में कहा गया है कि समस्त नागरिकों को वाक्-स्वातन्त्र्य तथा अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य का अधिकार होगा। खंड (2) भाषण देने तथा किसी ऐसे शब्द के प्रयोग करने पर जिसमें अपमान-वचन, अपमान-लेख तथा मानहानि हो, निर्बन्धन आरोपित करता है। मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी यह चाहते हैं कि "मानहानि" शब्द के पश्चात् "न्यायालय-अवमान" शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।

सर्वप्रथम मुझे यह कह लेने दीजिये कि यह आनुषंगिक संशोधन नहीं है। यह एक मूल प्रस्थापना है जो सभा के समझ प्रस्तुत की जा रही है। श्रीमान्, हम जानते हैं कि इस न्यायालय-अवमान के संबंध में न्यायाधीश पहले अपनी शक्तियों का किस प्रकार प्रयोग करते थे–मानों वे त्रुटि कर ही नहीं सकते। यहां तक कि तीसरे दर्जे के दंडाधिकारी, प्रथम दर्जे के दंडाधिकारी, और उपन्यायाधीश ऐसी निन्दा किया करते थे कि जिसको उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों तक ने कई बार निन्दा की है। मैं यह भी कहना चाहूंगा कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश स्वयं अभियोजक के रूप में बैठते हैं। वे स्वयं यह चाहते हैं कि न्यायपालिका और कार्यपालिका के कृत्यों को पृथक्-पृथक् कर दिया जाये। न्यायालय-अवमान के मामले में उच्च न्यायालय का न्यायाधीश अभियोजक होता है और वह स्वयं उन मामलों का निर्णय करने बैठता है जिनमें वह स्वयं यह समझता है कि न्यायालय-अवमान किया गया है। हमारे सामने ऐसे कई मामले आये हैं। मैं दो मामलों के दृष्टान्त दूंगा, श्री बी.जी. हैरीमेन 'सेन्टिनल' के संपादक और श्री देवदास गांधी 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के संपादक। इन दोनों व्यक्तियों द्वारा की गई बहुत ही युक्तियुक्त आलोचना की निन्दा इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने की। उच्च न्यायालय के एकतरफा निर्णय को मानने की बजाय उन्होंने जेल जाना अच्छा समझा और वे जेल गये। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि मेरे वकील मित्र जो यहां पर हैं वे न्यायाधीशों के प्रति इतने

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

उदार क्यों हैं। न्यायाधीशों के कोई सींग तो लगे नहीं हैं, वे भी आखिर मनुष्य ही हैं। उनसे भी त्रुटियां हो सकती हैं। हम उनके प्रति इतने कोमल क्यों बनें? हमें लोकहित की रक्षा करनी चाहिये। यदि कोई नागरिक भाषण के रूप में किसी उस तीसरी श्रेणी या चौथी श्रेणी के दंडाधिकारी के कार्य को निन्दा करता है जिसने जनता की निन्दा की है तो क्या उस व्यक्ति को भाषण देने और उस कार्य की आलोचना करने का हक नहीं है?

यह अनुचित है कि न्यायालय-अवमान के विषय में यह खंड जोड़ा जाये। मैं इसका कड़ा विरोध करता हूं। यह बहुत अनुचित है कि नागरिक को कुछ अधिकार देने के पश्चात् और उसे इतने खंडों द्वारा निर्बन्धित कर आप "न्यायालय-अवमान" की प्रविष्टि कर उसे और भी अधिक निर्बन्धित करना चाहते हैं। न्यायालय-अवमान में हम जानते हैं कि जब कोई असाधारण बात हो जाती है तो उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को कुछ शक्ति होती है। यहां आप दंडाधिकारियों से लेकर उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों तक शक्ति देते हैं। उस दशा में भी मैं यह कहता हूं। कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ऐसे नहीं हैं कि उनसे त्रुटि न हो; उन्होंने भी बहुत-सी त्रुटियां की हैं। वे यह नहीं चाहते हैं कि जब लोक-जीवन के हित में आलोचना आवश्यक है तब भी उच्च-न्यायालय के न्यायाधीशों के विरुद्ध आलोचना न की जाये।

श्रीमान इन शब्दों के सहित इस समय मैं यह समझता हूं कि मसौदा समिति इन "न्यायालय-अवमान" शब्दों को छोड़ दें जो दोनों समाचार पत्र तथा लोक की ओर से सदैव झगड़े की जड़ रही है। मैं यह जानना चाहता हूं कि किस संविधान में न्यायालय-अवमान रखा गया है। मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर यह बतायें कि क्या संसार के किसी संविधान में न्यायालय अवमान समाविष्ट है। यह शक्ति सदैव न्यायाधीश के साथ रहती है। आप इसे संविधान में क्यों रखना चाहते हैं और न्यायाधीशों को सर्वोपरि क्यों बनाना चाहते हैं? आप उसे ईश्वर से भी बड़ा बनाना चाहते हैं।

***अध्यक्षः** इसका न्यायालय से कोई संबंध नहीं है। यदि आप अनुच्छेद को पढ़ेंगे तो आपको मालूम होगा कि उसमें यह कहा गया है कि उपखंड (क) की किसी बात से अवमान संबंधी किसी विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव, अथवा अवमान संबंधी किसी विधि के बनाने में राज्य के लिये रुकावट न होगी।

***श्री आर.के. सिधवाः** उसका संबंध नागरिकों से है। नागरिकों को वाक्-स्वातन्त्र्य और अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य का अधिकार होगा पर वे कोई ऐसा भाषण न दे सकेंगे जिसमें अपमान लेख अपमान-वचन या न्यायालय-अवमान हो। कोई निर्णय न्यायालय द्वारा दिया गया हो.....

***अध्यक्षः** एक ऐसी विधि पार की जा सकती है जो किसी गैर सरकारी व्यक्ति की मानहानि करने में रुकावट डाले, पर ऐसी विधि पार न की जाये जो न्यायालय

की मानहानि या उसके प्रति अपमान-लेख को रोके। आपके तर्क का यह आशय है।

* **श्री आर.के. सिधवा:** न्यायालय-अवमान के संबंध में, मैं नहीं चाहता हूं कि कोई विधि बनाई जाये। इस विषय में मैं बहुत स्पष्ट हूं क्योंकि न्यायालय-अवमान के बारे में मेरा पिछला अनुभव है कि छोटे से लेकर बड़े न्यायालयों तक के न्यायाधीश निष्पक्ष नहीं रहे हैं। इसलिए मैं इस संशोधन के विरोध में हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, न्यायालय-अवमान पर गरमागरम बहस चल रही है। मैं निवेदन करता हूं कि उच्च न्यायालयों को तात्कालिक रीति से अवमान के लिए दंड देने की शक्ति होनी चाहिए। इसका यह कारण है कि किसी मामले में जांच शांत तथा निष्पक्ष वातावरण में केवल साक्ष्य के आधार पर होनी चाहिए। यदि न्यायालय-अवमान को लेकर आगे बढ़ने की शक्ति नहीं है तो न्यायालय में लम्बित किसी मामले की समाचार पत्र द्वारा जांच कोई भी व्यक्ति आरम्भ कर सकता है और यह भी हो सकता है कि मामले के गुणावगुणों के बारे में वह जनता में धुंआधार भाषण देने लगे और इस प्रकार मामले की ठीक तथा निष्पक्ष जांच में बहुत हानि पहुंचाये। इस कारण न्यायालय-अवमान को हमारी विधि पुस्तक में स्थान मिला है। न्यायालय-अवमान अधिनियम के नाम से 1926 का एक अधिनियम है। कुछ ऐसे अवमान है जिनके लिए छोटे से छोटे दंडाधिकारी द्वारा दंड दिया जा सकता है। श्री सिधवा ने ऐसे दंडाधिकारी को चौथी श्रेणी का दंडाधिकारी कहा है; ऐसी कोई श्रेणी है ही नहीं। यदि कोई व्यक्ति न्यायालय की कार्रवाई में हस्तक्षेप करता है तो किसी भी न्यायालय द्वारा उसे उसी समय दंड मिलना चाहिये। अवमान के कई अन्य घोर प्रकार भी हैं जिनके लिए केवल उच्च न्यायालय द्वारा ही दंड दिया जा सकता है।

यह कहा गया है कि उच्च न्यायालय अभियोगी या अभियोजक बन जाता है। वास्तव में न्यायालय की प्रतिष्ठा कम हो जाती है और उसकी निरपेक्षता पर संदेह होता है, इस कारण अवमान के लिए दंड देने की शक्ति केवल उच्च न्यायालय को होनी चाहिये। उदाहरण के रूप में यदि हम राष्ट्रपति का अवमान करें तो केवल राष्ट्रपति को ही उसे निपटाने की तात्कालिक शक्ति होनी चाहिये। यह केवल समानता के रूप में है कि न्यायालय अवमान विधि का अंग हो। विधि का अंग तो वह है ही। पंडत ठाकुर दास भार्गव ने यह बताया था कि अन्य स्थान में हम यह उपबंध पहले कर चुके हैं कि न्यायालय-अवमान को न्यायालय द्वारा निपटाया जाये और इस संशोधन पर उनकी आपत्ति केवल यह है कि क्या इसे अनुच्छेद 13 के खंड (2) में स्थान दिया जाये। इसी समय यह मालूम करना कठिन है कि जो उपबन्ध हम बना चुके हैं उसका क्या प्रभाव है। हम अपने विचारों में बार-बार परिवर्तन करते हैं और बार-बार रद्दी प्रकार के नये संशोधन

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

पुर:स्थापित करते हैं कि यह मालूम करना बहुधा असम्भव हो जाता है कि संशोधन का आशय क्या है। अधिक से अधिक यह होगा कि एक बात दो स्थानों पर आ जाये। यदि ऐसा हो भी जाये तो इस संविधान में वह कोई बड़ा दोष नहीं होगा क्योंकि अन्य स्थानों में एक बात दो स्थानों पर बहुत आई हैं। अत: मैं निवेदन करता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार कर लिया जाये।

पंडित ठाकुर दास भार्गव का संशोधन कि "किसी विधि" के स्थान में, "किसी युक्तियुक्त विधि" रखा जाये।, व्यवहार में व्यर्थ सिद्ध होगा। यदि कोई विधि पार की जायेगी तो वह विधान मंडल द्वारा पार की जायेगी। यह हमेशा मानना पड़ेगा कि विधान मंडल ऐसी विधि पारित करता है जो युक्तियुक्त होती है न कि अयुक्तियुक्त—कम से कम विधान मंडल तो यही समझता है। आखिर विधान मंडल पूर्णतया स्वतंत्र है। परन्तु, "युक्तियुक्त" शब्द कोई प्रतिबन्ध नहीं हो सकता है। ऐसा प्रतिबन्ध तो उनकी शक्ति ही में निहित मान लेना चाहिये और इस तथ्य में कि निर्वाचित सदस्य विधि बनायेंगे यह भाव निहित है कि बनाई गई विधि युक्तियुक्त है। परन्तु मान लीजिये कि हम इस पद का पुर:स्थापन करें और उसे "युक्तियुक्त विधि" बना दें तो विधान मंडल पर उसका कोई बन्धनकारी बल नहीं होगा। "युक्तियुक्त" शब्द उनकी शक्ति में कोई कमी नहीं करेगा या उनके स्वविवेक में कोई रुकावट नहीं डालेगा। इन परिस्थितियों में 'युक्तियुक्त' शब्द बिल्कुल अनावश्यक होगा और व्यवहार में व्यर्थ सिद्ध होगा और इस कारण यह संशोधन स्वीकार नहीं होना चाहिये। जहां तक न्यायालय-अवमान का संबंध है इस समय उसे स्वीकार कर लेना चाहिये पर मसौदा समिति द्वारा यह विचार होना चाहिये कि दो स्थानों में एक बात न आने पाये।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान, मसौदा समिति की क्रूरता से बचने के लिए मैं आपकी शरण चाहता हूं। मूलाधिकारों को हमने बहुत दृढ़ संकल्प होकर पारित किया था—मैं वकील नहीं हूं पर साधारण व्यक्ति होने के कारण इतनी समितियों में विचार होने के पश्चात् और इस सभा में गम्भीर विचार करने के पश्चात् जो मूलाधिकार हमको दिये गये थे उनको मैं समझता हूं। पिछले दो या तीन दिनों में ऐसा क्या हुआ है जिसके कारण हम मसौदा समिति की क्रूरता से पीड़ित हैं? 15 तारीख को हमें इन्हीं दो सज्जनों डॉ. अम्बेडकर तथा श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के अनुच्छेद 13 पर संशोधन प्राप्त हुए और आज श्री कृष्णमाचारी ने एक दूसरा संशोधन पेश किया है। गत रात्रि को हमें यह वर्तमान संशोधन मिला जिस पर यह सभा विचार कर रही है। मूलाधिकारों को यकायक नहीं बदला जा सकता है। यदि और अधिक संशोधनों पर विचार करने के लिए आज का दिन ही सभा का अंतिम दिन न था तो संविधान में किसी परिवर्तन के लिए अनुच्छेद 304 लागू किया जा सकता था; संविधान के किसी परिवर्तन के लिए उसमें कहा गया है:

> "संसद के किसी सदन में तदर्थ विधेयक पुर:स्थापित करके संविधान के संशोधन का सूत्रपात किया जा सकेगा, और जब प्रत्येक सदन में उस सदन की समस्त

> सदस्य संख्या के बहुमत से तथा उस सदन में उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो-तिहाई बहुमत से इत्यादि इत्यादि।"

जब डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं सभापति के रूप में इतने दृढ़ संकल्प होकर भाग 16 में 'संविधान के संशोधन' की व्यवस्था की है तो फिर रातों-रात यह परिवर्तन कैसे हो जाते हैं।

मैं उनमें से नहीं हूं जो न्यायाधीशों के प्रति उच्च धारणा रखते हैं, विशेषकर जबकि उन्हें अंग्रेजी परम्परा के अधीन शिक्षा मिली है और उन्होंने न्याय का दुरुपयोग किया है और हमारा दमन किया है। किसी भी सार्वजनिक भाषण के सम्बन्ध में मैंने यह नहीं पढ़ा है कि भारत के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों अथवा अन्य न्यायालय के न्यायाधीशों या दंडाधिकारियों में अगस्त 1947 से परिवर्तन हो गया है और वे अपने कृत्यों और कर्तव्यों को पहले से अच्छे रूप में समझ गये हों। अवकाश प्राप्त करने के दस वर्ष पश्चात् यदि डॉ. अम्बेडकर न्यायालयों की धांधलियों पर तथा न्यायालय-अवमान के बारे में पुस्तक लिखें तो वे यह देखेंगे कि इन दंडाधिकारियों और न्यायाधीशों को कुछ अधिक शक्तियां देने का उनका यह यकायक किया गया पक्षपात आवश्यक नहीं था। वह एक बहुत ही आश्चर्यजनक पुस्तक होगी क्योंकि बहुत से कंगाल वकील न्यायाधीश हुए और उन्होंने विदेशी राज के कारबार तथा शासन को न्यायालय-अवमान शब्द के द्वारा विनियमित तथा नियंत्रित किया और डरपोक वकील उनसे डर के मारे कांपते थे।

***अध्यक्षः** जहां तक उच्च न्यायालयों का संबंध है इस देश के सब पक्ष तथा व्यक्ति उनकी प्रशंसा करते रहे और उनकी इस प्रकार निन्दा करने से कोई लाभ नहीं। कोई एकाध ऐसा न्यायाधीश होगा जिसने भूल की हो, पर समूची न्यायपालिका की हमें निन्दा नहीं करनी चाहिये।

***श्री बी. दासः** श्रीमान्, मैं आपके आदेश को शिरोधार्य करता हूं। मैं चाहता हूं कि मेरा मन साफ होता और भारत के न्यायाधीशों की उनके महान पद तथा उनके उचित रूप से कर्तव्य पालन के लिए मैं उनका सम्मान करता। फिर भी मैं आपकी शरण लेता हूं। यदि मैं अपने व्यक्तिगत विचार का पालन कर सकूं तो सत्र के इस अंतिम समय में मूलाधिकारों के अनुच्छेदों में किसी प्रकार के भी परिवर्तन का विरोध करूंगा जब कि हम सभा समाप्त करने जा रहे हैं और शीघ्र ही संविधान के तृतीय पठन को ले रहे होंगे। मूलाधिकारों के परिवर्तन के विषय में हमारी भावनायें पवित्र होनी चाहियें। यदि यह ऐसी ही त्रुटि थी तो फिर इस माह की 15वीं तारीख को वह क्यों नहीं बताई गई? वह कल ही मालूम हुई। डॉ. अम्बेडकर को इस शताब्दी का मनु कहा गया है। क्या मनु रातों रात परिवर्तन कर देते हैं? ऐसी दशा में से हर एक मनु है न कि केवल डॉ. अम्बेडकर। मैं समझता हूं कि यदि अनुच्छेद 13 में यह संशोधन न किया जाये तो कोई हानि नहीं होगी। संसद को समवेत होने दीजिये और डॉ. अम्बेडकर को स्वयं एक विधेयक प्रस्तुत करने दीजिये और हम उसके गुणावगुण के आधार पर उसकी परीक्षा करेंगे। परन्तु मूलाधिकारों में परिवर्तन क्यों? यह मेरा निवेदन है और श्रीमान मैं आशा करता हूं कि हमारे अध्यक्ष के रूप में आप मूलाधिकारों पर संशोधन जैसे विषय पर आदेश देंगे।

***श्री कृष्णचन्द्र शर्मा** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, न्यायाधीशों की प्रतिष्ठा तथा सम्मान से मुझे ईर्ष्या है। मेरी यह धारणा है कि लोकतंत्र में न्यायाधीशों का सम्मान जनता के सब वर्गों द्वारा होना चाहिये और इन व्यक्तियों तथा इनके कृत्यों की प्रतिष्ठा होनी चहिये। पर एक बात जिस पर मैं आपत्ति करता हूं वह यह है कि न्यायालय-अवमान की यह प्रविष्टि अनावश्यक है क्योंकि उस अनुच्छेद में "वर्तमान विधि" शब्द हैं और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 480 में एक उपबंध है जो कार्यवाई के समय न्यायालय-अवमान के संबंध में है जबकि स्वयं न्यायालय को अवमान करने वाले व्यक्ति को दंड देने की शक्ति है। एक और न्यायालय-अवमान संबंधी अधिनियम है जो कहीं के किसी भी न्यायालय-अवमान पर कार्यवाई करने की शक्ति उच्च न्यायालय को देता है। अत: वर्तमान उपबंधों को ध्यान में रखते हुए और अधिक रक्षा की आवश्यकता नहीं है और मैं समझता हूं कि परिस्थिति को संभालने के लिए ये उपबंध काफी हैं। अत: यह प्रविष्टि अनावश्यक तथा अवांछनीय है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** श्रीमान मैं नहीं समझता हूं कि अन्तिम वक्ता का तर्क सही है क्योंकि अनुच्छेद 13 वर्तमान विधि में रूपभेद करेगा। इस कारण न्यायालय-अवमान का उपबन्ध आवश्यक है पर मेरी कठिनाई यह है कि अनुच्छेद 13 (2) के अधीन प्रत्येक राज्य के विधान मंडल को न्यायालय-अवमान संबंधी विधि अधिनियमित करने की शक्ति दी गई है। यदि कई विधान मंडल न्यायालय-अवमान संबंधी कई भिन्न-भिन्न विधियां बनाते हैं तो मैं समझता हूं स्थिति और विशेषकर समाचार पत्रों की स्थिति बड़ी कठिन हो जायेगी।

उदाहरणार्थ यदि मद्रास का विधान-मंडल न्यायालय-अवमान संबंधी कोई विधि बनाता है तो वास्तव में वह विधि क्षेत्राधिकार के अनुसार मद्रास में प्रकाशित पत्रों पर ही लागू होगी। परन्तु वह विधि उन सब पत्रों पर लागू नहीं होगी जो भारत के किसी अन्य स्थान से आते हैं और जिनका मद्रास में प्रचार है और यह सब प्रान्तों में होगा। जहां तक मानहानि, अपमान-वचन इत्यादि का संबंध है ये अभियोज्य अपराध हैं जिनको समवर्ती सूची में रखा गया है। जब कोई गड़बड़ होती है तो संसद आड़े आ जाती है और एकरूपता कर देती है। परन्तु न्यायालय अवमान के संबंध में मैं नहीं समझता हूं कि एकरूपता करने का अधिकार संसद को है। अत: यदि वे इसे अनुच्छेद 13 में रखना चाहते हैं तो समवर्ती सूची में एक पृथक् मद होना चाहिये जिससे कि किसी भी समय संसद दखल दे सके और विधि में कुछ एकरूपता कर सके। अन्यथा, मेरा यह सुझाव है कि अनुच्छेद 13 के खंड (2) में "न्यायालय-अवमान" की यह प्रविष्टि का परिणाम न्यायालय-अवमान की भिन्न-भिन्न विधियों के रूप में निकलेगा और इससे समस्त देश में गड़बड़ी होगी। मैं यह सुझाव रखता हूं कि न्यायालय-अवमान के लिए विधि बनाने को या यह देखने को, कि न्यायालय-अवमान संबंधी विधि में कुछ न कुछ एकरूपता हो, संसद के लिए कम से कम शक्ति रक्षित करने का उपक्रम करना चाहिये। यदि "न्यायालय-अवमान" शब्द अनुच्छेद 13 के खंड (2) में प्रविष्ट किये जाते हैं तो उसे समवर्ती सूची में रखा जाये।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर, क्या आप उत्तर देना चाहेंगे?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, यह अनुच्छेद अनुच्छेद 8 के साथ-साथ पढ़ा जायेगा।

अनुच्छेद 8 में कहा गया है:

> "इस संविधान के प्रारम्भ होने से ठीक पहले भारत के राज्य-क्षेत्र में प्रवृत्त सब विधियां, उस मात्रा तक शून्य होंगी, जिस तक कि वे इस भाग के उपबंधों से असंगत हैं।"

और इस अनुच्छेद में जो कुछ कहा गया है वह यह है कि अपमान-लेख, अपमान-वचन, मानहानि अथवा शिष्टाचार या सदाचार पर आघात करने वाले, अथवा राज्य की सुरक्षा को दुर्बल करने वाले, किसी विषय पर अनुच्छेद 8 का प्रभाव नहीं पड़ेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि वे विधियां प्रवृत्त रहेंगी। यदि "न्यायालय-अवमान" शब्द वहां न होते तो न्यायालय-अवमान संबंधी किसी विधि पर अनुच्छेद 8 लागू होता और वह निराकृत हो जाता। इस प्रकार की स्थिति से बचने के लिए "न्यायालय-अवमान" शब्दों को रखा जा रहा है, अतः इस संशोधन को स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं है।

मेरे मित्र श्री सन्तानम द्वारा उठाये गये प्रश्न के प्रति यह बात बिल्कुल सत्य है कि जहां तक मूलाधिकारों का संबंध है "राज्य" शब्द का प्रयोग दो अर्थों में हुआ है केन्द्र के अर्थ में तथा प्रान्तों के भी अर्थ में। पर मैं समझता हूं कि उनको इस बात का ध्यान होगा कि इस तथ्य के होते हुए भी राज्य कोई विधि बना सकता है तथा केन्द्र भी कोई विधि बना सकता है।

कुछ शीर्षक जिनका यहां वर्णन है, जैसे कि अपमान-लेख, अपमान-वचन, मानहानि, राज्य की सुरक्षा इत्यादि, समवर्ती सूची में दिये हुए हैं अतः यदि इन विषयों के संबंध में निर्मित विधियों में कोई बड़ा भरी अन्तर है तो केन्द्र को हस्तक्षेप करने तथा ऐसी एकरूपता करने का अधिकार होगा जैसी केन्द्र इस प्रयोजन के लिए उचित समझे

***माननीय श्री के. सन्तानमः** परन्तु न्यायालय अवमान समवर्ती सूची अथवा अन्य किसी सूची में सम्मिलित नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** वह तो सम्मिलित किया जा सकता है।

***अध्यक्षः** मैं इन दो संशोधनों पर मत लूंगा। वास्तव में पंडित ठाकुर दास भार्गव का संशोधन श्री कृष्णामाचारी के संशोधन पर संशोधन नहीं है। वह पूर्णतया स्वाधीन रूप का संशोधन है। मैं उनको अलग-अलग रखूंगा। सर्वप्रथम में श्री कृष्णमाचारी के संशोधन पर मत लूंगा।

[अध्यक्ष]

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 13 के खंड (2) में 'defamation' शब्दों के पश्चात् 'Contempt of Court' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** इसके बाद मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव के संशोधन पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 415 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

"कि 'any law' शब्दों के स्थान में 'any reasonable law' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् हम नया अनुच्छेद 302 ककक को लेते हैं अर्थात् संशोधन संख्या 450। श्री सन्तानम ने एक सुझाव दिया है कि जो संशोधन अभी पारित किया गया है उसे पूर्ण रूप देने के लिए "न्यायालय-अवमान" को समवर्ती सूची में सम्मिलित कर देना चाहिये। और मैं समझता हूं कि यह आनुषंगिक बात है और अच्छा हो हम इसे ले लें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं एक संशोधन पेश करूंगा: श्रीमान् मैं पेश करता हूं:

"कि समवर्ती सूची में प्रविष्टि 15 के पश्चात् निम्नलिखित जोड़ दिया जाये: '15A. Contempt of Court.'

(15क. न्यायालय-अवमान।)"

***अध्यक्ष:** मैं नहीं समझता हूं कि इस पर कोई आपत्ति हो सकती है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** ऐसी बहुत-सी बातें होंगी।

***अध्यक्ष:** हो सकती है, पर वे समय पर प्रस्तुत होंगी। अत: मैं इस पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि समवर्ती सूची में प्रविष्टि 15 के पश्चात् निम्नलिखित जोड़ दिया जाये '15-A. Contempt of Court.'

(15 क. न्यायालय-अवमान।)"

संशोधन स्वीकार किया गया।

प्रविष्टि 15क संविधान में प्रविष्ट की गई।

नया अनुच्छेद 302 ककक

***अध्यक्षः** इसके पश्चात् हम संशोधन संख्या 450 लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 302 कक के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

Special provisions as to major ports and aerodromes.

'302AAA. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution, the President may by public notification direct that as from such date as may be specified in the notification—

(a) any law made by Parliament or by the Legislature of a State shall not apply to any major port or aerodrome or shall apply thereto subject to such exceptions or modifications as may be a specified in the notification, or

(b) any existing law shall cease to have effect in any major port or aerodrome except as respects things done or omitted to be done before the said date, or shall in its application to such port or aerodrome have effect subject to such exceptions or modifications as may be specified in the notification.

(2) In this article—

(a) 'major port' means a port declared to be a major port by or under any law made by Parliament or any existing law and includes all areas for the time being included within the limits of such port;

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

(b) 'aerodrome' means aerodrome as defined for the purposes of the enactments relating to airways, aircraft and air navigation.'

[302ककक (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति लोक-अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि ऐसी तारीख से लेकर जैसी कि अधिसूचना में उल्लिखित हो–

महापत्तनों और विमान क्षेत्रों के लिए विशेष उपबन्ध।

(क) संसद या राज्य के विधान-मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि किसी महापत्तन या विमान-क्षेत्र को लागू न होगी अथवा ऐसे अपवादों या रूपभेदों के अधीन रह कर जैसे कि लोक-अधिसूचना में उल्लिखित हों, लागू होगी; अथवा

(ख) कोई वर्ममान विधि किसी महापत्तन या विमान-क्षेत्र में उक्त तारीख से पहले की हुई या किये जाने से छोड़ दी गई बातों के संबंध से अतिरिक्त अन्य बातों के लिए प्रभावी न होगी, अथवा ऐसे पत्तन या विमान-क्षेत्र में ऐसे अपवादों या रूपभेदों के अधीन रहकर, जैसे कि लोक-अधिसूचना में उल्लिखित हों, प्रभावी होगी।

(2) इस अनुच्छेद में-

(क) "महापत्तन" से अभिप्रेत है कोई पत्तन जो संसद द्वारा निर्मित किसी विधि या किसी वर्तमान विधि के द्वारा या अधीन महापत्तन घोषित किया गया है तथा उसके अंतर्गत वे सब क्षेत्र हैं जो तत्समय ऐसे पत्तन की सीमाओं के अन्तर्गत हैं;

(ख) "विमान-क्षेत्र" से अभिप्रेत है वायु-पथों, विमानों और विमान-परिवहन से संबंद्ध अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिए परिभाषित विमान-क्षेत्र।]"

श्रीमान इस अनुच्छेद को पेश करने का कारण यह है कि तत्कथित अन्तर्राष्ट्रीय विमान-क्षेत्रों के संबंध में कुछ कठिनाइयों का अनुभव किया गया है—वे कठिनाइयां उन यात्रियों—परराष्ट्र व्यक्तियों के आवागमन में व्यवस्था करने के प्रयत्न के कारण उत्पन्न होती हैं जो वहां आते हैं पर जो सामान्यतया उस समय उस प्रांत की विशेष विधियों के क्षेत्र के अंतर्गत नहीं आते हैं। जिनमें वे विमान-क्षेत्र स्थित हैं। मैं समझता हूं कि विचार यह है कि बम्बई के सान्ताक्रूज विमान-क्षेत्र तथा कलकत्ते के डमडम विमान क्षेत्र को अब अन्तर्राष्ट्रीय विमान-क्षेत्र समझा जायेगा। यह भी हो सकता है कि शीघ्र ही अन्य विमान-क्षेत्र भी इसी श्रेणी में आ जायें। मान लीजिये किसी प्रांत में मद्य के संबंध में पूर्ण प्रतिषेध विधि प्रवृत है तो जिस समय वह व्यक्ति जहाज पर से उतरता है और यदि उसके पास कुछ मद्य है तो वह उस प्रान्त की विधि के क्षेत्र के अंतर्गत आ जाता हैं जबकि उचित केवल यह है कि उसे उस राज्य की विधि के क्षेत्रान्तर्गत तब आना चाहिये जबकि वह विमान-क्षेत्र के बाहर जाकर राज्य-क्षेत्र में प्रवेश करे। और फिर कुछ विशिष्ट प्रतिभूति विनिमय

है जो विमान-क्षेत्रों में आवश्यक हो सकते हैं पर जो उस राज्य में प्रचलित प्रतिभूति-विनियमों की योजना के अनुकूल न हों। उदाहरणार्थ सैनिक विमान-क्षेत्रों में प्रतिभूति-विनियम बड़े कठोर होते हैं क्योंकि समूचा विमान-क्षेत्र सैनिक नियंत्रण के अधीन रहता है। असैनिक विमान-क्षेत्रों में स्थिति कुछ भिन्न होती है। जहां तक प्रतिभूति संबंधी प्रबन्धों तथा अन्य ऐसे ही विषयों का संबंध है केन्द्रीय सरकार को, जो असैनिक विमान-क्षेत्रों पर नियंत्रण रखती है, अधिकतर स्थानीय विधियों पर निर्भर करना पड़ता है और केवल निवारक कर्मचारी वृन्द को ही रखना आवश्यक नहीं है जिसके रखने की शक्ति अर्थसंबंधी विधान के द्वारा केन्द्रीय सरकार को है वरन् अंतर्राष्ट्रीय यातायात से तथा उनसे जो हस्तक्षेप करते हैं सुलझने के लिए विशेष शक्तियों युक्त विशेष आरक्षी भी रखनी पड़ती है।

महापत्तनों को भी यही आकस्मिकता लागू होगी विशेषकर नये पत्तनों को जो उन क्षेत्रों में स्थापित किये जायेंगे जिनको पहले देशी रियासतें कहा जाता था। इन पत्तनों के विषय में कुछ कठिनाइयां अनुभव की जा चुकी हैं और संभव है भविष्य में कुछ और कठिनाइयां हों। यह केवल एक शक्तिप्रदायक उपबन्ध है जो राष्ट्रपति को जो कठिनाइयां उत्पन्न होंगी उनको दूर करने की परिमित शक्तियां देता है और जिसके कारण प्रांतों को किसी विमान-क्षेत्र या पत्तन संबंधी विशेष परिस्थितियों के अनुकूल अपनी विधियों में परिवर्तन करना आवश्यक नहीं होगा। इस तथ्य के होते हुए भी कि राज्य में कोई महापत्तन या विमान क्षेत्र है यह प्रांतों को विधि बनाने में सहायता देगा और इसके द्वारा केन्द्र यदि चाहता है तो प्रांत में वर्तमान विधियों के अतिरिक्त विधियां पार कर या उस स्थिति की विशेष परिस्थितियों के अनुकूल उन विधियों में रूप भेद कर वह उन क्षेत्रों पर नियंत्रण करने की सहायता प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार के अनुच्छेद की उपयोगिता के विरुद्ध उदाहरण दिये जा सकते हैं पर उनकी मान्यता परिमित है। भविष्य में भिन्न प्रकार के उदाहरण पैदा होने की संभावना है। मैं फिर दुहराता हूं कि यह एक शक्तिप्रदायक उपबन्ध है जो प्रांतों की शक्तियों में किसी प्रकार का भी हस्तक्षेप नहीं करता है। महापत्तन तथा विमान क्षेत्र निर्विवाद रूप से केन्द्रीय नियंत्रण के अधीन है और राष्ट्रपति द्वारा की गई कार्यवाही के द्वारा केन्द्र को अतिरिक्त विधायी नियंत्रण रखने की भी शक्ति है।

इस अनुच्छेद का प्रयोजन साधारण-सा है और मुझसे यह कहा गया है कि अंतर्राष्ट्रीय यातायात संबंधी विमान क्षेत्र और महापत्तनों के प्रशासन के संबंध में यह बहुत आवश्यक है। मैं आशा करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करेगी।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** क्या सप्तम अनुसूची में कोई परिवर्तन करना आवश्यक नहीं होगा?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** जी नहीं, महापत्तन और विमान क्षेत्र केन्द्रीय विषय हैं।

***अध्यक्षः** प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना ने एक संशोधन की सूचना दी है। वे अपनी जगह पर नहीं हैं और इस कारण वह पेश नहीं किया जाता है।

***श्री आर.के. सिधवाः** श्रीमान मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि यह अनुच्छेद साधारण-सा क्यों कहा गया है और यह क्यों कहा गया है कि इसके द्वारा केवल आनुषंगिक परिवर्तन करने का प्रयास किया गया है।

***अध्यक्षः** यह नहीं कहा गया था कि यह आनुषंगिक परिवर्तन है।

***श्री आर.के सिधवाः** प्रस्तावक महोदय ने कहा था कि यह एक साधारण-सा अनुच्छेद है और इसका संबंध अन्तर्राष्ट्रीय यातायात से है और यह सभा द्वारा स्वीकृत हो जाना चाहिये।

श्रीमान, प्रस्तावना में यह नहीं कहा गया है कि राष्ट्रपति को असाधारण शक्तियां क्यों दी जायें और उस विधि के अतिक्रमण करने की शक्ति क्यों दी जाये जिसे विमान क्षेत्र तथा महापत्तन के संबंध में संसद बनायेगी। वे विषय संघ सूची में आते हैं। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि खंड (क) में यह उपबन्ध क्यों किया गया है कि "संसद द्वारा या राज्य के विधान मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि"। मैं नहीं समझता हूं कि महापत्तनों तथा विमान क्षेत्रों के संबंध में विधि बनाने की शक्ति किसी राज्य को है।

श्रीमान यदि यह अनुच्छेद युद्ध अथवा ऐसे ही अन्य आपातों के लिए हो तब तो मैं इसे समझ सकता हूं। विगत दो महायुद्धों में जनता का महापत्तनों तथा विमान क्षेत्र में प्रवेश प्रतिषिद्ध है और उनके यातायात पर अनेक निर्बन्धन लगा दिये गये हैं। इन बातों को मैं समझ सकता हूं। पर मैं यह नहीं समझ पाता कि जब संसद सामान्य रूप से विधि निर्मित करती है तो उन विधियों का राष्ट्रपति द्वारा अतिक्रमण क्यों हो। राष्ट्रपति को ऐसा करने के लिए शक्तियां देने के कारण क्या हैं? इस संबंध में कुछ भी नहीं कहा गया है। आज अन्तर्राष्ट्रीय विमान पत्तनों में यदि कोई यात्री विदेश से आता है तो उसकी तलाशी होती है। उसका सामान और यहां तक कि स्वयं उसकी तलाशी ली जाती है। इस प्रयोजन के लिए चुंगी में दोनों पुरुष और स्त्री निरीक्षक होते हैं। ये सब निर्बन्धन अब भी हैं और इस कारण मैं नहीं समझता हूं कि राष्ट्रपति को यह शक्ति देने की कोई आवश्यकता है। जैसाकि मैं कह चुका हूं इस शक्ति की आवश्यकता को आपात में मैं मान सकता हूं। परन्तु जबकि संसद द्वारा निर्मित विधियां इस प्रयोजन के लिए सामान्यतया हैं तो इन विधियों के अतिक्रमण करने की शक्ति राष्ट्रपति को क्यों हो? मैं इस बात से सहमत हूं कि आपात में स्थिति भिन्न हो जायेगी। मुझे इसका व्यक्तिगत अनुभव है। पत्तनों पर उतरने चढ़ने वाले यात्रियों के संबंधियों का प्रवेश वहां नहीं होने दिया जाता है। ऐसे निर्बन्धन वहां आपात काल में होते हैं। राष्ट्रपति में यह शक्ति सौंपने की मैं कोई आवश्यकता नहीं देखता हूं। इसके स्थान में निम्नलिखित उपबन्ध का सुझाव दूंगा "इस संविधान में किसी बात के होते हुये भी राष्ट्रपति लोक अधिसूचना द्वारा यह निदेश देगा कि उस तिथि से जो उल्लिखित होगी आपात या युद्ध होने पर कोई विधि निर्मित की जा सकेगी।" यदि ये पंक्तियां जोड़ दी जायें तो इस अनुच्छेद का भिन्न अर्थ हो जायगा और वह आवश्यक हो सकता है। अन्यथा इसका यह आशय होगा कि आप संसद को विधि निर्माण करने की शक्ति से वंचित करना चाहते हैं। मैं इस बात का स्पष्टीकरण चाहता हूं कि "राज्य का विधान मंडल" शब्द क्यों रखे गये हैं। क्या किसी राज्य को विमान क्षेत्र संबंधी विधि बनाने की शक्ति है?

***माननीय डॉ. बी.आर अम्बेडकरः** श्रीमान् मैं समझता हूं कि मेरे मित्र श्री सिधवा ने स्थिति को बिल्कुल गलत समझा है। यदि वे अनुसूची सात सूची 2 के मद 30 और 35 को देखेंगे, जो उस विषय से संबंध रखते हैं जो मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा पेश किये संशोधन के अंतर्गत आता है तो उनको विदित होगा कि मद 30 और 35 के अधीन विधान बनाने की शक्ति जो केन्द्र को दी गई है वह बहुत ही परिमित रूप की है। मद 30 के अधीन दी गई शक्ति विमान यातायात के विनियमन तथा संगठन के प्रयोजन के लिए है। मद 35 के अधीन दी गई शक्ति विधान के परिसीमन के तथा पत्तन प्राधिकारियों की शक्ति के प्रयोजन के लिए है। उनको तुरन्त यह विदित हो जायेगा कि जहां तक विमान क्षेत्रों या विमान-पत्तनों तथा पत्तनों द्वारा घेरे गये राज्य क्षेत्र का संबंध है वह प्रांत के राज्य क्षेत्र का भाग है अतः राज्य द्वारा निर्मित कोई विधि विमान-क्षेत्र या पत्तन द्वारा घेरे गये क्षेत्र पर प्रयोज्य है। ये 30 और 35 प्रविष्टियां केन्द्र को उन सब विषयों के लिये विधान बनाने की शक्ति नहीं देती है जो इन प्रविष्टियों के अधीन केन्द्रीय सरकार के क्षेत्र के अंतर्गत हैं। ये शक्तियों परिमित हैं। अतः इस अनुच्छेद के अधीन प्रस्थापना यह है: यद्यपि विमान क्षेत्रों द्वारा तथा पत्तनों द्वारा घेरे गये क्षेत्रों को वह प्रांतों के क्षेत्र के भाग के रूप में रहने देता है–वह उनको अपवर्जित नहीं करता है—पर वह सूची 2 में दिये गये किसी मद के अधीन विधि बनाने की राज्य की शक्ति को बनी रहने देता है और ये विधियां विमान-क्षेत्रों तथा पत्तनों द्वारा घेरे गये क्षेत्रों पर प्रयोज्य होंगी। संशोधन में जो कुछ कहा गया है वह यह है कि यदि केन्द्रीय सरकार समझती है कि किसी विशेष कारणवश, जैसेकि स्वच्छता, निरोध इत्यादि, उस राज्य द्वारा कोई विधि बनाई जाती है जिसके अधिकार क्षेत्र में वह विमान-क्षेत्र तथा पत्तन स्थित है तो राष्ट्रपति को यह कहने का अधिकार होगा कि उस राज्य की वह विशेष विधि उस अथवा किसी अन्य अधिसूचना के अधीन विमान क्षेत्रों या पत्तनों को लागू होगी। जहां तक विमान क्षेत्रों और पत्तनों का संबंध है इससे अधिक केन्द्र की ओर से सूची 2 में दी हुई प्रविष्टियों के संबंध में राज्य की विधि बनाने की शक्तियों पर कोई आक्रमण नहीं होगा। मैं आशा करता हूं कि मेरे मित्र श्री सिधवा अब अपना विरोध वापस ले लेंगे।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधन संख्या 450 पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 302 कक के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

Special provisions as to major ports and aerodromes.

'302AAA. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution, the President may by public notification direct that as from such date as may be specified in the notification—

(a) any law made by Parliament or by the Legislature of a State shall not apply to any major port or aerodrome or shall apply thereto subject to such exceptions or

[अध्यक्ष]

modifications as may be specified in the notification, or

(b) any existing law shall cease to have effect in any major port or aerodrome except as respects things done or omitted to be done before the said date, or shall in its application to such port or aerodrome have effect subject to such exceptions or modifications as may be specified in the notification.

(2) In this article—

(a) 'major port' means a port declared to be a major port by or under any law made by Parliament or any existing law and includes all areas for the time being included within the limits of such port;

(b) 'aerodrome' means aerodrome as defined for the purposes of the enactments relating to airways, aircraft and air navigation.'

[302कककक. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति लोक अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि ऐसी तारीख से लेकर जैसी कि अधिसूचना में उल्लिखित हो–

महापत्तनों और विमान क्षेत्रों के लिए विशेष उपबन्ध।

(क) संसद या राज्य के विधान-मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि किसी महापत्तन या विमान-क्षेत्र को लागू न होगी अथवा ऐसे अपवादों या रूप भेदों के अधीन रहकर, जैसे कि लोक-अधिसूचना में उल्लिखित हों, लागू होगी, अथवा

(ख) कोई वर्तमान विधि किसी महापत्तन या विमान-क्षेत्र में उक्त तारीख से पहले की हुई या किये जाने से छोड़ दी गई बातों के संबंध से अतिरिक्त अन्य बातों के लिए प्रभावी न होगी, अथवा ऐसे पत्तन या विमान-क्षेत्र में ऐसे अपवादों या रूप भेदों के अधीन रहकर, जैसे कि लोक-अधिसूचना में उल्लिखित हों, प्रभावी होगी।

(2) इस अनुच्छेद में–

(क) "महापत्तन" से अभिप्रेत है कोई पत्तन जो संसद द्वारा निर्मित किसी विधि या किसी वर्तमान विधि के द्वारा या अधीन महापत्तन घोषित किया गया है तथा उसके अंतर्गत

वे सब क्षेत्र हैं जो तत्समय ऐसे पत्तन की सीमाओं के अंतर्गत हैं;

(ख) "विमान-क्षेत्र" से अभिप्रेत है वायु-पथों, विमानों और विमान-परिवहन से संबद्ध अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिए परिभाषित विमान-क्षेत्र।]"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 302 ककक संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् हम अगले मद अनुच्छेद 306 क पर आते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि हम अगले मद को इस समय छोड़ दें ओर अनुसूची 3 क को ले लें।

***अध्यक्ष:** हां, हम उसे ले सकते हैं।

अनुसूची 3क

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय:

"कि अनुसूची 3 के पश्चात् यह अनुसूची प्रविष्ट की जाये:

'SCHEDULE III-A

[ARTICLES 4(1) & 67(1A)]

ALLOCATION OF SEATS IN THE COUNCIL OF STATES

To each State or States specified in the first column of the table of seats appended to this Schedule there shall be allotted the number of seats specified in the second column of the said table opposite to that State or States, as the case may be.

TABLE OF SEATS

THE COUNCIL OF STATES

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART I OF THE FIRST SCHEDULE

	States	Total Seats
	1	2
1.	Assam	6
2.	Bengal	14

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

1	2
3. Bihar	21
4. Bombay	17
5. Koshal-Vidarbh	12
6. Madras	27
7. Orissa	9
8. Punjab	8
9. United Provinces	30
Total	144

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART II OF THE FIRST SCHEDULE

States and Groups of States	Total Seats
1. Ajmer 2. Coorg	1
3. Bhopal	1
4. Bilaspur 5. Himachal Pradesh	1
6. Cooch-Behar	1
7. Delhi	1
8. Kutch	1
9. Manipur 10. Tripura	1
11. Rampur	1
Total	8

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART III OF THE FIRST SCHEDULE

States 1	Total Seats 2
1. Hyderabad	11
2. Jammu and Kashmir	4
3. Madhya Bharat	6

1		2
4.	Mysore	6
5.	Patiala and East Punjab States Union	3
6.	Rajasthan	9
7.	Saurashtra	4
8.	Travancore-Cochin	6
9.	Vindhya Pradesh	4
	Total	53
	Total of all Seats	205' "

[अनुसूची 3क

[अनुच्छेद् 4 (1) और 67 (1क)]

राज्य-परिषद में के स्थानों का बंटवारा

इस अनुसूची से संलग्न स्थान-सारिणी के प्रथम स्तम्भ में उल्लिखित प्रत्येक राज्य या राज्यों को यथास्थिति उतने स्थान बांट में दिये जायेंगे जितने कि उक्त सारिणी के दूसरे स्तम्भ में उस राज्य या राज्यों के सामने उल्लिखित हैं।

स्थान-सारिणी

राज्य-परिषद्

प्रथम अनुसूची के भाग (1) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य	कुल स्थान
	1	2
1.	आसाम	6
2.	उड़ीसा	9
3.	पंजाब	8
4.	बंगाल	14
5.	बिहार	21
6.	मद्रास	27
7.	कौशल-विदर्भ	12
8.	मुम्बई	17
9.	युक्त प्रदेश	30
	कुल	144

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

प्रथम अनुसूची के भाग (2) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य और राज्य समूह	कुल स्थान
1.	अजमेर	1
2.	कोड़गु	
3.	कच्छ	1
4.	कोच-बिहार	1
5.	दिल्ली	1
6.	बिलासपुर	1
7.	हिमाचल प्रदेश	
8.	भोपाल	1
9.	मनीपुर	1
10.	त्रिपुरा	
11.	रामपुर	1
	कुल	8

प्रथम अनुसूची के भाग (3) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य	कुल स्थान
1.	जम्मू और कश्मीर	4
2.	तिरुवांकुर-कोचीन	6
3.	पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य	3
4.	मध्य भारत	6
5.	मैसूर	6
6.	राजस्थान	9
7.	विन्ध्य प्रदेश	4
8.	सौराष्ट्र	4
9.	हैदराबाद	11
	कुल	53
	कुल स्थानों का जोड़	205]”

श्रीमान्, ये तीन सारिणियां हैं, एक उन राज्यों के संबंध में है जो भाग 1 में उल्लिखित है, दूसरी भाग 2 में उल्लिखित राज्यों के संबंध में है और तीसरी भाग 3 में उल्लिखित राज्यों के संबंध में है और बांट में दिये जाने वाले स्थानों की कुल संख्या 205 होती है। श्रीमान, संविधान में तत्संबंधी अनुच्छेद 67

खंड (1), (2), (3) और (4) हैं और माननीय सदस्यों ने यह देखा होगा कि खंड (1) के अधीन अधिकतम संख्या 250 नियत की गई है जिनमें बारह सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत होंगे और शेष राज्यों के प्रतिनिधि होंगे इन सारिणियों की योजना का आधार संघ संविधान समिति का पहली दिसम्बर सन् 1948 की बैठक का विनिश्चय है जिसमें इस सभा के निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे:

माननीय श्री जवाहर लाल नेहरू,

माननीय श्री जगजीवन राम,

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर,

श्री के.एम. मुंशी,

प्रो. के.टी. शाह,

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी, और

श्री बी.एच. जैदी।

यदि मुझे अनुमति दी जाये तो मैं इस समिति के प्रतिवेदन के सुसंगत भाग को पढ़कर सुनाऊंगा।

"कार्यालय द्वारा तैयार की गई राज्य-परिषद् में स्थानों के बंटवारे की पुनरीक्षित योजना के विवरण को इस समिति ने नहीं लिया क्योंकि भिन्न-भिन्न प्रकार के विलयन के कारण देशी राज्यों की स्थिति अभी अनिश्चित है। उसका यह विचार है कि स्थानों के विवरण पूर्ण बंटवारे पर किसी बाद की तिथि तक विचार स्थगित कर दिया जाये। अपने पहले विनिश्चय को दुहराते हुए कि राज्य-परिषद में एककों का प्रतिनिधान प्रत्येक दस लाख जनसंख्या से लेकर पचास लाख जनसंख्या तक एक प्रतिनिधि के हिसाब से और उसके पश्चात् प्रत्येक बीस लाख जनसंख्या पर एक और प्रतिनिधि के हिसाब से होगा, समिति ने एक और विनिश्चय को मानना आवश्यक समझा कि किसी एक एकक से प्रतिनिधियों की अधिकतम संख्या 25 तक परिमित होगी। यह देखा गया कि केवल दो राज्य मद्रास और संयुक्त प्रांत पर ऐसे परिसीमन के आरोपण का प्रभाव पड़ेगा और एकरूपता लाते हुए इस परिसीमा के निराकरण से स्थानों की समस्त संख्या में सात स्थानों की वृद्धि होगी जो उस समस्त 250 सदस्यों की अधिकतम संख्या के अंतर्गत होगी जो संविधान के मसौदे के अनुच्छेद 67(1) में उपबंधित है।"

श्रीमान्, संघ संविधान समिति के इस प्रतिवेदन के आधार पर प्रत्येक दस लाख से पचास लाख जनसंख्या तक एक स्थान और प्रत्येक बीस लाख की और अधिक जनसंख्या पर एक और स्थान के हिसाब से स्थान बांटे जाने चाहियें और इसका कुल जोड़ लगा लिया गया है और जैसा कि माननीय सदस्य देखेंगे कि कुल जोड़ 205 जिसमें 12 राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत और जोड़कर 217 हो जाता है। हमारे पास अभी अनुच्छेद 67(1) में उल्लिखित अधिकतम संख्या तक पहुंचने के लिए 33 स्थान शेष हैं।

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

मैं यह कहना चाहूंगा कि यह क्यों आवश्यक है क्योंकि हम कोई और योजना भी अभिस्वीकृत कर सकते थे चाहे वह संघ संविधान समिति की सिफारिशों के विरुद्ध होती। सभा के माननीय सदस्य यह समझ जायेंगे कि यह हो सकता है कि भाग 1 में के एककों में आगे और जोड़ तोड़ हो। यदि ऐसा होगा तो यह स्वाभाविक है कि संख्या में वृद्धि होगी क्योंकि एककों के प्रत्येक जोड़ तोड़ से कम से कम 5 सदस्य संख्या और बढ़ जायेगी। इस संविधान के अनुच्छेद 3 के अधीन भावी सरकारों द्वारा की गई कार्यवाही के आधार पर फिर बंटवारा करने से इस संख्या 217 को और भी अधिक बढ़ाना आवश्यक हो जायेगा इसलिए संघ संविधान समिति द्वारा बताई गई योजना के अनुसार यह उपबंध कर दिया गया है कि दस लाख से पचास लाख तक एक स्थान और इसके बाद प्रत्येक बीस लाख पर एक स्थान जो मैं समझता हूं कि एक बहुत ही उचित प्रबन्ध है और जहां तक भविष्य का संबंध है इसके कारण कार्य में स्वतंत्रता हो जायेगी। जहां तक इन संख्याओं का संबंध है मैं इनके सही होने का दावा नहीं करता हूं। यह भी हो सकता है कि व्यवस्था किसी दूसरी प्रकार से हो। उदाहरणार्थ भाग 2 में के राज्यों के पुनर्सामुहिककरण पर आपत्ति की जाये। यह सम्मति पर निर्भर करता है।

मैं समझता हूं कि यह योजना ठीक है पर यदि इस सभा के सदस्यों तथा बाहर की जनता को कोई आपत्ति है तो उन आपत्तियों की जांच की जायेगी और वे आपत्तियां आपके सामने रखी जायेंगी और यदि आप मुझे आज्ञा देंगे तो बाद में आवश्यक संशोधन पेश कर दिये जायेंगे, पर मैं नहीं समझता हूं कि अब से लेकर तृतीय पठन तक सभा के समक्ष रखे गये इस प्रबंध में किसी भी गंभीर परिवर्तन की आवश्यकता हो।

मैं एक और बात का जिक्र करना चाहूंगा कि इस संशोधन के करने से मुझे तीन आनुषंगिक संशोधन करने पड़ेंगे क्योंकि कुछ परिवर्तन हो गये हैं। एक बात यह है कि अनुच्छेद 67 (1क) अनुसूची 3ख के संबंध में है। इस अनुच्छेद के इस विशिष्ट उपखंड में एक संशोधन आवश्यक होगा। अनुच्छेद 4 में भी एक संशोधन आवश्यक होगा क्योंकि अनुच्छेद 4 पर विचार करते समय प्रथम अनुसूची के साथ हम राज्य-परिषद् में स्थान-सारिणी संबंधी अनुसूची का वर्णन करना भूल गये। अनुच्छेद 4 इस प्रकार है:

> "इस संविधान के अनुच्छेद 2 अथवा 3 में निर्दिष्ट किसी विधि में, प्रथम अनुसूची के संशोधनार्थ, ऐसे उपबंध होंगे, जो उस विधि के उपबंधों को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक हों, तथा ऐसे प्रासंगिक तथा आनुषंगिक उपबन्ध भी हो सकेंगे जैसे संसद आवश्यक समझे।"

प्रथम अनुसूची में कोई परिवर्तन अनुसूची 3 में परिवर्तन आवश्यक कर देगा। प्रथम अनुसूची और तृतीय अनुसूची को साथ-साथ लेना आवश्यक है। बाद में अनुसूची 3क को अनुच्छेद 4 में रखने का संशोधन पेश करूंगा। यदि वह संशोधन, जिसे मैंने अभी अनुसूची 3क को समाविष्ट करने के लिए पेश किया है जिसमें राज्य-परिषद् की स्थान-सारिणी दी हुई है, सभा द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो बाद में ये संशोधन पेश किये जायेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं यह नहीं जानता हूं कि मेरे माननीय मित्र ने एक बार फिर मेरे माननीय साथियों को "इस सभा में के लोग" के रूप में उल्लेख क्यों किया।

***अध्यक्षः** उन्होंने "माननीय सदस्य और बाहर की जनता" कहा था।

प्रश्न यह है:

"कि अनुसूची 3 के पश्चात् निम्नलिखित अनुसूची प्रविष्ट की जाये

'SCHEDULE III-A

[ARTICLES 4(1) & 67(1a)]

ALLOCATION OF SEATS IN THE COUNCIL OF STATES

To each State or States specified in the first column of the table of seats appended to this Schedule there shall be allotted the number of seats specified in the second column of the said table opposite to that State or States, as the case may be.

TABLE OF SEATS

THE COUNCIL OF STATES

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART I OF THE FIRST SCHEDULE

	States	Total Seats
1.	Assam	6
2.	Bengal	14
3.	Bihar	21
4.	Bombay	17
5.	Koshal-Vidarbh	12
6.	Madras	27
7.	Orissa	9
8.	Punjab	8
9.	United Provinces	30
	Total	144

[अध्यक्ष]

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART II OF THE FIRST SCHEDULE

States and Groups of States		Total Seats
1.	Ajmer Coorg	1
2.		
3.	Bhopal	1
4.	Bilaspur Himachal Pradesh	1
5.		
6.	Cooch-Behar	1
7.	Delhi	1
8.	Kutch	1
9.	Manipur Tripura	1
10.		
11.	Rampur	1
	Total	8

REPRESENTATIVES OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART III OF THE FIRST SCHEDULE

	States	Total Seats
1.	Hyderabad	11
2.	Jammu and Kashmir	4
3.	Madhya Bharal	...6
4.	Mysore	6
5.	Patiala and East Punjab States Union	3
6.	Rajashtan	9
7.	Saurashtra	4
8.	Travancore-Cochin	6
9.	Vindhya Pradesh	4
	Total	53
	Total of all Seats	205’

[अनुसूची 3क

[अनुच्छेद 4(1) और 67(1क)]

राज्य-परिषद् में के स्थानों का बंटवारा

इस अनुसूची से संलग्न स्थान-सारिणी के प्रथम स्तम्भ में उल्लिखित प्रत्येक राज्य या राज्यों को यथास्थिति उतने स्थान बांट में दिये जायेंगे जितने कि उक्त सारिणी के दूसरे स्तम्भ में उस राज्य या राज्यों के सामने उल्लिखित हैं।

स्थान-सारिणी

राज्य-परिषद्

प्रथम अनुसूची के भाग (1) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य	कुल स्थान
1.	आसाम	6
2.	उड़ीसा	9
3.	पंजाब	8
4.	बंगाल	14
5.	बिहार	21
6.	मद्रास	27
7.	कौशल-विदर्भ	12
8.	बम्बई	17
9.	युक्त प्रदेश	30
	कुल	144

प्रथम अनुसूची के भाग (2) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य और राज्य समूह 1	कुल स्थान 2
1.	अजमेर	1
2.	कोड़गु	
3.	कच्छ	1

[अध्यक्ष]

1		2
4.	कोच-बिहार	1
5.	दिल्ली	1
6.	बिलासपुर	1
7.	हिमाचल प्रदेश	
8.	भोपाल	1
9.	मनीपुर	1
10.	त्रिपुरा	
11.	रामपुर	1
	कुल	8

प्रथम अनुसूची के भाग (3) में इस समय उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि

	राज्य	कुल स्थान
1.	जम्मू और कश्मीर	4
2.	तिरुवांकुर-कोचीन	6
3.	पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य	3
4.	मध्य भारत	6
5.	मैसूर	6
6.	राजस्थान	9
7.	विन्ध्य प्रदेश	4
8.	सौराष्ट्र	4
9.	हैदराबाद	11
	कुल	53
	कुल स्थानों का जोड़	205]”

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुसूची 3-क संविधान में प्रविष्ट की गई।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

“कि अनुच्छेद 67 के खंड (1क) में ‘Schedule III B’ शब्द, संख्या और अक्षर के स्थान में ‘Schedule IIIA’ शब्द, संख्या और अक्षर रखे जायें।”

इस संशोधन की आवश्यकता मैं बतला ही चुका हूं। मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

*__अध्यक्ष:__ यह केवल आनुषंगिक है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 67 के खंड (1क) में 'Schedule III B' शब्द, संख्या और अक्षर के स्थान में 'Schedule III A' शब्द, संख्या और अक्षर रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'First Schedule' शब्दों के पश्चात्, 'and Schedule III A' शब्द, संख्या और अक्षर रखे जायें।"

इस संशोधन की आवश्यकता को भी मैं बता चुका हूं। मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

*__अध्यक्ष:__ यह भी आनुषंगिक है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'First Schedule ' शब्दों के पश्चात्, 'and Schedule III A' शब्द, संख्या और अक्षर जोड़ दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'incidental and consequential provisions' शब्दों के स्थान में 'supplemental, incidental and consequential provisions (including provisions as to representation in Parliament and in the Legislature or Legislatures of the State or States to be affected by such law)' शब्द और कोष्ठक रख दिये जायें।"

यह उन शब्दों का रूप भेद है जिन्हें हम हटाना चाहते हैं। इस संशोधन में ऐसी यथार्थ बात कोई नहीं है जो अनुच्छेद 4 में दिये हुए किसी सिद्धांत का परिवर्तन करती हो।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमद:__ क्या इससे मूल पाठ के क्षेत्र का परिवर्द्धन हो जाता है?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ केवल इस सीमा तक कि अनुच्छेद 4 अनुच्छेद 3 के संबंध में एक प्रवृतनीय खंड है, और यह परिवर्तन केवल उसी सीमा तक निर्बन्धित है जिस तक वह नितांत आवश्यक है।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 4 के खंड (1) में 'incidental and consequential provisions' शब्दों के स्थान में 'supplemental, incidental and consequential provisions (including provisions as to representation in Parliament and in the Legislature or Legislatures of the State or States to be affected by such law)' शब्द और कोष्ठक रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

भाग 18

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि भाग 18 के स्थान में निम्नलिखित भाग रखा जाये:

'Part XVIII

Short Title, Commenement and Repeals.

Short title 313A. This Constitution may be called the Constitution of India.'

[भाग 18

संक्षिप्त नाम, प्रारम्भ और निरसन।

संक्षिप्त नाम 313क–यह संविधान भारत का संविधान नाम से ज्ञात हो सकेगा।]"

***श्री बी. दास:** आपको "इंडिया अर्थात् भारत" कहना चाहिये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** जैसे हमने संविधान में अन्यत्र इंडिया का प्रयोग किया है उसी प्रकार से इस शब्द का हमने यहां प्रयोग किया है।

" '314. This article and articles 5, 5A, 5AA, 5B, 303, 311' 311A and 312F of this Constitution shall come into force at once, and the remaining provisions thereof shall come into force on the twenty-sixth day of January, 1950, which date is referred to in this Constitution as the date of commencement of this Constitution.

Commencement

315. The Indian Independence Act, 1947, in so far as its provisions are repugnant to this Constitution and the Government of India Act, 1935, including the India (Central Government and Legislature) Act, 1946 and, all other enactments amending or supplementing the Government of India Act, 1935, shall cease to have effect: Repeals

Provided that nothing in this article shall affect the provisions of the Abolition of Privy Council Jurisdiction Act, 1949.'

[314–यह अनुच्छेद और अनुच्छेद 5, 5क, 5कक, 5ख, 303, 311, 331क और 312 (च) तुरन्त प्रवृत्त होंगे, तथा इस संविधान के अवशिष्ट उपबन्ध 1950 की 26 जनवरी के दिन प्रवृत होंगे जो दिन कि इस संविधान में इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि के रूप में निर्दिष्ट किया गया है। प्रारम्भ

315–भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947, उस सीमा तक जहां तक कि उसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध है, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935, भारत (केन्द्रीय शासन और विधान-मंडल) अधिनियम, 1946 के सहित, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935 को संशोधन और अनुपूरण करने वाली सब अधिनियमितियां प्रभाव-शून्य हो जायेंगे: निरसन

परन्तु इस अनुच्छेद की किसी बात से प्रिवी कौंसिल क्षेत्राधिकार अधिनियम, 1949 के उपबन्धों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।]

श्रीमान, प्रथम खंड 313 क औपचारिक है। दूसरा खंड अनुच्छेद 314 के संबंध में है जिसके लिए संविधान के मसौदे में "यह संविधान भारत का संविधान... ....." शब्दों के पश्चात् खाली स्थान छोड़ दिया गया था। इस खंड में नागरिकता संबंधी अनुच्छेद 5 (क), 5 कक और 5 ख, (परिभाषायें) अनुच्छेद 303 और अनुच्छेद 311, 311क और 312 (च) जो अन्तर्कालीन उपबंद हैं, रखे गये हैं। 311क अन्तर्कालीन संसद के निर्वाचन के और 311 क अन्तर्कालीन राष्ट्रपति के निर्वाचन के संबंध में हैं और अनुच्छेद 312(च) अन्तर्कालीन संसद के संबंध में है जिससे कि उपनिर्वाचनों में पालन की जाने वाली रीति का तथा इस प्रयोजन के लिये पालन किये जाने वाले नियमों का विनिश्चयन हो सके। चूंकि ये अनुच्छेद तुरन्त ही प्रवृत होंगे इसलिए ये रख दिये गये हैं। अवशिष्ट अनुच्छेद एक नियत किये हुए दिन को प्रवृत होंगे जो 1950 की 26 जनवरी है।

जहां तक अनुच्छेद 315 का संबंध है, यह न्यूनाधिक रूप से संविधान के मसौदे की योजना के अनुसार है केवल इस अपवाद के कि हमने यह उपबन्ध

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

करना आवश्यक समझा कि इस सभा द्वारा पारित प्रिवी कौंसिल क्षेत्राधिकार अधिनियम के प्रवर्तन पर इस निरसन का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। मैं नहीं समझता हूं कि इन अनुच्छेदों के आशय को समझाना आवश्यक है क्योंकि ये अनुच्छेद स्वयं व्याख्यात्मक है।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन के लिए एक आयोग की नियुक्ति के बारे में क्या विचार है?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** उसको हमने नहीं रखा है। मैं उसे जोड़ना चाहूंगा। उदाहरणार्थ अनुच्छेद 290 के अधीन निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन का प्रश्न हो सकता है। इसके पूर्व अन्तर्कालीन संसद द्वारा एक विधान पारित होना चाहिये। मैं नहीं समझता हूं कि अब से लेकर 26 जनवरी 1950 तक इस संबंध में कुछ किया जा सकता है। यदि आपकी अनुज्ञा हो तो यहां मैं एक और विषय का जिक्र करूंगा। ये वे अनुच्छेद हैं जिनका अनुच्छेद 314 में रखना अब हमें आवश्यक प्रतीत होता है। इस स्थिति की जांच कुछ समय बाद की जायेगी। मैं समझता हूं कि भारत सरकार से सम्बद्ध विधि मंत्रालय इस समूचे विषय पर विचार कर रहा है और संविधान के उन उपबंधों की सावधानीपूर्वक जांच कर रहा है जिनको नियुक्त तिथि से पूर्व प्रवृत्त करना होगा। यदि हमने यह अनुभव किया कि इन अनुच्छेदों में कुछ बातें जोड़ी जायें तो बाद में उन बातों को रखने के लिए हम आपकी तथा इस सभा की अनुज्ञा ले लेंगे। अनुच्छेदों का अध्ययन करने के बाद और उन अनुच्छेदों के आशय की जांच करने के बाद इस समय ये ही ऐसे अनुच्छेद हैं जिन पर, जहां तक हम देख सकते हैं, प्रभाव पड़ा है। परन्तु अन्य आनुषंगिक विषय उत्पन्न हो सकते हैं, और यदि अनुच्छेदों की जांच और परीक्षण करने पर हमें ऐसे विषय दिखाई दिये तो आपकी अनुज्ञा प्राप्त कर हम उन विषयों को अवश्य सभा के समक्ष रखेंगे।

***अध्यक्षः** मूल अनुच्छेद संबंधी कुछ संशोधन हैं। यदि सदस्य चाहते हैं और यदि वे इस समय रखे गये संशोधन में ठीक बैठते हैं तो मैं उन्हें ले लूंगा। ऐसे संशोधन तीन ये हैं। एक डॉ. देशमुख का है। वे यहां पर नहीं हैं इस कारण वह पेश नहीं किया जाता है। दूसरा श्री ब्रजेश्वर प्रसाद का है वे भी यहां नहीं हैं। इसलिए वह भी पेश नहीं किया जाता है। इसके बाद अनुच्छेद 315 के संबंध में डॉ. देशमुख का एक और संशोधन है। अतः वह भी पेश नहीं किया जाता है। क्या और भी हैं?

***श्री एच.वी. कामतः** मुद्रित सूची के अंक 2 में मेरे कुछ संशोधन हैं।

***अध्यक्षः** आप उन्हें पेश कर सकेंगे। पर मैं समझता हूं कि हम उन्हें आरम्भ से लें। सर्वप्रथम 314, इस पर कुछ संशोधन हैं। एक श्री एन. अहमद का, इस अध्याय की क्रम संख्या के संबंध का है। यह शाब्दिक है और इसको लेना आवश्यक नहीं है। श्री प्रकाशम् यहां नहीं हैं। श्री लारी अब सदस्य नहीं हैं। 314 पर और कोई संशोधन नहीं है। 315 पर कामत द्वारा एक संशोधन संख्या 3325 है। वे उसे पेश कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मैं मुद्रित सूची 2 के संशोधन 3325 और 3327 का उल्लेख करता हूं। संशोधन संख्या 3325 को मैं पेश करना नहीं

चाहता हूं क्योंकि जिस रूप में यह अनुच्छेद अब मेरे माननीय मित्र श्री कृष्णमाचारी ने पेश किया है। उसमें जिस तिथि को यह संविधान प्रवृत होगा उस तिथि के संबंध में अनुच्छेद 314 में परिवर्तन कर दिया गया हैं अत: मेरा वह संशोधन जो संविधान की आरम्भ तिथि के संबंध में था अब कोई मान्यता नहीं रखता है। संशोधन संख्या 3327 शाब्दिक अथवा औपचारिक है। सभा ने यह देखा होगा कि अनुच्छेद 315 का हाशिये में शीर्षक "निरसन" है और इसके अनुरूप मैंने सोचा कि इस अनुच्छेद के अंत में "प्रभावशून्य होंगे" के स्थान में "निरसित किये जायेंगे" कहना अधिक ठीक होगा। वास्तव में मैं न तो वकील हूं और न संविधानिक शब्दावलियों तथा पदावलियों के विषय का माना हुआ विद्वान हूं। मैं इस विषय को मसौदा-समिति की सामूहिक बुद्धिमता पर छोड़ने से संतुष्ट हूं।

पर श्रीमान्, अभी मेरे माननीय मित्र श्री कृष्णमाचारी ने जो संशोधन 463 पेश किया है उसके संबंध में मैं कुछ बातें कहना चाहूंगा। पहली बात जिस रूप में उन्होंने अनुच्छेद 315 पेश किया है उसके संबंध में है। यह भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947 के संबंध में है। यदि सभा इसकी तुलना इस अनुच्छेद के मूल मसौदे से करेगी तो उनको यह विदित हो जायेगा कि "उस सीमा तक जहां तक कि इसके उपबंध इस संविधान के विरुद्ध हैं" शब्द नये प्रविष्ट किये गये हैं। मूल मसौदा इस विषय में मौन था। मैं यह जानना चाहूंगा कि इन शब्दों का वास्तविक महत्व क्या है। क्या हम साफ, स्पष्ट तथा निश्चित रूप में यह नहीं कहते हैं कि इस संविधान के आरम्भ की तिथि से भारत स्वाधीनता अधिनियम निरसित हो जायेगा तथा भारत शासन अधिनियम और जो कुछ हो वह भी? जब यह संविधान प्रवृत होता है तो उस तिथि तक जो विधियां प्रवृत थीं वे सब अपने आप रद्द तथा शून्य हो जाती हैं। अत: "उस सीमा तक जहां तक उसके उपबंध इस संविधान के विरुद्ध हैं" शब्द अनावश्यक हैं और इनको अपमार्जित किया जाये। मुझे खेद है कि मेरे पास संशोधन की सूचना देने का समय नहीं था।

अनुच्छेद 314 इस संविधान के आरम्भ की तिथि का निर्देशन करता है। यह ठीक है कि कुछ अनुच्छेद तुरन्त प्रवृत होंगे। इस विषय पर मुझे कुछ भी नहीं कहना है। पर इस अनुच्छेद के दूसरे भाग के बारे में जिसमें यह कहा गया है कि शेष संविधान 1950 की 26 जनवरी से प्रवृत होगा मैंने कुछ समय पूर्व एक सुझाव दिया था कि हमारे राष्ट्रीय पत्र में 26 जनवरी की अपनी निराली पवित्रता है इस बात को अपने संपूर्ण हृदय से मानते हुए यह सुझाव दिया था कि फिर भी हम कोई और दिन रखें और वह दिन वस्तुस्थिति के अनुकूल तथा एक बहुत ही उपयुक्त रूप में हमारी पूर्ण स्वतंत्रता तथा गणतंत्रात्मक रूप का प्रतीक हो। हम उसका नाम "गणराज्य दिवस" रख सकते हैं। 26 जनवरी तो फिर भी "स्वाधीनता दिवस" के रूप में माना जा सकता है, वह दिन जिस दिन हमने प्रसिद्ध स्वाधीनता शपथ ग्रहण की थी, जिसे हम अपने राष्ट्रीय पत्रे में अन्य दिवस के समान मान सकते हैं। "स्वाधीनता दिवस" और "गणराज्य दिवस" के एक

[श्री एच.वी. कामत]

होने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है, पर मैं समझता हूं कि यदि हम "स्वाधीनता दिवस" 26 जनवरी को रखें और जनवरी या दिसम्बर के किसी और दिन "गणराज्य दिवस" रखें तो इससे हमारे राष्ट्रीय पत्रे का महत्व और अधिक बढ़ जायेगा। यदि हो सके तो 9 दिसम्बर 1949 को हम "गणराज्य दिवस" रखें क्योंकि इस ऐतिहासिक सभा का आरम्भ हमने 9 दिसम्बर को किया था। पर शायद उस समय तक ये सब बातें तैयार नहीं हो सकती हैं अतः जनवरी के किसी दिन के लिए सुझाव दूंगा और उस दिवस को "स्वाधीनता दिवस" या "गांधी जयंती" या अन्य किसी राष्ट्रीय दिवस के समान "गणराज्य दिवस" के रूप में मनाया जाये। सभा से अपने एक इस प्रकार के छोटे से निवेदन पर विचार करने के लिए प्रार्थना करूंगा कि हम यह भी कह सकते हैं कि इस संविधान के अवशिष्ट उपबन्ध 25-26 की अर्द्ध-रात्रि से प्रवृत होंगे। जिस प्रकार से हमने स्वतंत्रता का स्वागत 14-15 अगस्त 1947 की रात्रि को किया था उसी प्रकार से यदि हम यहां निश्चित रूप से यह कह दें कि इस संविधान के अवशिष्ट उपबंध 25-26 जनवरी की रात्रि से प्रवृत होंगे तो यह वस्तुस्थिति के अनुकूल होगा और यदि आज यह स्वीकार कर लिया जाता है तो इससे एक और ऐतिहासिक उत्सव मनाने का मार्ग खुल जायेगा।

मैं यह नहीं जानता हूं कि ज्योतिषी लोग इस विषय में क्या कहेंगे, क्योंकि पिछली बार जब उनसे परामर्श किया गया था तो उस तिथि के शुभ होने के बारे में मतभेद था।

***अध्यक्षः** उन्होंने अपना मत बिना पूछे दिया था।

***श्री एच.वी. कामतः** बाहर के मित्रों ने उनसे परामर्श किया था और वे इस बात से पूर्णतया सहमत न थे कि वह पूर्णरूप से शुभ है। मैं नहीं समझता हूं कि हमें सदैव ज्योतिषियों की सम्मति पर निर्भर करना चाहिये, पर अन्य बातें समान होने पर हम उसे 25-26 जनवरी 1950 की अर्द्ध रात्रि को भी मना सकते हैं।

मैं आशा करता हूं कि श्री टी.टी. कृष्णमाचारी मेरी बातें सुन रहे थे और जो सुझाव मैंने दिये हैं उनका उत्तर देने का वे भरसक प्रयत्न करेंगे।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं अपना संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं, पर श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो संशोधन पेश किया है उसके प्रति प्रस्थापित अनुच्छेद 315 के बारे में मुझे कुछ कठिनाई है। अनुच्छेद 315 में यह कहने का प्रयत्न किया गया है कि भारत स्वाधीनता अधिनियम उस सीमा तक जिस तक कि वह इस संविधान के विरुद्ध है प्रभाव शून्य होगा। मैं समझता हूं कि यह बात पुराने अनुच्छेद 307 के अंतर्गत आ जानी चाहिये। मैं यह नहीं जानता हूं कि उस अनुच्छेद का क्या हुआः उसको पेश करने का विचार है या नहीं। पर संविधान के मसौदे में अनुच्छेद 307.....

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** दूसरा अनुच्छेद 307 पेश किया जा चुका है। तथा स्वीकार हो गया है और इस संविधान का अंग है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** इस अनुच्छेद 307 के अंतर्गत 315 आ जाता है। मैं पुराने अनुच्छेद को निर्दिष्ट कर रहा हूं और मैं समझता हूं कि नया अनुच्छेद 307 का सार उसी प्रकार का है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** सिवा खण्ड (2) के।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** खण्ड (1) में कहा गया है "इस संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए इस संविधान के प्रारम्भ के ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में सब प्रवृत विधियां तब तक प्रवृत्त होंगी जब तक.......

अतः "भारत के राज्यक्षेत्र में सब प्रवृत्त विधियां" के अंतर्गत भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947 भी आ जाता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** वह विशेष रूप से उल्लिखित है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** वह आवश्यक नहीं है: अन्यथा आपको उन सब अन्य अधिनियमों का जिक्र करना चाहिये जो उसके अंतर्गत आ जाते हैं। भारत स्वाधीनता अधिनियम पूर्णतया भारतीय विधानमंडल के हाथों में है। उस अधिनियम में कहा गया है कि नियुक्त तिथि से भारत स्वाधीनता संबंधी सब विधियों पर और भारत में प्रयोज्य सब ब्रिटेन की विधियों पर न तो कोई प्रभाव पड़ना चाहिये अथवा न उनका रूपभेद होना चाहिये अथवा न उन पर ब्रिटिश संसद द्वारा किसी प्रकार का कोई विचार होना चाहिए पर उन पर भारतीय विधानमंडल द्वारा विशिष्ट रूप से विचार होना चाहिये। यदि ऐसी बात है तो मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि भारत स्वाधीनता अधिनियम किस प्रकार से एक ऐसा अधिनियम है जिसका विशेष उल्लेख उपेक्षित है। वह वास्तव में हमारी क्षमता के अंतर्गत है। ब्रिटिश संसद का अब इस पर कोई क्षेत्राधिकार नहीं है। उसने आत्म-वंचित अध्यादेश अधिनियमित किया है और वह वास्तव में भारत राज्य-क्षेत्र में प्रवृत्त एक विधि है। ये विधियां जो इस समय वर्तमान हैं उनको अनुच्छेद 307 के अधीन स्वीकार करना पड़ेगा। मैं यह नहीं जानता हूं कि कार्यालय ने इस विषय में कितनी प्रगति की है, क्योंकि 26 जनवरी को हम एक पूर्ण अनुकूल आदेश की आशा करते हैं जो उस तिथि को प्रयोज्य होगा। उस तिथि को तथा उस तिथि से वर्तमान संविधान से असंगत सब विधियां इस संविधान के अनुकूल स्पष्ट रूप से अनुकूलित हो जानी चाहिये।

मैं समझता हूं कि "निरसन" शब्द जो हाशिये की टिप्पणी में है वह अप्रयोज्य है क्योंकि हम "स्वाधीनता अधिनियम" का निरसन नहीं कर रहे हैं: हम केवल यह कह रहे हैं कि जहां तक वह वर्तमान संविधान से असंगत है वहां तक वह प्रभावशून्य होगा। हम वास्तव में इस अधिनियम का रूपभेद कर रहे हैं या उसे वर्तमान संविधान के अनुकूल बना रहे है और इस प्रयोजन की पूर्ति अनुच्छेद 307 द्वारा अवश्य हो जायेगी। इसलिए मैं अनुच्छेद 315 का विरोध करता हूं। हम जो कुछ चाहते है वह वास्तव में अनुकूलन है न कि निरसन।

अनुच्छेद 314 में एक ऐसी पदावली है जो बार-बार इस सभा के समक्ष आ रही है अर्थात् "इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि"। कभी हम "इस संविधान का प्रारम्भ" कहते हैं और कभी "इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि"। मैं समझता हूं कि "की तिथि" शब्द अनावश्यक तथा इनमें पुनरुक्ति है। हम यहां यह कहते हैं कि "जनवरी 1950 का 26वां दिन", जिस तिथि को इस अनुच्छेद में इस संविधान के प्रारम्भ 'की तिथि' के रूप में निर्दिष्ट किया है।

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

जनवरी 1950 का 26वां दिन वास्तव में एक "तिथि" है, और यदि उसको इस संविधान के प्रारम्भ के रूप में निर्दिष्ट किया गया है तो "की तिथि" शब्द पूर्णतया अनावश्यक हैं। इस पदावलि का प्रयोग कदाचित् इस रूप में अव्यवस्थित है कि कई स्थानों पर ये शब्द पाये जाते हैं और कई स्थानों पर नहीं। मैं समझता हूं कि मसौदा समिति द्वारा ये शब्द अपमार्जित कर दिये जायें जिससे कि यह पदावली शुद्ध और स्पष्ट हो जाये और फिर भी पूर्ण रहे।

मै यह जानना चाहूंगा कि वर्तमान विधियों के अनुकूलन में कितनी प्रगति हुई है क्योंकि यह बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है और इन बातों को 26 जनवरी के लिए तैयार कर लेना चाहिये इसका प्रभाव न्यायालयों, कार्यालयों तथा अन्य विभिन्न व्यक्तियों पर पड़ेगा। जैसा कि भारत शासन अधिनियम के लिए किया गया था हमारे पास अधिनियमों की पूर्ण अनुकूलित मालायें होनी चाहिए। भारत शासन अधिनियम के संबंध में सब विधियों को अनुकूलित कर लिया गया था और समय से पूर्व अनुकूलन आदेश मुद्रित करा लिया था और घुमा दिया गया था जिससे उस संविधान के प्रभाव में आने की तिथि अर्थात् 1 अप्रैल 1937 को पूरी तैयारी थी।

मैं यह जानना चाहूंगा कि अब तक क्या प्रगति हो चुकी है क्योंकि यदि इस कार्य को हाथ में नहीं लिया जाता है तो एक कठिन स्थिति तथा गड़बड़ी पैदा हो सकती है। अत: इस बात के स्पष्टीकरण की आवश्यकता है और यदि इस कार्य को हमने अपने हाथों में ले लिया है तो अनुच्छेद 315 पूर्णतया अनावश्यक हो जायेगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** श्रीमान, संशोधन संख्या 463 के सम्बन्ध में मुझे दो बातें कहनी हैं। मैं समझता हूं कि किसी अन्य अनुच्छेद के प्रवर्तन करने के पूर्व यह वांछनीय है कि कम से कम प्रस्तावना और अनुच्छेद 1 को भी प्रवृत्त किया जाये क्योंकि अन्य सब खंड भारत के संबंध में हैं और इस कारण अनुच्छेद 1 के प्रवृत्त होने के पूर्व मैं नहीं समझता हूं कि यह बात बिल्कुल ठीक है कि अन्य अनुच्छेद प्रवृत्त किये जायें। मैं यह सुझाव देता हूं कि प्रस्तावना और अनुच्छेद 1 को भी जोड़ दिया जाये। इन अनुच्छेदों को तो तुरन्त प्रवृत्त कर देना चाहिये और शेष 26 जनवरी को प्रवृत्त हो सकते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** कठिनाई यह होगी कि प्रस्तावना को तो अभी तक इस सभा ने स्वीकार नहीं किया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** संविधान को पूर्ण करने के पूर्व उसे स्वीकार करना पड़ेगा। मैं केवल यह सुझाव दे रहा हूं....

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या मैं यह जान सकता हूं कि आप प्रस्तावना को तुरन्त प्रवृत्त करना क्यों चाहते हैं?

***माननीय श्री के. सन्तानम:** पूरे संविधान को प्रवृत्त करने से पूर्व, हम संविधान के कुछ उपबन्धों को प्रवृत्त कर रहे हैं, और संविधान के किसी भाग को प्रवृत्त

करने से पूर्व संविधान का उद्देश्य और देश का नाम होना चाहिये। यह विचार जिस योग्य है उतना आप इस पर विचार करें।

प्रस्थापित अनुच्छेद 315 में ऐसे उपबन्ध हैं जो इस नये संविधान की प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं हैं। उसमें कहा गया है "भारत स्वाधीनता अधिनियम, उस सीमा तक जहां तक कि उसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध हैं, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935, भारत (केन्द्रीय शासन और विधानमंडल) अधिनियम, 1946 के सहित, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935 को संशोधन और अनुपूरण करने वाली सब अधिनियमितियां प्रभावशून्य हो जायेंगे।" जिस सीमा तक यह स्वाधीनता अधिनियम इन उपबन्धों के विरुद्ध नहीं है उस सीमा तक वह वर्तमान बना रहेगा और प्रवृत्त रहेगा। मेरे विचार से पूरा का पूरा स्वाधीनता अधिनियम निरसित हो जाना चाहिये। यह संविधान ही एकमात्र मूल विधि होनी चाहिये। अन्य सब विधियों को इस संविधान से मान्यता मिलनी चाहिये। जब भारत शासन अधिनियम, 1935 पार किया गया था पहले सब अधिनियम पूर्णतया निरसित कर दिये गये थे। मेरा यह विचार नहीं है कि हम भारत स्वाधीनता को इस रूप में छोड़ दें कि वह इस संविधान के साथ-साथ इस देश की मूलविधि के रूप में बना रहे जिसके कारण उच्चतम न्यायालय में यह तर्क प्रस्तुत किया जा सके कि भारत स्वाधीनता अधिनियम का कोई उपबन्ध इसलिये प्रवृत्त बना रहेगा चूंकि वह इस संविधान के विरुद्ध नहीं है। हमारा उच्चतम न्यायालय भारत स्वाधीनता अधिनियम से कोई प्राधिकार प्राप्त न करे: वह केवल इस संविधान से अपने प्राधिकार प्राप्त करे। मेरे विचार से यह एक ऐसा प्रारम्भिक सिद्धांत है जो इस समूचे संविधान की प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक है। हमें यह नहीं कहना चाहिए कि हमारा संविधान जो संविधान हमें अधिनियमित किया है वह और उतना भारत स्वाधीनता अधिनियम जितना कि वह इस संविधान के उपबंधों से विरुद्ध नहीं है इन दोनों से मिलकर बना है। अत: मैं समझता हूं कि यह विषय महत्व का है और मैं यह सुझाव देता हूं कि श्री अल्लादी तथा अन्य व्यक्ति मिलकर इस पर विचार करेंगे और इस बात का ध्यान रखेंगे कि हम कोई ऐसा खंड तो अधिनियमित नहीं करते हैं जो संभवत: जो संविधान हम बना रहे हैं उसकी प्रतिष्ठा के लिए हानिकर हो।

***श्री बी. दास:** अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 314 में यह कहा गया है "यह अनुच्छेद 311 तुरन्त प्रवृत्त होगा।" जब अनुच्छेद 311 पार किया गया था मैंने समझा कि प्रान्तीय विधानमंडलों के वे सदस्य जो इस सभा के सदस्य हैं वे 26 जनवरी 1950 तक सदस्य बने रहेंगे। मैं यह चाहता हूं कि यह स्पष्ट कर दिया जाये कि प्रान्तीय विधानमंडलों के सब सदस्य, यहां जो हमारे मित्र और साथी हैं वे हमारे साथ 26 जनवरी 1950 तक रहेंगे जिस दिन गणराज्य को घोषणा की जायेगी। यदि हम वर्तमान अनुच्छेद 314 को स्वीकार कर लेंगे तो मुझे आशा है कि इस विषय में कोई बाधा नहीं होगी। (*बाधायें*) मैं आप से सम्मानपूर्वक निवेदन करता हूं कि आप अनुच्छेद 311 का परीक्षण करें और मैं यह जानना चाहता हूं कि प्रान्तीय विधान मंडलों से आये हुए हमारे यहां के साथी हमारे साथ 26 जनवरी 1950 तक रहेंगे या नहीं जिस दिन कि गणराज्य की घोषणा की जायेगी। यदि यह विचार नहीं है तो मैं यहां अनुच्छेद 311 की प्रविष्टि का विरोध करता हूं।

***श्री आर.के. सिधवाः** वह तो स्पष्ट है।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम की प्रथम आपत्ति के संबंध में मैं केवल एक दो बातें कहना चाहता हूं। मैं यह बता दूं कि संविधान के मसौदे के अनुच्छेद 315 में अपने संविधान के प्रवृत्त हो जाने के पश्चात् अधिराज्य अधिनियम के किसी भी पुनरीक्षित रूप के बने रहने का निर्देश नहीं है। कथित मूल अनुच्छेद की भाषा को मैं पढ़ कर सुनाऊंगा। "भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935, भारत (केन्द्रीय शासन और विधान मंडल) अधिनियम, 1946 के सहित, तथा भारत शासन अधिनियम, 1935 का संशोधन और अनुपूरण करने वाली अन्य सब अधिनियमितियां प्रभावशून्य हो जायेंगे।" सावधानीपूर्वक विचार करने पर मैं श्री सन्तानम से सहमत हूं कि हमारे नये संविधान के प्रवृत्त हो जाने के पश्चात् पहले अधिनियम के किसी भी उपबन्ध को बनाये रखने की कोई बात ही नहीं रहती है। इसमें संदेह नहीं कि उन कुछ विधियों को हम नया जीवन दान दें जो पुराने संविधान के अधीन पार की गई थीं और उनको, ये कहना चाहिये कि अपने संविधान की विधियों के रूप में हम ग्रहण कर लें। यह आवश्यक है और ऐसा उपबन्ध कर दिया गया है। मैं यह भी बता दूं कि इस बात के प्रति हम विशेष रूप से उत्सुक हैं कि जिस संविधान को हम बना रहे है या पारित कर रहे हैं उसके लिए स्वाधीनता अधिनियम की धारा 7 का अनुसरण नहीं करना चाहिये और हमने यह विचार अपनाया कि नये संविधान के लिए गवर्नर जनरल की अनुमति लेने की भी आवश्यकता नहीं है। यह नया संविधान भारत स्वाधीनता अधिनियम की धारा 7 या 8 के अधीन दी हुई वृहद् तथा व्यापक शक्तियों के अधीन अथवा उनके अनुसार पारित संविधान नहीं होगा। अतः जब हम एक बार संविधान पारित कर लेते हैं, किसी पहले अधिनियम से स्वतंत्र होकर तथा उसके बिना निर्देश के अपनी स्वतंत्र इच्छा का प्रयोग करते हैं तो फिर यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि स्वाधीनता अधिनियम प्रवृत्त बना रहेगा चाहे वह किसी भी सीमा तक हो। मैं यह कहूंगा कि जब भारत शासन अधिनियम, 1935 जैसा अधिनियम पारित किया गया था तो वह संसद के अधिनियम के अनुसार पारित किया गया था और पहला भारत शासन अधिनियम निरसित कर दिया गया था सिवा पहले भारत शासन अधिनियम के उन उपबंधों के जो भारत शासन, अधिनियम 1935 की विशेष धाराओं द्वारा ग्रहण कर लिये गये थे और चालू रखे गये थे। इन परिस्थितियों के अधीन श्री सन्तानम के सुझाव में बल है, पर उनका प्रकार एक मसौदा संबंधी संशोधन जैसा है। यदि अनुज्ञा दे दी जाये तो उनको बाद में हटाया जा सकता हैं मैं यह इसलिए कह रहा हूं कि मसौदा समिति से आने के कारण यही ठीक है कि उसका संशोधन फिर मसौदा समिति द्वारा ही हो। इस विषय के सम्बंध में कोई भी कठिनाई नहीं होगी।

इसके पश्चात् मेरे माननीय मित्र श्री कामत ने "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्दों पर एक पारिभाषिक प्रश्न उठाया था। उसी बात के कारण जिसके लिए वे लड़ते रहे हैं हमने सोच-समझकर "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्दों को रखा था। निरसन के विषय में हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि हमारा निकाय स्वाधीन है। स्वाधीनता अधिनियम एक दूसरी संसद से आया था। दूसरों के अधिनियम को हमारे द्वारा

निरसित किये जाने का कोई प्रश्न नहीं है। इसलिए सोच-समझकर संविधान के मसौदे में विशिष्ट उपबन्ध “प्रभावशून्य हो जायेंगे” रखा गया था। अत: अपने माननीय मित्र श्री कामत जो हमेशा इस देश की स्वाधीनता के समर्थक रहे हैं उनके विचारों सें संगत कि संविधान में ब्रिटिश संसद से आई हुई किसी बात का निर्देश न हो यही ठीक तथा उचित है कि “निरसित” शब्द के बजाय “प्रभावशून्य हो जायेंगे” पदावली ही रहे।

इसके पश्चात् श्रीमान अंतिम बात श्री सन्तानम द्वारा कहे गये विषय के संबंध में है जो प्रस्तावना तथा भारत राज्यों का संघ होगा के प्रवृत्त किये जाने के सम्बन्ध में है। मैं समझता हूं कि यदि अपने माननीय मित्र के प्रति, जो अपने विषय के बारे में सदैव बहुत सावधान रहते हैं, सम्मानपूर्वक यदि मैं कह सकता हूं तो यह कहूंगा कि इस आपत्ति में कोई बल नहीं है। जहां तक प्रस्तावना का सम्बन्ध है यद्यपि एक साधारण विधि पुस्तक की प्रस्तावना को हम कोई महत्व नहीं देते हैं पर संविधानिक विधि पुस्तक में प्रस्तावना को सारा महत्व देना पड़ता है, ऐसी कोई बात नहीं है कि प्रस्तावना तुरन्त ही प्रवृत्त की जाये। प्रस्तावना अपने पूर्ण रूप से उस समय प्रवृत्त होगी जब कि संविधान प्रवृत्त हो जायेगा। इस कथन में कोई युक्ति नहीं है कि संविधान के प्रवृत्त होने से पूर्व प्रस्तावना प्रवृत्त हो जायेगी।

दूसरी बात यह है मैं नहीं समझता हूं कि हम इस अनुच्छेद को कि भारत राज्यों का संघ होगा प्रवृत्त कर सकते हैं क्योंकि जिस रूप में राज्यों का संघ इस संविधान में आद्योपान्त समझा गया है उस रूप में भारत तुरन्त राज्यों का संघ नहीं हो जाता है। संघ को उस समस्त संविधानिक तंत्र के सहित समझना चाहिये जिसका उस संविधान के अधीन सृजन किया जा चुका है। जिसे हम पार कर रहे हैं। बिना अवयवों के हम शरीर अथवा आत्मा की कल्पना नहीं कर सकते हैं। यदि अवयव क्रियाशील नहीं होते हैं तो संघ की स्थापना कैसे हो सकती है। जहां तक इस बात का सम्बन्ध है एक प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति भी भूल कर जाता है, श्री सन्तानम की इस आपत्ति में कोई बल नहीं है कि यह अनुच्छेद तुरन्त प्रवृत्त किया जाये।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 311 के सम्बन्ध में श्री दास ने एक प्रश्न उठाया था।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान वह बात तो बहुत ही स्पष्ट है।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** मैं उस प्रश्न को सुन न सका।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम : जनरल): श्रीमान्, मसौदा समिति से मैं यह समझना चाहता हूं कि अनुच्छेद 311(3) का अनुच्छेद 314 से किस प्रकार मेल मिलाया जा सकता है। अनुच्छेद 314 में कहा गया है कि वह तुरन्त प्रवृत्त होगा। मैं समझता हूं कि इन सदस्यों को तुरन्त स्थान रिक्त करने पड़ेंगे। मैं श्री कृष्णमाचारी से इस बात का उत्तर चाहता हूं। यदि यही परिणाम है तो हम इसका समर्थन नहीं कर सकते हैं।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** यह तीसरा पठन पारित हो जाने पर प्रवृत्त होगा।

***अध्यक्ष:** यह ठीक वही प्रश्न है जिसे श्री बी.दास ने भी उठाया था।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान श्री बी. दास और श्री कुलधर चालिहा द्वारा उठाये गये प्रश्न के सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहूंगा। अनुच्छेद 311 (3) में यह कहा गया है:

> "यदि भारत डोमिनियन की संविधान सभा का कोई सदस्य 1949 के अक्तूबर के छठे दिन अथवा तत्पश्चात् इस संविधान के प्रारम्भ के पहले किसी समय किसी राज्यपाल प्रान्त.....के विधान मंडल के सदन का सदस्य था... तो इस संविधान के प्रारम्भ से लेकर संविधान सभा में ऐसे सदस्य का स्थान, यदि उसका उस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त जो जायेगा......।"

यहां अनुच्छेद 314 में यह कहा गया है कि इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि 26 जनवरी 1950 होगी। चाहे ये अनुच्छेद तुरन्त प्रवृत्त होने को है पर इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि ही प्रवर्तन की तिथि होगी। मैं नहीं समझता हूं कि इस विषय में कोई सन्देह है। माननीय सदस्यों को मैं यह बताना चाहता हूं। विचार यह है कि जिन सदस्यों को दुहरी सदस्यता है वे 25 जनवरी तक सदस्य रहेंगे। (*बाधायें*)। माननीय सदस्य सब्र से मेरी बातें सुनें। हमें इस स्थिति की फिर से जांच करनी होगी कि "संविधान के प्रारम्भ की तिथि" के स्थान में "नियुक्त तिथि" अधिक उपयुक्त शब्द होंगे। क्योंकि नियुक्त दिन 26 जनवरी है। इस स्थिति की जांच डॉ. अम्बेडकर तथा मसौदा समिति द्वारा की जायेगी और यदि यह अनुभव किया गया कि सदस्यों पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ेगा तो इस सभा को मैं यह आश्वासन दूंगा कि एक उपयुक्त संशोधन द्वारा हम उसका परित्राण करने का प्रयत्न करेंगे। मैं समझता हूं कि इस विषय में माननीय सदस्यों को कोई शंका नहीं होनी चाहिए।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रास : जनरल): मैं यह जानना चाहूंगा कि किस उद्देश्य से यह सम्मिलित किया गया था। संविधान के प्रारम्भ की तिथि प्रकट है तथा उस तिथि तक ही पदावधि रहेगी यह भी प्रकट है तो फिर उन अनुच्छेदों के वर्णन में जो तुरन्त प्रवृत्त किये जा रहे हैं इस अनुच्छेद के सम्मिलित करने में क्या उद्देश्य है? शायद यह निर्वाचन को प्रवर्तन में लाने के उद्देश्य से है। यदि यह बात है तो क्या आप ऐसे निहित प्रयोजन तथा घोषित प्रयोजन रख सकते हैं जो परस्पर एक-दूसरे से विभिन्न हों? इस बात की फिर से जांच होनी चाहिए।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** माननीय डॉक्टर ने इस बात को ठीक समझा है। बात यह है कि इस तथ्य के होते हुए भी कि 25 जनवरी तक रिक्तियां न हों निर्वाचन करने होंगे जिससे कि नये सदस्य 26 जनवरी को अपने स्थान ग्रहण कर सकें जिस तिथि को रिक्तियों का होना अवश्यमभावी है। विचार यह है कि संविधान सभा के अध्यक्ष को इन निर्वाचनों के करने की शक्ति हो इस तथ्य के होते हुए भी कि रिक्तियां बाद में होंगी। अनुच्छेद 311 की शब्दावली स्पष्ट है। दोनों अनुच्छेद 311 और 312 (च) इस आधार पर निर्वाचन कर सकने के प्रयोजन के लिए समुचित नियम बनाने की अनुज्ञा संविधान सभा के अध्यक्ष को

देते हैं कि 25 जनवरी को स्थान रिक्त हो जायेंगे। इस स्थिति को जिस रूप में डॉक्टर ने समझा है वह सही है और यह स्थिति है भी बिल्कुल स्पष्ट। मैं नहीं समझता हूं कि किसी सदस्य पर इस तथ्य के कारण विपरीत प्रभाव पड़ेगा कि इन अनुच्छेदों का ठीक उस समय से प्रवर्तन किया जा रहा है जब कि संविधान अंतिम रूप में पारित कर दिया जायेगा या तृतीय पठन पारित कर दिया जायेगा। यदि हम ऐसा नहीं करेंगे तो संविधान सभा के अध्यक्ष को अनुच्छेद 311 और 312 (च) के अधीन कोई कार्रवाई करने की शक्ति नहीं होगी।

अनुच्छेद 315 की शब्दावली के सम्बन्ध में मुझे अपने माननीय साथी श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर को उच्च बुद्धिमत्तापूर्ण बात को शिरोधार्य करना चाहिये। यदि अब वे यह समझते हैं कि शब्दावली जैसी होनी चाहिये वैसी नहीं है तो यह निश्चित है कि इस विषय पर फिर से विचार होना चाहिये। मैं केवल यही कहूंगा। जब विशेषज्ञों में मतभेद हो जाता है तो साधारण व्यक्ति असमंजस में पड़ जाता है। संविधान के मसौदे के इस अनुच्छेद में हमने यह परिवर्तन क्यों किया इसका कारण वह मंत्रणा है जो इस आदरणीय सभा के संविधानिक परामर्शदाताओं ने हमें दी थी जो इस प्रकार है "यह अनुच्छेद बिना किसी प्रतिबन्ध के यह उपबन्ध करता है कि भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947 और कुछ अन्य अधिनियमितियां प्रभावशून्य हो जायेंगी। पर भारत स्वाधीनता अधिनियम के कुछ उपबन्ध ऐसे हैं जो प्रभावशून्य नहीं होंगे। उदाहरणार्थ ऐसी कोई बात नहीं है कि उस अधिनियम के उपबन्ध जिसमें यह कहा गया है कि युनाइटेड किंगडम में की बादशाह की सरकार पर अब ऐसी किसी राज्यक्षेत्र के शासन का उत्तरदायित्व नहीं रहेगा जो अगस्त 1947 से ठीक पहले ब्रिटिश भारत में सम्मिलित कर लिया गया था और यह अधिनियम कि देशी राज्यों पर से बादशाह का अधिपत्य व्यपगत होता है इत्यादि इत्यादि क्यों प्रवृत्त नहीं रहेंगे। इस उपबन्ध में ऐसी कोई बात नहीं है जो इस संविधान के विरुद्ध हो। इस कारण यह अनुच्छेद प्रस्थापित किया गया है।" मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का यह विचार है कि चूंकि इस संविधान का रूप पूर्णतया स्वतंत्र है, यह अपने संकल्प पर ही प्रवृत्त हो जायेगा और इस कारण इसके पूर्व की अन्य सब अधिनियमितियां अपने आप प्रभावशून्य हो जायेंगी। मैं इस बात से पूर्णतया सहमत हूं। पर संविधानिक परामर्शदाताओं ने हमें यह सम्मति दी थी और इस सम्मति के आधार पर ही हमने "उस सीमा तक जिस तक इसके उपबंध इस संविधान के विरुद्ध नहीं है" शब्द रखे थे।

आरम्भ में मैंने यह सुझाव देने का विचार किया था कि इस विशेष अनुच्छेद के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए हम इसको दो भागों में बांट दें और निम्नलिखित शब्दों के सहित इसे 314(1) कहें "भारत स्वाधीनता अधिनियम, 1947, उस सीमा तक जिस तक इसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध नहीं हैं", और इसके बाद अंक (2) रखें, और उसके बाद निम्नलिखित शब्द रखें "भारत शासन अधिनियम, 1935, भारत (केन्द्रीय सरकार और विधानमंडल) अधिनियम, 1946 और भारत शासन अधिनियम का संशोधन और अनुपूरण करने वाली अन्य सब अधिनियमितियां", और इसके पश्चात् नीचे "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्द रखें जो दोनों (1) और (2) को लागू होंगे। मेरे माननीय मित्र भी अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने जो

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

स्थिति ग्रहण की है उसको ध्यान में रखते हुए आपकी अनुज्ञा से मैं यह सुझाव दूंगा कि सभा इसी रूप में इस अनुच्छेद को पारित करे और हम इस स्थिति पर फिर विचार करेंगे। मेरे माननीय साथी मसौदा समिति के सभापति यहां नहीं हैं। हम इस स्थिति पर फिर विचार करेंगे और यदि आवश्यक हुआ तो "उस सीमा तक जिस तक इसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध हैं" शब्द निकाल दिये जायेंगे। इन शब्दों को हम तृतीय पठन के समय निकाल देंगे।

अत: मैं सुझाव देता हूं कि इस अनुच्छेद को हम वर्तमान रूप में पास करें और यदि कोई परिवर्तन आवश्यक हुआ तो हम विधि संबंधी उचित मंत्रणा प्राप्त करेंगे और मसौदा समिति के विख्यात वकील सदस्य इसकी जांच करेंगे। हम अपने माननीय साथी श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर को डॉ. अम्बेडकर और श्री मुन्शी के विपक्ष में रखेंगे और जहां तक इन शब्दों का सम्बन्ध है संभव है कि हम किसी निश्चय तक पहुंच सकें। मैं यह आशा करता हूं कि......

*__माननीय श्री के. सन्तानम:__ क्या यह अधिक अच्छा नहीं होगा कि विपरीत मार्ग ग्रहण किया जाये?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ मैंने एक मार्ग का सुझाव दिया है। मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम इसके विरुद्ध विचार रखते हैं। यह विनिश्चय करना सभा का काम है कि मेरा विचार ठीक है या विरोधी विचार ठीक है। मैं यह भी सुझाव दूंगा कि इस अनुच्छेद की शब्दावली को अंतिम रूप देने से पूर्व इस विषय के प्रति हम श्री बी.एन. राव के विचारों से भी लाभ उठायें। हम उनको तुरन्त पत्र लिखेंगे और उनसे यह पूछेंगे कि सभा में जो विपरीत विचार प्रकट किये गये हैं उनको ध्यान में रखते हुए क्या वे अपने विचारों का पुनरीक्षण करेंगे। इसलिए मैं यह सुझाव देता हूं कि यह अनुच्छेद इसी रूप में इस सभा द्वारा स्वीकार किया जाये इस शर्त के अधीन कि इस पूरे के पूरे विषय पर पुन:विचार किया जायेगा और विचार करने पर हमें यह विदित हुआ कि मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम द्वारा उठाई गईं तथा मेरे माननीय साथी द्वारा समर्पित आपत्तियों में कोई मान्यता है तो यह अनुच्छेद सभा के समक्ष पुनरीक्षित रूप में प्रस्तुत होगा।

जहां तक "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्दावली पर आपत्ति का सम्बन्ध है मेरे माननीय मित्र श्री कामत यह चाहते हैं कि इसके स्थान में "निरसित हो जायेंगे" शब्द रखे जायें। मैं समझता हूं कि मेरे माननीय साथी श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने उनको ठीक उतर दे दिया है। अत: सभा को "प्रभावशून्य हो जायेंगे" शब्दों को स्वीकार करने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए।

*__श्री एच.वी. कामत:__ एक अलग गणराज्य दिवस तथा अर्द्धरात्रि के उत्सव के बारे में भी मेरे जो दो सुझाव थे उनके बारे में क्या हुआ?

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ वह विषय समुचित प्राधिकारियों के लिये है न कि मसौदा समिति के लिये।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः__ क्या पुनर्विचार के अधीन इस अनुच्छेद को स्वीकार करना ठीक है? यदि ये विवादास्पद विषय तृतीय पठन के लिए छोड़े जायेंगे तो अन्य विषयों के लिए समय नहीं रहेगा। मैं सुझाव देता हूं कि इसे छोड़ दिया जाये। वह अनुच्छेद 307 में सम्मिलित है।

*__अध्यक्षः__ यह भी तो विवादास्पद विषय है। किसी न किसी रूप में आज इसे पारित करना ही है जिससे कि द्वितीय पठन समाप्त हो जाये। यदि पुनरीक्षण के लिए कोई प्रश्न उठेगा तो वह तृतीय पठन के समय कर लिया जायेगा और जैसा कि श्री कृष्णमाचारी ने कहा है वे इस विषय की फिर से जांच करायेंगे और यदि उनको यह विदित हुआ कि कोई संशोधन आवश्यक है तो उस समय हम उसे ले लेंगे। यदि हम उसे छोड़ दें तो उस समय हम कोई नई बात नहीं रख सकेंगे।

*__माननीय श्री के. सन्तानमः__ यदि "उस सीमा तक जिस तक इसके उपबन्ध इस संविधान के विरुद्ध हैं" शब्दों को निकाल दिया जाये तो उसे सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया जायेगा। और यदि ये शब्द आवश्यक समझे जायें तो इनका पुनः पुरःस्थापन करने में कोई रुकावट नहीं हैं इस समय हमसे उसे एक ऐसे रूप में स्वीकार करने के लिए कहा जा रहा है जिसे हम नहीं चाहते हैं और ये कहा जाता है कि वे उस पर बाद में विचार करेंगे। यदि इन शब्दों को आवश्यक समझा जाये तो इनके पुनः पुरःस्थापन करने में मसौदा समिति को कोई कठिनाई नहीं होगी।

*__अध्यक्षः__ यह विषय वास्तव में सभा के विनिश्चय करने का है। मैं दोनों विचारों को पृथक्-पृथक् रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि भाग 18 के स्थान में निम्नलिखित भाग रखा जाये:

'Part XVIII

Short Title, Commencement and Repeals.

313- This Constitution may be called the Constitution of India.'

भाग 18

संक्षिप्त नाम, प्रारम्भ और निरसन।

313–यह संविधान भारत का संविधान नाम से ज्ञात हो सकेगा।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है:

" 'This article and articles 5, 5A, 5AA, 5B, 303, 311, 311A and 312F of this Constitution shall come into force at once, and the remaining provisions thereof shall come into force on the twenty-sixth

[अध्यक्ष]

day of January, 1950, which date is referred to in this Constitution as the date of commencement of this Constitution.'

[यह अनुच्छेद और अनुच्छेद 5, 5क, 5कक, 5ख, 303, 311, 311क और 312च तुरन्त प्रवृत्त होंगे, तथा इस संविधान के अवशिष्ट उपबन्ध 1950 की 26 जनवरी के दिन प्रवृत्त होंगे जो दिन कि इस संविधान में इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि के रूप में निर्दिष्ट किया गया है।]"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 315

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्थापित अनुच्छेद 315 में से 'in so far as its provisions are repugnant to this Constitution' शब्द अपमार्जित किये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** यह बात मान ली गई है कि यह पुनर्परीक्षण के अधीन है।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** जी हां, यह बात मान ली गई है।

***श्री एच.वी. कामतः** मुद्रित सूची में के अपने संशोधन को मैं मसौदा समिति की बुद्धिमानी पर छोड़ता हूं। उस पर मत न लिया जाये।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में प्रस्थापित अनुच्छेद 315 इस संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 315 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 306 क

***अध्यक्षः** हम अनुच्छेद 306क पर आते हैं।

यह सुझाव दिया गया है कि अच्छा हो यदि हम प्रस्तावना को आरम्भ करें। उसे पेश किया जा सकता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** उसको पेश करना आवश्यक नहीं है। प्रस्तावना पर विचार किया जा सकता है।

***अध्यक्षः** प्रस्तावना पेश हो चुकी है। अब मुझे प्रस्तावना पर भिन्न-भिन्न संशोधनों को लेना होगा। मेरे पास संशोधनों की एक बहुत बड़ी संख्या है—उनमें से बहुत से मुद्रित सूची में छपे हुए हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल)**:** मैं समझता हूं कि आप यह विनिश्चित कर चुके हैं कि प्रस्तावना सबके अंत में ली जायेगी। यह किस प्रकार है कि कुछ अनुच्छेदों पर अभी वाद-विवाद नहीं हुआ है और आप प्रस्तावना पर चले गये?

***अध्यक्षः** बहुत से अनुच्छेद तो नहीं रहे हैं।

***मौलाना हसरत मोहानीः** चाहे एक ही अनुच्छेद रहे, जब तक उन अनुच्छेदों को समाप्त नहीं कर लेते तब तक आप प्रस्तावना को नहीं उठा सकते हैं।

***अध्यक्षः** बहुत अच्छा। हम अनुच्छेद 306क को ले लें।

***माननीय श्री सत्यनारायन सिंह** (बिहार : जनरल)**:** श्रीमान, क्या आप प्रस्तावना को ले रहे हैं?

***अध्यक्षः** जी नहीं, मौलाना हसरत मुहानी अन्य सब अनुच्छेदों के समाप्त होने से पूर्व प्रस्तावना के लेने पर आपत्ति करते हैं।

एक और अनुच्छेद है जिसकी सूचना दी गई थी और वह स्थगित रहा है, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा संशोधन संख्या 472 और मैं समझता हूं कि वह एक अन्य उस अनुच्छेद के समान है जिसकी सूचना पं. ठाकुर दास भार्गव ने दी थी।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** श्रीमान, तीन जून को आपके आदेश से वह स्थगित किया गया था।

***अध्यक्षः** तो क्या हम उसे अब ले लें? उनमें से हम किसको लें, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद के को या पंडित ठाकुर दास भार्गव के को?

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** श्रीमान मैं प्रस्ताव पेश करता हूं......

***श्री आर.के. सिधवाः** श्रीमान्, अन्य ऐसे अनुच्छेद और भी हैं जिनकी सूचना अन्य सदस्यों द्वारा दी जा चुकी है।

***अध्यक्षः** मसौदा समिति द्वारा अन्य कोई संशोधन नहीं है।

***श्री आर.के. सिधवाः** पर इन दो सदस्यों के अतिरिक्त अन्य सदस्य भी हो सकते हैं जिनके संशोधन हों।

***अध्यक्षः** नये अनुच्छेद प्रविष्ट करने के लिए संशोधन?

***श्री आर.के. सिधवाः** जी हां।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि उनकी अब आवश्यकता नहीं है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** श्रीमान मैं समझता हूं कि श्री गोपालास्वामी आयंगर अभी आये हैं, इसलिए जब वे अपना प्रस्ताव पेश कर लें उसके बाद मुझे पेश करने की आज्ञा दी जाये।

***अध्यक्षः** ऐसे बहुत से अनुच्छेद हैं जिनकी सूचना दी गई थी और जो छोड़ दिये गये हैं। प्रत्येक दृष्टिकोण से हम समस्त संविधान पर विचार कर चुके हैं, और अब हम नये अनुच्छेद लेना आरम्भ नहीं कर सकते हैं। मैं जानता हूं कि पंडित ठाकुर दास भार्गव का संशोधन स्थगित कर दिया था, पर वह अन्य संशोधनों के अंतर्गत आ जाता है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गवः** श्रीमान, वह किसी संशोधन के अंतर्गत नहीं आता है।

***अध्यक्षः** बहुत अच्छा, अब हम अनुच्छेद 306क को लेते हैं। श्री गोपालास्वामी आयंगार।

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर** (मद्रास : जनरल)**:** श्रीमान, प्रस्ताव पढ़ने से पूर्व मैं मद 379 को पेश न करने की तथा उसके स्थान में मद 450 को पेश करने की अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए निवेदन करूंगा। श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 379 के निर्देशानुसार अनुच्छेद 306 के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जायेः—

'306A. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution,—

(a) the provisions of article 211A of this Constitution shall not apply in relation to the State of Jammu and Kashmir;

(b) the power of Parliament to make laws for the State shall be limited to

(i) those matters in the Union List and the Concurrent List which in consultation with the Government of the State, are declared by the President to correspond to matters specified in the Instrument of Accession governing the accession of the State to the Dominion of India as the matters with respect to which the Dominion Legislature may make laws for the State; and

(ii) such other matters in the said List as, with the concurrence of the Government of the State, the President may by order specify.

Explanation.—For the purposes of this article, the Government of the State means the person for the time being recognised by the Union as the Maharaja of Jammu and Kashmir, acting on the advice of the Council of Ministers.......”

[306क (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी,–

(क) अनुच्छेद 211क के उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य के सम्बन्ध में लागू न होंगे;

(ख) उक्त राज्य के सम्बन्ध में विधि बनाने की संसद की शक्ति–

(1) संघ-सूची और समवर्ती सूची में के जिन विषयों को राज्य की सरकार से परामर्श करके राष्ट्रपति उन विषयों को तत्स्थानी विषय घोषित कर दे जो भारत डोमिनियन में उस राज्य के प्रवेश को शासित करने वाली प्रवेश-लिखित में उल्लिखित ऐसे विषय है जिनके बारे में डोमिनियन-विधान मण्डल विधि बना सकता है उन विषयों तक; तथा

(2) उक्त सूचियों में के जिन अन्य विषयों को उस राज्य को सरकार की सहमति से राष्ट्रपति आदेश द्वारा उल्लिखित करे उन विषयों तक सीमित होगी।

व्याख्या—इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए राज्य की सरकार से अभिप्रेत है वह व्यक्ति जिसे संघ 1948 की मार्च के पांचवें दिन निकाली गई महाराजा की उद्घोषणा के अधीन....]”

श्रीमान, आपकी अनुमति से मैं यहां एक परिवर्तन कर रहा हूं। “नियुक्त” शब्द के स्थान में मैं “तत्समय पदस्थ” शब्द रख रहा हूं, इसके बाद शेष व्याख्या पूर्ववत् है।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरूः** माननीय सदस्य को हम ठीक-ठीक नहीं सुन सके।

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर**—

Explanation.—For the purposes of this article, the Government of the State means the person for the time being recognised by the Union as the Maharaja of Jammu and Kashmir, acting on the advice of the Council of Ministers for the time being in office, under the Maharaja’s proclamation, dated the fifth day of March, 1948.’ ”

[माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर]

[*व्याख्या*—इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए राज्य की सरकार से अभिप्रेत है वह व्यक्ति जिसे संघ 1948 की मार्च के पांचवें दिन निकाली गई महाराजा की उद्घोषणा के अधीन तत्समय पदस्थ मंत्रि-परिषद् की मंत्रणा के अनुसार कार्य करने वाला जम्मू और कश्मीर का महाराजा तत्समय अभिज्ञात करता है;]"

अतः मैंने "नियुक्त" शब्द के स्थान में "तत्समय पदस्थ" शब्द रख दिये हैं।

"(c) the provisions of article 1 of this Constitution shall apply in relation to the State;

(d) such of the other provisions of this Constitution and subject to such exceptions and modifications shall apply in relation to the State as the President may by order specify:

Provided that no such order which relates to the matters specified in the Instrument of Accession of the State aforesaid shall be issued except in consultation with the Government of the State:

Provided further that no such order which relates to matters other than those referred to in the last preceding Proviso shall be issued except with the concurrence of that Government.

(2) If the concurrence of the Government of the State referred to in sub-clause (b) (ii) or in the second proviso to sub-clause (d) of clause (1) was given before the Constituent Assembly for the purpose of framing the Constitution of the State is convened, it shall be placed before such Assembly for such decision as it may take thereon.

(3) Notwithstanding anything in the preceding clauses of this article, the President may, by public notification, declare that this article shall cease to be operative or shall be operative only with such exceptions and modifications and from such date as he may specify:

Provided that the recommendation of the Constituent Assembly of the State shall be necessary before the President issues such a notification."

[(ग) इस संविधान के अनुच्छेद 1 के उपबन्ध उस राज्य के सम्बन्ध में लागू होंगे;

(घ) इस संविधान के उपबन्धों में से ऐसे अन्य उपबन्ध ऐसे अपवादों और रूपभेदों के साथ उस राज्य के बारे में लागू होंगे जैसे कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा उल्लिखित करे:

परन्तु ऐसा कोई आदेश जो राज्य के प्रवेशलिखत में उल्लिखित विषयों से सम्बद्ध हो राज्य की सरकार से परामर्श किये बिना न निकाला जायेगा:

परन्तु यह और भी कि ऐसा कोई आदेश, जो अन्तिम पूर्ववर्ती परन्तुक में निर्दिष्ट विषयों से भिन्न विषयों से सम्बद्ध हो, उस सरकार की सहमति के बिना न निकाला जायेगा।

(2) यदि उस राज्य की सरकार द्वारा खंड (1) के उपखंड (ख) की कंडिका (2) में अथवा उस खंड के उपखंड (घ) के दूसरे परन्तुक में निर्दिष्ट सहमति उस राज्य के लिए संविधान बनाने के प्रयोजन वाली संविधान सभा के बुलाये जाने से पहले, दी जाये तो उसे ऐसी सभा के समक्ष ऐसे विनिश्चय के लिए रखा जायेगा जैसा कि वह उस पर ले।

(3) इस अनुच्छेद के पूर्ववर्ती उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति लोक-अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकेगा कि यह अनुच्छेद ऐसी तारीख से प्रवर्तनहीन, अथवा ऐसे अपवादों और रूपभेदों के सहित ही प्रवर्तन में, होगा जैसे कि वह उल्लिखित करे:

परन्तु ऐसी अधिसूचना को राष्ट्रपति द्वारा निकाले जाने से पहले उस राज्य की संविधान सभा की सिफारिश आवश्यक होगी।]"

श्रीमान, ये विषय, इस विशेष प्रस्ताव का विषय जम्मू और कश्मीर राज्य से सम्बद्ध है। यह सभा इस बात से पूर्णतया परिचित है कि यह राज्य भारत डोमिनियन में प्रवेश कर गया है। प्रवेश होने का इतिहास भी प्रसिद्ध है। प्रवेश 26 अक्तूबर 1947 को हुआ उस समय से राज्य का रंग बिरंगा इतिहास रहा हैं राज्य में अब तक हालत शांतिपूर्ण नहीं है इस प्रवेश का अर्थ यह है कि इस समय वह राज्य फेडरल राज्य अर्थात् भारत डोमिनियन का एकक है। यह डोमिनियन गणराज्य में परिवर्तित की जा रही है जिसका उद्घाटन 26 जनवरी 1950 को होगा। अत: जम्मू और कश्मीर राज्य को भारत गणराज्य का एकक होना चाहिए।

जैसाकि सभा को विदित है डोमिनियन में प्रवेश सदैव एक लिखत द्वारा हुआ है जिस पर राज्य के शासक को हस्ताक्षर करने पड़ते है और जिसे भारत के गवर्नर जनरल द्वारा स्वीकार किया जाता है। इस विषय में यह हो चुका है। जैसा कि सभा को विदित है प्रवेश-लिखत नये संविधान में पिछली बीती हुई बात हो जायेगी। फेडरल गणराज्य में राज्यों का प्रवेश इस रीति से हुआ है कि उनको

[माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर]

गणराज्य के एकक होने के प्रयोजन के लिए प्रवेश करना अथवा कोई प्रवेश-लेख लिखना नहीं पड़ेगा, वरन् उनका स्वयं संविधान में वर्णन किया गया है और जम्मू और कश्मीर को छोड़कर लगभग सब राज्यों का संविधान समस्त भारत के संविधान में निहित भी कर दिया गया हैं अन्य सब राज्य इस प्रकार अपने आपको प्रवेश करने के लिये सहमत हो गये हैं और उपबंधित संविधान को स्वीकार करते हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी:** तो फिर यह अन्तर क्यों?

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर:** यह अन्तर कश्मीर की विशेष दशा के कारण है। यह विशेष राज्य अभी इस प्रकार के प्रवेश के लिए पूर्ण-रूपेण तैयार नहीं है। यहां उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति को यह आशा है कि समय आने पर जम्मू और कश्मीर उसी प्रकार के प्रवेश के लिए पूर्णरूपेण तैयार हो जायेगा जैसे अन्य राज्यों ने प्रवेश किया है (*तालियां*)। अभी इस प्रकार से प्रवेश करना सम्भव नहीं है। ऐसा इस समय संभव क्यों नहीं है इसके अनेक कारण हैं। इस विषय का मैं थोड़ी देर बार फिर निर्देश करूंगा।

अन्य देशी राज्यों या राज्य-संघों के विषय में दो या तीन बातें ऐसी हैं जिनको ध्यान में रखना होगा। उन सब ने नये संविधान में भाग 1 में के राज्यों के लिए बने हुए संविधान को स्वीकार कर लिया है और उन उपबंधों को इस प्रकार अनुकूलित कर लिया गया है जिससे कि वे देशी राज्यों या राज्य-संघों की परिस्थितियों के अनुकूल हो जायें। दूसरी बात यह है कि केन्द्र अर्थात् गणतंत्रात्मक फेडरल केन्द्र को सब संघ तथा समवर्ती विषयों के लिए ऐसे प्रत्येक राज्य या संघ को लागू होने वाली विधियां बनाने के शक्ति होगी। तीसरी बात यह है कि इन राज्यों तथा संघों और केन्द्र के बीच में एक समान सम्बन्ध स्थापित हो चुका है। जैसा कि मैं कह चुका हूं कश्मीर की परिस्थिति विशेष है और उसके लिए विशेष व्यवहार अपेक्षित है।

सभा का मैं अधिक समय नहीं लेना चाहता हूं, पर मैं संक्षेप में यह बताऊंगा कि विशेष परिस्थितियां क्या हैं। सर्वप्रथम यह कि जम्मू और कश्मीर राज्य की सीमाओं के भीतर युद्ध हो रहा है।

इस वर्ष के आरम्भ में युद्ध बन्द करना निश्चित हो चुका था और युद्ध अब तक बन्द है। पर अब भी राज्य की हालत असामान्य तथा अशान्त है। अभी शांति नहीं हुई है। अत: यह आवश्यक है कि इस राज्य के प्रशासन का संचालन तब तक इन असामान्य परिस्थितियों के अनुकूल किया जाये जब तक वैसी शांति स्थापित न हो जैसी कि अन्य राज्यों में है।

राज्य का कुछ भाग अब भी राजद्रोहियों तथा दुश्मनों के हाथ में है।

जम्मू और कश्मीर के सम्बन्ध में हम संयुक्त राष्ट्र संघ में उलझे हुये हैं और अभी यह नहीं कहा जा सकता कि इस उलझन से हमें कब छुटकारा मिलेगा। यह तभी हो सकता है अब कि कश्मीर की समस्या संतोषजनक रूप से निश्चित हो जाये।

और फिर भारत सरकार कुछ बातों में कश्मीर की जनता से स्वयं वचनबद्ध है। उसने स्वयं इस बात के लिए वचन दे रखा है कि राज्य की जनता को स्वयं यह विनिश्चित करने का अवसर दिया जायेगा कि वह गणराज्य के साथ रहना चाहती है या उससे बाहर जाना चाहती है। जनमत द्वारा जनता की इस इच्छा को मालूम करने के लिए भी हम वचन दे चुके हैं बशर्ते कि शान्तिमय वातावरण स्थापित हो जाये और निष्पक्ष जनमत की प्रत्याभूति की जा सके। हमने यह भी मान लिया है कि एक संविधान सभा द्वारा जनता की इच्छा से राज्य का संविधान निश्चित किया जायेगा तथा राज्य पर संघ के क्षेत्राधिकार की सीमा भी निश्चित की जायेगी।

राज्य में जो विधानमंडल प्रजा सभा को मन से ज्ञात था अब नहीं रहा। वह विधानमंडल और संविधान सभा तब तक समवेत् नहीं हो सकते या कार्य नहीं कर सकते जब तक कि राज्य में शांति स्थापित नहीं होती। अत: हमें उस सरकार के साथ व्यवहार करना है जो अपने मंत्रिपरिषद् के रूप में राज्य के सबसे बड़े राजनैतिक दल की सम्मति को प्रतिबिम्बित करती है। जब तक संविधान सभा स्थापित नहीं होती तब तक अन्तर्वर्ती प्रबन्ध ही हो सकता है और वह प्रबन्ध तुरन्त नहीं किया जा सकता है जो अन्य राज्यों में वर्तमान है।

यदि आप इन बातों को ध्यान में रखें जो मैंने कही हैं तो निश्चित परिणाम यह निकलता है कि वर्तमान समय में हम केवल अन्तर्वर्ती प्रणाली की ही स्थापना कर सकते हैं। अनुच्छेद 306क में एक ऐसी प्रणाली की स्थापना का प्रयास है।

अब मैं इस सभा का ध्यान इस अनुच्छेद के उपबंधों की ओर ले जाऊंगा। माननीय सदस्यों को यह याद होगा कि देशी राज्यों का संविधान विशेषकर इस संविधान के अनुच्छेद 211क द्वारा शासित है जो अनुसूची सहित भाग 6क में दिये हुए रूपभेदों के अधीन देशी राज्यों को यह संविधान लागू होता है। जहां तक इस भाग का सम्बन्ध है मैं आपको यह बता चुका हूं कि अन्य राज्यों संबंधी उपबंध अभी जम्मू और कश्मीर राज्य को लागू नहीं किये जा सकते हैं। अत: इस अनुच्छेद के खंड (1)क में यह कहा गया है कि इस संविधान के अनुच्छेद 211क के उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य को लागू नहीं होंगे।

इस अनुच्छेद का दूसरा भाग जम्मू और कश्मीर राज्य पर संसद की विधायी शक्ति से सम्बद्ध है। यह मुख्यतया प्रवेश-लिखत द्वारा शासित है। मोटे रूप से वह विधायी शक्ति प्रतिरक्षा, विदेशी विषय और संचार के तीन विषयों तक सीमित है, पर वास्तव में इन तीन व्यापक श्रेणियों में कुछ ऐसे मद सम्मिलित हैं जो प्रवेश-लिखत में सूचीबद्ध कर दिये गये हैं। मेरा विश्वास है कि उनकी संख्या बीस पच्चीस के लगभग है। इन मदों के विवरण, क्रम संख्या और प्रबन्ध में नये संविधान की सूची 1 और सूची 3 से कुछ परिवर्तन हो गया है। अत: यह आवश्यक है कि प्रवेश-लिखत में दिये हुए मदों को नये संविधान की सूची 1 और 3 की प्रविष्टियों के परिवर्तित नामों के अनुसार कर दिया जाये। इसलिए अनुच्छेद 306क के खंड (1) (ख) में यह कहा गया है कि राज्य की सरकार के परामर्श से राष्ट्रपति द्वारा नये संविधान के नामों के अनुसार मदों को सूचीबद्ध किया जाये।

खंड (ख) (2) प्रवेश-लिखत की सूची में सम्भाव्य परिवर्धनों का निर्देश करता है और इस अनुच्छेद के उपबंधों के अनुसार ये परिवर्धन राज्य की सरकार की

[माननीय श्री एन. गोपलास्वामी आयंगर]

सहमति से किये जा सकेंगे। विचार यह है कि संविधान-सभा के समवेत् होने से पूर्व राज्य और केन्द्र दोनों के हित में यह आवश्यक हो सकता है कि कुछ मदों को, जो प्रवेश-लिखत में नहीं है, लिखत की सूची में समुचित रूप से रख दिया जाये जिससे कि प्रशासन, विधान-निर्माण और कार्यपालिका कार्रवाई आगे बढ़ाई जा सके और संभव है कि संविधान-सभा के समवेत् होने से पूर्व ऐसी आवश्यकता आ पड़े तो इस परिवर्तन के लिए हम जिस प्राधिकार से सम्मति ले सकते हैं वह केवल राज्य की सरकार ही है। यह उपबन्ध कर दिया गया है।

इसके बाद व्याख्या है जिसमें यह परिभाषित किया गया है कि राज्य की सरकार का क्या अर्थ है। जो संविधान इस समय जम्मू और कश्मीर में राज्य प्रवृत्त माना जाता है उसमें तथा इस उद्घोषणा में भी जिसे महाराजा ने 5 मार्च 1948 को निकाला था राज्य की सरकार की परिभाषा की गई है।

जहां तक इस उद्घोषणा के निबन्धन राज्य के संविधान-अधिनियम के उपबन्धों से असंगत हैं वहां तक के माने जायेंगे न कि संविधान-अधिनियम और इसी कारण इस व्याख्या में उद्घोषणा को ही निर्दिष्ट किया गया हैं इस उद्घोषणा के निबन्धों के अधीन महाराजा ने एक अंतर्कालीन लोकप्रिय सरकार का गठन किया था और कहा था:

"मैं एतद्द्वारा निम्नलिखित नियुक्तियां करता हूं:-

(1) मेरा मंत्रिपरिषद् प्रधान मंत्री और उन अन्य मंत्रियों से मिलकर बनेगा जिनकी नियुक्ति प्रधान मंत्री की मंत्रणा पर की जायेगी। मैंने शाही अधिपत्र द्वारा शेखमुहम्मद अबदुल्ला को मार्च 1948 के प्रथम दिन से प्रधान मंत्री के रूप में नियुक्त किया।"

वे आगे और कहते हैं-

"प्रधान मंत्री और अन्य मंत्री मंत्रिमंडल के रूप में प्रकार्य करेंगे और संयुक्त उत्तरदायित्व के सिद्धांत के अनुसार कार्य करेंगे।"

उस समय कोई विधानमंडल नहीं था इसलिए उन्होंने एक प्रधान मंत्री और उसके साथियों के सहित एक प्रकार की उत्तरदायित्व सरकार की स्थापना की जो अपने कार्यों के लिए संयुक्त उत्तरदायित्व को अपनायेंगे और सब सरकारी कार्यों के लिए अपने आपको संयुक्त रूप से उत्तरदायी समझेंगे। इस व्याख्या में यह बात लाई गई है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** व्याख्या में कहा गया है कि महाराजा संघ द्वारा अभिज्ञात होगा बजाय इसके कि राष्ट्रपति द्वारा।

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर:** इसे हम तृतीय पठन के लिए छोड़ दें। जैसाकि आप जानते हैं संविधान अधिनियम की योजना यह है कि राजप्रमुख राष्ट्रपति द्वारा अभिज्ञात होना चाहिये। और इसमें भी यही कहा गया है कि जम्मू और कश्मीर का महाराजा ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जो उस समय अभिज्ञात हो।

मंत्रिपरिषद् के सम्बन्ध में उद्घोषणा में एक प्रणाली निर्धारित है जिसके अधीन यह परिषद् स्थापित की जाने को थी। वह यह है सर्वप्रथम महाराजा प्रधान मंत्री नियुक्त करता है और फिर उसकी मंत्रणा से उसके सहयोगी नियुक्त करता है और जिस रूप में मैंने इस व्याख्या को इस समय संशोधित किया है उसमें कहा गया है कि तत्समय जो भी मंत्रिपरिषद् हो वह महाराजा सहित जिसके प्रति कि वह उत्तरदायी है उन विषयों पर अपनी सहमति या मंत्रणा देगी जो उसको इस अनुच्छेद के अधीन निर्दिष्ट किये गये हैं।

खंड (ग) और (घ) सूची 1 और 3 में सूचीबद्ध विषयों के अतिरिक्त संविधान के अन्य उपबंधों का निर्देश करता है। इन विभिन्न उपबन्धों को कुछ श्रेणियों में विभाजित कर दिया गया है। इस मसौदे के अनुसार प्रथम श्रेणी यह है कि संविधान का अनुच्छेद 1 अपने आप लागू होगा। जैसाकि आप को विदित है इस अनुच्छेद में भारत के राज्य-क्षेत्र का वर्णन है और राज्यक्षेत्रों में यह उन सब राज्यों को सम्मिलित करता है जो भाग 3 में दिये हुए हैं और जम्मू और कश्मीर भाग 3 में दिये हुए राज्यों में से एक राज्य है। संविधान में के अन्य उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य को ऐसे संशोधनों और रूपभेदों के सहित लागू होंगे जैसे उस समय विनिश्चित हों जबकि राष्ट्रपति इस हेतु आदेश निकाले। प्रवेश-लिखित में दिये हुए विषयों के सम्बन्ध में यह आदेश राज्य की सरकार के परामर्श के पश्चात् ही निकाला जा सकता है। अन्य विषयों के सम्बन्ध में सरकार की सहमति लेनी होगी।

यह बात नहीं है और इस मसौदे को अंतिम रूप देने से पूर्व कश्मीर सरकार के सदस्यों से परामर्श करने का मुझे अवसर मिला था तो न उनकी ही यह मंशा है कि संविधान के अन्य उपबन्ध लागू नहीं होंगे। उनका विशेष दृष्टिकोण यह है कि ये उपबन्ध केवल उन मामलों में लागू हों जिनमें वे उपयुक्त प्रकार से लागू हो सकते हैं और केवल ऐसे संशोधनों, तथा रूपभेदों के अधीन जैसे जम्मू और कश्मीर राज्य की विशेष परिस्थितियों के लिए अपेक्षित हों। इस समय मैं इस विशेष प्रश्न पर और अधिक कुछ नहीं कहना चाहता हूं।

इसके बाद हम खंड (2) पर आते हैं। आपको यह याद होगा कि इन खंडों में से अनेक में जम्मू और कश्मीर राज्य की सरकार की सहमति के लिए उपबन्ध हैं। इनका सम्बन्ध विशेषकर उन विषयों से है जो प्रवेश-लिखित में दिये हुए नहीं हैं और कश्मीर की जनता और सरकार को हमने एक यह वचन भी दिया था कि उस संविधान सभा की सम्मति के बिना कोई परिवर्धन न किया जाये जिसको संविधान बनाने के प्रयोजन के लिए राज्य में बुलाया जायेगा। दूसरे शब्दों में हमने जो कुछ वचन दिया है वह यह है कि ये परिवर्धन ऐसे विषय है जो राज्य की संविधान सभा के निश्चय करने के लिए हैं।

आपको यह याद होगा कि इस अनुच्छेद के कुछ खंडों में हमने राज्य की सरकार की सहमति के लिए उपबन्ध किया है। राज्य की सरकार यह समझती है कि राज्य और केन्द्र में जो वचन हो चुके हैं उनको ध्यान में रखते हुए इस सहमति को देने के लिए वह अंतिम प्राधिकारी के रूप में नहीं समझी जा सकती है यद्यपि अन्तर्वर्ती काल में वह सहमति देने के लिए तैयार है, परन्तु यदि वह ऐसी सहमति देती है तो जब संविधान सभा समवेत् हो उस समय यह सहमति

[माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगर]

उसके समक्ष रखी जाये और उन विषयों पर संविधान सभा जो चाहे विनिश्चित करे।

अन्तिम खंड बाद में जो कुछ हो उसका निर्देश करती है। हमने यह कहा है कि अनुच्छेद 211क जम्मू और कश्मीर राज्य को लागू नहीं होगा। पर वह राज्य के संविधान का एक स्थायी रूप नहीं हो सकता है और आशा है कि न वह होगा ही। अतः यह उपबन्ध किया गया है कि जब राज्य की संविधान सभा समवेत् हो चुके और राज्य के संविधान के लिए तथा राज्य पर फेडरल क्षेत्राधिकार की सीमा के सम्बन्ध में अपना विनिश्चय कर चुके तो इस संविधान सभा की सिफारिश पर राष्ट्रपति एक आदेश निकालेंगे कि यह अनुच्छेद 306क या तो प्रवृत्त न रहेगा या केवल ऐसे अपवादों और रूपभेदों के अधीन प्रवृत्त होगा जैसे राष्ट्रपति द्वारा उल्लिखित किये जायें। परन्तु ऐसे किसी आदेश के निकालने से पूर्व संविधान सभा की सिफारिश प्राप्त करने की शर्त पहले पूरी करनी होगी। यह इस अनुच्छेद की पूरी व्याख्या है।

इस अनुच्छेद का यह प्रभाव है कि जम्मू और कश्मीर राज्य जो इस समय भारत का एक भाग है वह भारत का भाग बना रहेगा और भारत के भावी फेडरल गणराज्य का एक एकक होगा और संघविधानमंडल को प्रवेश-लिखित में उल्लिखित विषयों पर और बाद में राज्य की सहमति से परिवर्धित विषयों पर विधियां अधिनियमित करने का क्षेत्राधिकार मिल जायेगा। और इस समय में संविधान सभा बुलाने के प्रयोजन हेतु कदम उठाने पड़ेंगे जो इन विषयों पर विचार करेगी जिनको मैं निर्दिष्ट कर चुका हूं। यह सभा जब इन भिन्न-भिन्न विषयों पर विनिश्चय कर चुकेगी तो वह राष्ट्रपति से सिफारिश करेगी जो या तो अनुच्छेद 306क को निराकृत कर देंगे या वह निदेश देंगे कि वह ऐसे रूपभेदों तथा अपवादों सहित लागू होगा जैसे संविधान सभा सिफारिश करे। श्रीमान, इस अनुच्छेद के प्रभाव का यह संक्षिप्त विवरण है और मैं आशा करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करेगी।

(संशोधन संख्या 459, 460 और 461 पेश नहीं किये गये।)

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): इन खंडों की शब्दावली से मैं सहमत नहीं हूं, पर मैं संशोधनों को पेश नहीं करना चाहता हूं।

(संशोधन संख्या 462 पेश नहीं किया गया।)

अध्यक्षः एक और संशोधन है जिसकी सूचना आज प्रातःकाल मिली थी। वह श्री महावीर त्यागी द्वारा भेजा हुआ संशोधन इस प्रभाव का है "कि सूची 20 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 451 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 306क के खंड (3) के परन्तुक में 'सिफारिश' शब्द के स्थान में 'परामर्श' शब्द रख दिया जाये।"

***श्री महावीर त्यागीः** मैं उसे भी पेश नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** इस अनुच्छेद पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

***मौलाना हसरत मोहानीः** श्रीमान् आरम्भ में ही मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि न तो मैं इन सब रियायतों को अपने मित्र शेख अबदुल्ला को देने के विरोध में हूं और न मैं महाराजा को कश्मीर के शासक के रूप में स्वीकार किये जाने के विरोध में हूं और यदि कश्मीर के महाराजा को और भी अधिक शक्तियां तथा रियायतें मिल जायें तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। पर जिस बात पर मैं आपत्ति करता हूं वह यह है शासकों में आप यह विभेद क्यों करते हैं? भी आयंगर ने स्वयं यहां यह स्वीकार किया है कि कश्मीर राज्य का प्रशासन एक बहुत अच्छे आधार पर नहीं है।

***माननीय श्री एन. गोपालास्वामी आयंगरः** यह गलत बात है। मैंने ऐसा कभी नहीं कहा।

***मौलाना हसरत मोहानीः** और यह भी कहा कि वह बाद में स्वाधीनता प्राप्त करेगा। पर क्या मैं एक प्रश्न पूछ सकता हूं? जब आप कश्मीर के लिए यह सब रियायतें करते हैं तो मैं बड़ोदा राज्य को बम्बई में मिलने के लिए बाध्य करने वाले आपके मनमाने कार्य पर घोर आपत्ति करता हूं। बड़ोदा राज्य का प्रशासन अन्य कई भारतीय प्रान्तों के प्रशासन से अच्छा है। यह दुष्टता है कि बड़ोदा राज्य को बम्बई में मिलाने के लिए आप बड़ोदा महाराज को बाध्य करें और उसको निवृत्ति वेतन देकर दूर करें। कुछ लोग कहते हैं कि उन्होंने स्वयं अपनी इच्छा से राज्य को बम्बई में मिलाना स्वीकार किया है। मैं जानता हूं और यह रहस्य खुल गया है कि उसे इंग्लैंड से बुलाया गया और उसकी इच्छा के विरुद्ध विवश किया गया....

***अध्यक्षः** मौलाना साहब, यहां हमारा महाराजा बड़ोदा से कोई सम्बन्ध नहीं है।

***मौलाना हसरत मोहानीः** बहुत अच्छा, मैं इसके किसी विवरण में नहीं जाऊंगा। पर मैं यह कहूंगा कि मैं ऐसी बातों का विरोध करता हूं। यदि आप कश्मीर के महाराजा को ये रियायतें मंजूर करते हैं तो बड़ोदा को बम्बई में मिलाने के अपने विनिश्चय को भी आप वापस करें और ये तथा और भी अधिक रियायतें बड़ोदा महाराज को दें।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 379 के निर्देशानुसार अनुच्छेद 306 के पश्चात् निम्नलिखित नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जायेः—

'306A. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution,—

(a) the provisions of article 211A of this Constitution shall not apply in relation to the State of Jammu and Kashmir;

[अध्यक्ष]

(b) the power of Parliament to make laws for the State shall be limited to

  (i) those matters in the Union List and the Concurrent List which, in consultation with the Government of the State, are declared by the President to correspond to matters specified in the Instrument of Accession governing the accession of the State to the Dominion of India are the matters with respect to which the Dominion Legislature may make laws for the State; and

  (ii) such other matters in the said Lists as, with the concurrence of the Government of the State, the President may by order specify.

Explanation.— For the purposes of this article, the Government of the State means the person for the time being recognised by the Union as the Maharaja of Jammu and Kashmir, acting on the advice of the Council of Ministers, for the time being in office, under the Maharajas Proclamation, dated the fifth day of March, 1948.

(c) the provisions of article 1 of this Constitution shall apply in relation to the State;

(d) such of the other provisions of this Constitution and subject to such exceptions and modifications shall apply in relation to the State as the President may by order specify:

Provided that no such order which relates to the matters specified in the instrument of accession of the State aforesaid shall be issued except in consultation with the Governmnet of the State:

Provided further that no such order which relates to matters other than those referred to in the last preceding proviso shall be issued except with the concurrence of that Government.

(2) If the concurrence of the Government of the State referred to in sub-clause (b) (ii) or in the second proviso to sub-clause (d) of clause (1) was given before the Constituent Assembly for the purpose of framing the Constitution of the State is convened, it shall be placed before such Assembly for such decision as it may take thereon.

(3) Notwithstanding anything in the preceding clauses of this article, the President may, by public notification, declare that this article shall cease to be operative or shall be operative only with such exceptions and modifications and from such date as he may specify:

Provided that the recommendation of the Constituent Assembly of the State shall be necessary before the President issues such a notification.'

[306क (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी,—

(क) अनुच्छेद 211क के उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य के सम्बन्ध में लागू न होंगे;

(ख) उक्त राज्य के सम्बन्ध में विधि बनाने की संसद् की शक्ति–

(i) संघ-सूची और समवर्ती सूची में के जिन विषयों को राज्य की सरकार से परामर्श करके राष्ट्रपति उन विषयों को तत्स्थानी विषय घोषित कर दे जो भारत डोमिनियन में उस राज्य के प्रवेश को शासित करने वाली प्रवेश-लिखित में उल्लिखित ऐसे विषय हैं जिनके बारे में डोमिनियन विधान-मण्डल विधि बना सकता है उन विषयों तक; तथा

(ii) उक्त सूचियों में के जिन अन्य विषयों को उसे राज्य की सरकार की सहमति से राष्ट्रपति आदेश द्वारा उल्लिखित करे उन विषयों तक सीमित होगी।

व्याख्या–इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए राज्य की सरकार से अभिप्रेत है वह व्यक्ति जिसे संघ 1948 की मार्च के पांचवें दिन निकाली गई महाराजा की उद्घोषणा के अधीन तत्समय पदस्थ मंत्रिपरिषद की मंत्रणा के अनुसार कार्य करने वाला जम्मू और कश्मीर का महाराजा तत्समय अभिज्ञात करता है;

[अध्यक्ष]

(ग) इस संविधान के अनुच्छेद 1 के उपबन्ध उस राज्य के सम्बन्ध में लागू होंगे;

(घ) इस संविधान के उपबन्धों में से ऐसे अन्य उपबन्ध ऐसे अपवादों और रूपभेदों के साथ उस राज्य के बारे में लागू होंगे जैसे कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा उल्लिखित करे:

परन्तु ऐसा कोई आदेश जो राज्य के प्रवेश लिखित में उल्लिखित विषयों से सम्बद्ध हो राज्य की सरकार से परामर्श किये बिना न निकाला जायेगा:

परन्तु यह और भी कि ऐसा कोई आदेश, जो अन्तिम पूर्ववर्ती परन्तुक में निर्दिष्ट विषयों से भिन्न विषयों से सम्बन्ध हो, उस सरकार की सहमति के बिना न निकाला जायेगा।

(2) यदि उस राज्य की सरकार द्वारा खंड (1) के उपखंड (ख) की कंडिका (2) में अथवा उस खंड के उपखंड (3) के दूसरे परन्तुक में निर्दिष्ट सहमति, उस राज्य के लिये संविधान बनाने के प्रयोजन वाली संविधान सभा के बुलाये जाने से पहले, दी जाये तो उसे ऐसी सभा के समक्ष ऐसे विनिश्चय के लिये रखा जायेगा जैसा कि वह उस पर ले।

(3) इस अनुच्छेद के पूर्ववर्ती उपबन्धों में किसी बात के होते हुये भी राष्ट्रपति लोक-अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकेगा कि यह अनुच्छेद ऐसी तारीख से प्रवर्तनहीन, अथवा ऐसे अपवादों और रूपभेदों के सहित ही प्रवर्तन में, होगा जैसे कि वह उल्लिखित करे:

परन्तु ऐसी अधिसूचना को राष्ट्रपति द्वारा निकाले जाने से पहले उस राज्य की संविधान सभा की सिफारिश आवश्यक होगी।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 306क संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्ष:** मसौदा समिति से हमें ये ही सब संशोधन प्राप्त हुये थे। संशोधनों की सूची में कुछ संशोधन मुद्रित हैं और शायद कुछ अन्य संशोधन संशोधनों की उन अनेक सूचियों में की एकाध सूचियों में हैं जो बाद में घुमाई गई थीं। प्रश्न यह है कि इन संशोधनों में से हम किसी को लें या नहीं। हमने एक-एक अनुच्छेद को लेकर, एक एक खंड को लेकर विस्तारपूर्वक समस्त संविधान पर विचार कर लिया है और मैं नहीं समझता हूं कि नये संशोधन प्रस्तुत करके इस समय हम उन बातों में से किसी बात को फिर विचार के लिए रख सकते हैं। पंडित ठाकुर दास भार्गव का एक संशोधन संख्या 472 पर है जिस पर श्री नज़ीरुद्दीन अहमद ने एक संशोधन की सूचना दी है और यह पंचम सप्ताह की सूची 1 में सम्मिलित कर लिया गया था। वह स्वयं अपने रूप में संशोधन नहीं था वह एक बहुत लम्बा अनुच्छेद था और उसका सम्बन्ध उस अनुच्छेद की केवल एक कंडिका

से था। मैं समझता हूं कि यही विषय अनुच्छेद 109 के अंतर्गत आ जाता है जिसे हम पारित कर चुके हैं। अनुच्छेद 109 सर्वोच्च न्यायालय को मूल क्षेत्राधिकार देता है और अनुच्छेद 121 यह निर्धारित करता है कि सर्वोच्च न्यायालय प्रक्रिया के अपने नियम रखेगा, और अनुच्छेद उन उपचारों के सम्बन्ध में है जो न्यायालय में मूलाधिकार प्रवृत्त कराने के लिए पक्ष को दिये गये हैं। मैं समझता हूं कि इन तीन अनुच्छेदों में वे सब बातें आ जाती हैं जो श्री नज़ीरुद्दीन अहमद और पंडित भार्गव के संशोधनों में हैं। अत: पंडित भार्गव के संशोधन को मैं नियम विरुद्ध ठहराता हूं।

अब हम प्रस्तावना को लेंगे।

एक माननीय सदस्य: क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि जब हम नवम्बर में तृतीय पठन के लिये समवेत् हों उस समय प्रस्तावना ली जाये? तब तक मसौदा समिति भी सभा को अपना प्रतिवेदन भेज चुकेगी।

मौलाना हसरत मोहानी: मैं इस बात का विरोध करता हूं क्योंकि जब तक आप आज प्रस्तावना पारित नहीं करेंगे तब तक आप द्वितीय पठन पर कोई प्रतिवेदन किस प्रकार प्रस्तुत कर सकेंगे।

श्री के.एम. मुंशी: अपने जीवन भर में इस बार मैं मौलाना साहब का समर्थन करता हूं।

अध्यक्ष: मैं समझता हूं कि हमें प्रस्तावना आज पारित कर देनी चाहिये। द्वितीय पठन में संविधान को सम्पूर्ण रूप में पारित करना है और प्रस्तावना संविधान का अंग है। अत: प्रस्तावना को स्थगित नहीं रखा जा सकता हैं यदि आवश्यक होगा और यदि पन्द्रह मिनट में हम इसे समाप्त नहीं कर पायेंगे, जो एक बजने में अभी बाकी है, तो हम दोपहर बाद बैठेंगे।

मैं देखता हूं कि मुद्रित सूची के अंक 1 में प्रस्तावना पर बहुत से संशोधन हैं। इनमें से बहुत से उन विषयों को प्रस्तुत करते हैं जो वास्तव में प्रस्तावना के अनुकूल नहीं हैं वरन् प्रस्तावना में पुर:स्थापन स्वरूप हैं। पर मैं देखता हूं कि मौलाना हसरत मुहानी का संशोधन सारयुक्त है और उसमें पूर्णतया नये विचार प्रस्तुत करने का प्रयास है। अत: यदि वे चाहते हैं तो मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे सर्वप्रथम अपना संशोधन पेश करें।

मौलाना हसरत मोहानी: मेरे पास तीन संशोधन हैं। मैं उनको पृथक्-पृथक् पेश करना चाहता हूं न कि इकट्ठे मिलाकर एक।

अध्यक्ष: आप सर्वप्रथम किसको पेश करना चाहते हैं?

मौलाना हसरत मोहानी: सर्वप्रथम मैं 453 को पेश करना चाहता हूं। वह इस प्रकार है:

> "कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 8 के स्थान में निम्नलिखित संशोधन रखा जाये:
>
> "कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:–
>
> 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Federal Republic.'

[मौलाना हसरत मोहानी]

अथवा विकल्पत:

‘We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Independent Republic.’ ”

इन संशोधनों के प्रस्थापित करने के मैं अभी अपने कारण बताऊंगा। इस बात को ध्यान में रखकर कि सार्वजनिक स्मरण शक्ति लोक-प्रसिद्ध रूप में अल्प-कालीन है सर्वप्रथम मैं सदस्यों को एक बहुत ही मौलिक तथ्य की याद दिलाना चाहता हूं जो वर्तमान संविधान तथा डॉ. अम्बेडकर द्वारा तैयार किये गये मसौदे में ले आया गया है। इस सभा की कार्रवाई की सरकारी रिपोर्ट के अंक 4 संख्या 6—सूची 738, भाग 1: फेडरल राज्य क्षेत्र तथा क्षेत्राधिकार का मैं निर्देश करता हूं। “राज्य-क्षेत्र तथा फेडरेशन का नाम” शीर्षक के अन्तर्गत यह कहा गया है कि जो फेडरेशन स्थापित किया जा रहा है वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न स्वाधीन गणराज्य होगा। अत: यह स्पष्ट निर्धारित कर दिया गया है कि हम केवल फेडरेशन रखेंगे और वह भारतीय गणराज्यों को फेडरेशन होगा। पर मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर ने मैं समझता हूं कि बड़ी चतुराई से ‘फेडरल’ शब्द को बिल्कुल छोड़ दिया तथा “स्वाधीन” शब्द को भी छोड़ दिया और “लोकतंत्रात्मक राज्य” कहा है। अभी उस दिन जब मैंने भाषण दिया था मैंने इस बात का विरोध किया था।

***श्री देशबन्धु गुप्त** (दिल्ली): एक औचित्य सम्बन्धी प्रश्न है: यदि ये संशोधन पारित हो जाते हैं तो इनका प्रभाव यह होगा कि समस्त संविधान को फिर से बनाना पड़ेगा।

***मौलाना हसरत मोहानी:** इसके लिए कौन उत्तरदायी होगा?

***श्री देशबन्धु गुप्त:** इस समय ऐसा संशोधन पेश करना नियम विरुद्ध है अत: इसको पेश नहीं होने देना चाहिये।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं यह निवेदन करूंगा कि आरम्भ में ही आपको रोकने का मैंने भरसक प्रयत्न किया था। मैंने कहा था कि यदि आप भारत की तकदीर का फैसला करना चाहते हैं तो पहले आपको यह निश्चित रूप से जान लेना चाहिये और इस बात की घोषणा कर देनी चाहिये कि आप किस प्रकार के संविधान का निर्माण कर रहे हैं। पर मेरी बात नियम विरुद्ध ठहराई गई। हां, मैंने यह अवश्य कहा था कि यदि आप मेरा सुझाव स्वीकार नहीं करते हैं तो न करिये पर आपको गुर्राना नहीं चाहिये, अब जब कि प्रस्तावना प्रस्तुत की जा रही है तो क्या मैं कोई आपत्ति न उठाऊं? तब तो यदि आप ये कहें कि चूंकि हमने अमुक-अमुक बातें पारित कर दी हैं तो मैं आपकी बात नहीं सुनूंगा.....

***श्री देशबन्धु गुप्त:** क्या मैं आपका आदेश प्राप्त कर सकता हूं?

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं कहता हूं कि आरम्भ में इस बात पर वाद-विवाद करने में मुझे रोकने का उत्तरदायित्व आप पर है और इस कारण यदि आपको

सारा संविधान फिर से बनाना पड़े तो कोई बात नहीं है। मैं इस बात पर आग्रह करूंगा। प्रस्तावना पर कोई भी संशोधन प्रस्थापित करने का मुझे पूर्ण अधिकार है, और यदि आपको यह विदित हो कि आप कोई बिल्कुल ही भिन्न बात पहले ही पारित कर चुके हैं तो मैं आपको यह कह दूं कि प्रस्तावना आपके गलत विनिश्चयों के अधीन नहीं होगी और आपको उन विनिश्चयों को ही सही करना होगा चाहे इस कार्य में एक या दो वर्ष लगें। यह कोई चिन्ता की बात नहीं है। परन्तु जब तक आप उन स्वीकृत सिद्धान्तों के अनुसार नहीं चलते जो समस्त संसार में प्रचलित हैं तब तक मैं समझता हूं कि इसको इतनी असावधानीपूर्वक पारित करना हास्यास्पद होगा।

***श्री देशबन्धु गुप्त:** क्या मैं अध्यक्ष का ध्यान उस औचित्य प्रश्न की ओर आकर्षित कर सकता हूं जिस मैंने पेश किया है? मैं उसके प्रति गम्भीर हूं।

***अध्यक्ष:** वे संशोधन संख्या 453 पेश कर रहे हैं जो इस प्रकार है:

> "कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute Inda into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:
>
> 'We, the people of India, 'having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Federal Republic.'
>
> या
>
> 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Independent Republic.'"

जहां तक संशोधन का सम्बन्ध है मुझे इसमें ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती है जो नियम विरुद्ध हो।

आप केवल इसी संशोधन को ले रहे हैं, मौलाना साहब?

***मौलाना हसरत मोहानी:** जी नहीं। समय पर मैं दूसरे को प्रस्थापित करूंगा।

***अध्यक्ष:** अभी तो आप इसे ही पेश कर रहे हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी:** जी हां, पर मैं दूसरे संशोधन को छोड़ नहीं रहा हूं।

***अध्यक्ष:** इस समय तो आप किसी अन्य संशोधन को नहीं ले रहे हैं। आपने संशोधन संख्या 453 पेश किया है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** जी हां, यह और एक और।

***अध्यक्ष:** कौन-सा और? हमारे पास केवल एक संशोधन है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** इसके विकल्प में दूसरा।

***अध्यक्ष:** उससे कोई अन्तर नहीं आता।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया:** आपने पहले यह कहा था कि यदि वैकल्पिक संशोधन हैं और उनमें से एक पेश हो चुका है तो दूसरा रोक दिया जायेगा।

***अध्यक्ष:** दोनों संशोधनों में मुझे कोई अधिक अन्तर नहीं दिखाई देता है न्यूनाधिक रूप से वे एक समान हैं। अत: चाहे वह स्वीकार किया जाये या वह, इसमें कोई बात नहीं है।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया:** अत: यदि वे दोनों एक समान हैं तो केवल एह ही स्वीकार किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** जिसको वे पेश करेंगे उस पर मैं सभा का मत लूंगा।

***मौलाना हसरत मोहानी:** अत: मैंने सरकारी रिपोर्ट पढ़ कर सुना दी है। मैं अंक 4...

***अध्यक्ष:** प्रस्तावना को अन्त में रखने का उद्देश्य यह है कि जिस रूप में विधेयक स्वीकार किया जाता है प्रस्तावना उसके अनुरूप हो।

***मौलाना हसरत मोहानी:** जब मैंने आरम्भ में ही प्रस्तावना पर वाद-विवाद करना चाहा था तो आपने कहा था कि हम इस पर वाद-विवाद नहीं होने देंगे। अत: मैंने यह कहा था कि मुझे इस बात की शंका है कि जब आप अपनी इच्छा के अनुसार अन्य सब अनुच्छेदों को पारित कर लेंगे और यदि कोई अन्य व्यक्ति प्रस्तावना के बारे में कोई बात प्रस्थापित करेगा तो आप कह देंगे कि जो कुछ हम पारित कर चुके हैं उससे पीछे हटना अब सम्भव नहीं है; वह अब एक निश्चित तथ्य है और उस समय आप मुझे नियम विरुद्ध ठहरायेंगे। आपने मुझे वचन दिया था कि आप ऐसा नहीं करेंगे और ये बात मेरे पास छपी हुई रिपोर्ट में है।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया:** आपने तो औचित्य प्रश्न को नहीं माना, पर वे उसे मानते हैं, इसलिए उन्हें अब नियम विरुद्ध ठहराया जाये।

***मौलाना हसरत मोहानी:** औचित्य प्रश्न क्या है?

***अध्यक्ष:** मौलाना साहब, आप इस बात का निर्देश कर रहे हैं जिसका मैंने वचन दिया था। मैं उसे जानना चाहता हूं कि वह क्या वचन था।

***मौलाना हसरत मोहानी:** एक बार पिछली दफा आपने जो कुछ कहा था उसे मैं आपको पढ़ कर सुनाऊंगा। डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं एक बार ऐसा कहा था, वह भी यहां मेरे पास है: मैं अंक 7 संख्या 6 पृष्ठ 418 का निर्देश करता हूं जहां वे यह कहते हैं कि इस समय मेरे संशोधन पर वे आपत्ति नहीं करेंगे।

आपके सम्बन्ध में मैं अंक 4 संख्या 6 पृष्ठ 733 का निर्देश करता हूं। यह वह अवसर था जब प्रस्थापित संघ संविधान की रिपोर्ट पंडित नेहरू द्वारा प्रस्तुत की जा रही थी। उस समय मैंने एक आपत्ति उठाई थी और आपने यह कहा था "इस समय आप उसके मार्ग में रुकावट न डालें।" आपने कहा था कि इस आपत्ति को मैं बाद में उठा सकता हूं। "जैसाकि मैं समझता हूं मौलाना का प्रश्न यह है कि इस समय मैं उनको यह वचन दे दूं कि उनका संशोधन नियम विरुद्ध

नहीं ठहराया जायेगा।" इसके बाद आपने कहा था "इससे अधिक मैं इस समय और कुछ नहीं कह सकता हू।" "मैंने कुछ ऐसा वचन दे दिया है जो मौलाना साहब चाहते हैं। मैं यह मानता हूं कि सभा यह चाहती है कि हम इस रिपोर्ट पर विचार करें।" मैने आपत्ति की थी और कहा था कि मैं इस रिपोर्ट पर विचार नहीं होने दूंगा और तब आपने यह कहा था कि मैं अपनी आपत्ति बाद में रख सकता हूं और इस समय मैं पंडित जवाहरलाल नेहरू को वह रिपोर्ट लेने दूं, और इस विचार से ही उस समय मैंने यह सब बातें नहीं कहीं।

*__अध्यक्ष:__ वचन देना तो दूर रहा मैंने निश्चित रूप से वचन देना अस्वीकार किया। उस वाद-विवाद के विषय-संगत अंश को मैं पढ़कर सुनाता हूं। "जैसाकि मैं समझता हूं मौलाना का प्रश्न यह है कि इस समय मैं उनको यह वचन दे दूं कि उनका संशोधन नियम विरुद्ध नहीं ठहराया जायेगा। यह स्पष्ट है कि जब तक विषय प्रस्तुत न हो तब तक मैं किसी सदस्य को कोई वचन नहीं दे सकता हूं। पर आप सबने यह देखा होगा कि चाहे संशोधन समय बीत जाने पर आयें फिर भी उन संशोधनों को पेश करने देने में मैं बहुत उदार हूं। जब तक कोई परिभाषिक आधार न हो तब तक मुझे ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता कि उनका संशोधन क्यों नियम विरुद्ध ठहराया जाये। इससे अधिक मैं इस समय और कुछ नहीं कह सकता हूं।"

*__मौलाना हसरत मोहानी:__ मुझे कुछ वचन दिया गया था। बहुत अच्छा, श्रीमान्। उस रिपोर्ट के अनुसार विधान-निर्माण के लिए नियुक्त की गई समिति को यह स्पष्ट निदेश दिया गया था कि संविधान का निर्माण इस सभा द्वारा पारित लक्ष्यमूलक संकल्प के अनुसार होना चाहिए। यह बहुत ही आश्चर्यजनक है कि लक्ष्यमूलक संकल्प के अनुसरण करने की अपेक्षा डॉ. अम्बेडकर जो चाहते हैं सो पार कर रहे हैं। वे चाहते हैं कि लक्ष्यमूलक संकल्प उनके त्रुटिपूर्ण विनिश्चय के अनुरूप हो। उन्होंने व्यवस्था उलट दी है और यही बात है जिसका मैं घोर विरोध करता हूं क्योंकि इसके कारण संविधान का प्रकार ही बदल गया। जैसा मैंने यहां बताया था लक्ष्यमूलक संकल्प का तथा उस रिपोर्ट का क्या उद्देश्य था। इनमें कहा गया था कि वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न स्वाधीन गणराज्यों का फेडरेशन होगा। गणराज्य के बहुवचन रूप पर ध्यान दीजिये। और अब उन्होंने पूरी की पूरी बात उलट दी। उन्होंने 'फेडरेशन' शब्द को छोड़ दिया; उन्होंने 'गणराज्य' शब्द को छोड़ दिया और किसी अन्य उद्देश्य के लिए जिसे मैं इस समय बताना नहीं चाहता हूं उन्होंने 'स्वाधीन' शब्द को भी छोड़ दिया। मैं इस बात को किसी भावी अवसर के लिए रक्षित रखता हूं और जब समय आयेगा मैं उनके सामने यह बात कहूंगा। इस समय मैं केवल यही कहता हूं कि लक्ष्यमूलक संकल्प के अनुसार तथा पंडित जवाहर लाल नेहरू के अनुदेशों के अनुसार वे कम से कम इस अनुच्छेद को इस रूप में बदल दें कि जो कुछ नेहरू ने सुझाव दिया है वह डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्थापित अनुच्छेद में सम्मिलित कर लिया जाये। सच तो यह है कि उन्होंने यह बात स्वीकार कर ली थी; और अब से 'स्वाधीन' शब्द को निकालते हैं। 'स्वाधीन' शब्द के स्थान में मैं 'फेडरल' शब्द रखना चाहता हूं अर्थात् एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न फेडरल गणराज्य; यह कोई बात नहीं है कि वह गणराज्य नहीं है जब मैं एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न फेडरल गणराज्य कहता हूं तो उसका अर्थ एक गणराज्य से है और उसके एकक राज्य भी गणराज्य होंगे या वह एक फेडरेशन होगा, कम से कम वह नहीं हो जो वे चाहते है। गणराज्य या कोई फेडरेशन रखने

[मौलाना हसरत मोहानी]

की अपेक्षा वे केवल राज्यों का संघ रखना चाहते हैं और 'संघ' को भी फेडरेशन के अर्थ में रखना चाहते हैं। मैं कहता हूं 'नहीं', वे इस शब्द को इस कारण भी ग्रहण करते हैं कि इसमें एक प्रकार की एकात्मक प्रणाली का भाव निहित है, पर उन्होंने जैसा चाहा वैसा उलट दिया है और इस संविधान के सम्पूर्ण रूप को बदल दिया है हमारा यह आशय है और लक्ष्यमूलक संकल्प का भी यह आशय है कि भारत स्वाधीन गणराज्यों का फेडरेशन बनाया जायेगा पर वे कहते हैं "नहीं"। भारत का स्वरूप बदल जायेगा और ब्रिटिश साम्राज्य के स्थान में आप एक भारतीय साम्राज्य स्थापित करेंगे जिसमें केवल वे राज्य होंगे जिनको कोई शक्ति नहीं होगी और राज्यों में आपने प्रान्तों को भी उनका स्तर गिराकर अन्तर्विष्ट कर लिया है। पहले मैंने यह सोचा था कि इस प्रकार अन्तर्विष्ट करने से राज्यों को लाभ होगा पर आपने तो प्रान्तों के स्तर को भी गिरा दिया और आपने उनको सब बातों से वंचित कर दिया और यहां तक कि प्रान्तीय स्वायत्तता भी छीन ली गई और वास्तव में प्रान्तों को आपने कुछ भी नहीं दिया है। आपने यह निश्चय किया था कि आप प्रान्तों में निर्वाचित राज्यपाल रखेंगे। मैंने 'राज्यपाल' शब्द पर आरम्भ में ही आपत्ति की थी और उस समय पंडित नेहरू ने कहा था "मौलाना को मैं सन्तुष्ट नहीं कर सकता हूं; उनके विचार बड़ी गहराई तक जाते हैं। वे 'राज्यपाल' शब्द से भयभीत हैं।" मैंने सुझाव दिया था कि प्रान्तों के लिए भी 'राज्यपाल' शब्द के स्थान में हम 'राष्ट्रपति' शब्द रखें। उन्होंने कहा कि वे यह नहीं करेंगे। उस समय मैंने इस विषय पर जोर नहीं दिया था, पर अब डॉ. अम्बेडकर द्वारा की गई व्याख्याओं को सुनकर मैं देखता हूं कि उन्होंने सारी की सारी बात उलट दी और उन्होंने रहस्य प्रकट कर दिया। वे साफ कह चुके हैं: "भारत अर्थात् इंडिया क्या होगा? वह राज्यों का संघ होगा।" इसका क्या अर्थ है? आपने 'गणराज्य' शब्द को छोड़ दिया; आपने 'फेडरेशन' शब्द को छोड़ दिया; आपने 'स्वाधीन' शब्द को छोड़ दिया और मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर कहते हैं "इससे क्या फर्क पड़ता है? जब हम गणराज्य कहते हैं तो कोई फर्क नहीं आता है। यह अनावश्यक है चाहे आप उसे स्वाधीन कहें या न कहें।" मैं कहता हूं कि यदि यह अनावश्यक है तो वे 'स्वाधीन' शब्द को 'लोकतंत्रात्मक' शब्द में बदलने के लिए क्यों इतने चिन्तित हैं? परदे की आड़ में कोई न कोई शिकार खेली जा रही है और एक बार पहले मैंने यह कहा था कि जब पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपने विचार बदल दिये और ब्रिटिश कामनवेल्थ से किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध रखने के लिए इंग्लैंड गये तब उन्होंने यह सोचा था कि हम एक गणराज्य बनायेंगे और वह 'स्वाधीन' भी होगा। अत: उन्होंने अपने लिये एक मार्ग खोज निकालना चाहा क्योंकि अब वे यह कह सकते हैं "हमारा राज्य एक गणराज्य है ही।" हमारा राज्य एक स्वाधीन गणराज्य नहीं है। हमारा किस प्रकार का गणराज्य है? एक इस प्रकार का गणराज्य जिसे इन यूरोप के देशों में इन साम्राज्यवादियों ने, जो इस वाग्जाल के प्रसिद्ध रचयिता हैं, नये पद गढ़े हैं: और ये नये पद क्या हैं? हालैंड ने एक "गणतंत्रात्मक डोमिनियन" पर की खोज की है और फ्रांस ने एक नया पद वीटनाम गढ़ा है जिसका अर्थ है कि वह औपनिवेशिक गणराज्य होगा। हम यह मानते है कि वीटनाम एक गणराज्य है और हालैंड यह कहता है कि उसने हिन्देशिया को एक गणराज्य के रूप में स्वीकार कर लिया है पर हिन्देशिया कहता है कि वह एक गणतन्त्रात्मक डोमिनियन है। डोमिनियन की अपेक्षा

वह एक साम्राज्यशाही राज्य में अन्तर्विष्ट किया जायेगा और ये धोखा हालैण्ड तथा फ्रांस ने किया है और क्या आप भी यही प्रस्थापना करते हैं कि आप भी उसी धोखे का अधिनियम यहां बनायेंगे? आपने यह कहा था कि हमने गणराज्य शब्द रखा है। आपने फेडरेशन शब्द को छोड़ दिया है। आप यह भी कहेंगे कि जवाहरलाल नेहरू ने ब्रिटिश कामनवेल्थ में रहना स्वीकार कर लिया है क्योंकि वे यह स्वीकार करते हैं कि हम स्वाधीन हैं। पर यह किस प्रकार की स्वाधीनता है? वह एक गणतन्त्रात्मक डोमिनियन राज्य होगा। क्योंकि यदि वह वास्तविक गणराज्य है और गणतन्त्रात्मक डोमिनियन नहीं है तो किसी विषय में भी आपका बादशाह या सम्राट से कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं रहेगा। जब एक बार पंडित जवाहरलाल ने ब्रिटिश कामनवेल्थ में रहना स्वीकार कर लिया तो मैं समझता हूं कि उन्होंने भारत को गणराज्य के रूप में पुकारे जाने के अपने अधिकार को खो दिया। यह गणराज्य नहीं है। यदि वह गणराज्य है तो जैसा मैंने अभी कहा था वह गणतंत्रात्मक डोमिनियन है।

अत: मेरी वैकल्पिक प्रस्थापना यह है। या तो "लोकतंत्रात्मक" शब्द के स्थान में "फेडरल" शब्द पुर:स्थापित करिये। इससे कुछ अर्थ स्पष्ट हो जायेगा। यदि आप 'फेडरेशन' शब्द पुर:स्थापित नहीं करना चाहते हैं, यदि आप इससे भयभीत हैं तो जाने दीजिये, मैं डॉक्टर अम्बेडकर के साथ एक रियायत कर दूंगा और आपने जो लक्ष्यमूलक संकल्प यहां दिया हुआ है उसके मूल शब्दों को अपनाइये। वह एक "स्वाधीन सम्पूर्ण प्रभुत्व गणराज्य" होगा। मैं यह कहता हूं कि इस "लोकतन्त्रात्मक" शब्द को छोड़िये और लक्ष्यमूलक संकल्प में के मूल शब्दों को रखिये। मैं आगे बढ़ कर यह कहता हूं कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जो कुछ किया है वह एक पूर्णतया गलत नीति है।

***अध्यक्ष:** क्या कोई अन्य व्यक्ति इस संशोधन के बारे में कुछ कहना चाहता है? मैं इस पर मत लूंगा। प्रथम विकल्प।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:–

'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Federal Republic.'"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** मैं दूसरे विकल्प पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:–

'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Independent Republic.'"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अन्य बातों को, जब हम छः बजे समवेत् होंगे, लेंगे।

इसके पश्चात् सभा दोपहर बाद के भोजन के लिए सायंकाल के छह बजे तक स्थगित हुई।

सभा दोपहर बाद के भोजन के पश्चात् सायंकाल के छह बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में पुनः समवेत् हुई।

***अध्यक्ष:** अब हमें अन्य संशोधनों को लेना है। एक मौलाना हसरत मुहानी के नाम में संख्या 9 पर है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** अध्यक्ष महोदय, में प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Union of Indian Socialistic Republics to be called U.I.S.R. on the lines of U.S.S.R.' रख दिये जायें।"

***श्री देशबन्धु गुप्त:** क्या मैं पुनः औचित्य प्रश्न उठा सकता हूं और यह निवेदन कर सकता हूं कि यह संशोधन व्यवस्था के विरुद्ध है क्योंकि यह उस संविधान का विरोध करता है जिसे हम पार कर चुके हैं।

***अध्यक्ष:** यह यह औचित्य प्रश्न उठा दिया गया है कि वह सारा का सारा संविधान, जिसे इस सभा ने निर्माण तथा स्वीकार किया है, इस संशोधन से असंगत है अतः इस संशोधन को व्यवस्था के विरुद्ध ठहराया जाये।

***मौलाना हसरत मोहानी:** इसी बात के लिये मैंने आपसे निवेदन किया था कि आप मेरी इस प्रकार के कपटयुक्त प्रयोगों से रक्षा करें। उन्हीं बातों को मैं दुहरा नहीं रहा हूं। अनुच्छेद 1 के सम्बन्ध में अभी उस दिन मैंने यही बात प्रस्थापित की थी। आज मैं जो कुछ प्रस्थापित करने जा रहा हूं वह एक भिन्न आधार पर है। यदि आप मुझे उन्हीं तर्कों को दुहराते हुए देखें तो आप मुझे व्यवस्था के विरुद्ध घोषित कर सकते हैं, पर यदि मैं कोई बिलकुल नई बात कहूं जिसका इस संविधान के प्रथम अनुच्छेद से कोई सम्बन्ध न हो तो मैं समझता हूं कि मैं आपकी ओर से कुछ अनुग्रह प्राप्त करने का अधिकारी हूँ। जैसाकि मैंने अपने पहले कथन में सिद्ध किया था आपने एक प्रकार का वचन दिया था कि आप एक दम या बिना किसी विचार के मुझे नियम विरुद्ध नहीं ठहरायेंगे। हां, यदि आप यह समझें मैं कोई नवीन बात नहीं कह रहा हूं और आप मुझे पुरानी बातों को फिर से कहते हुए पायें तो आप मुझे नियम विरुद्ध ठहरा सकते हैं; पर यदि अनुच्छेद 1 के सम्बन्ध में मैंने जो कुछ कहा था उससे बिल्कुल ही भिन्न विषय हो तो मुझे ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता कि मेरा संशोधन व्यवस्था के विरुद्ध क्यों ठहराया जाये?

डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैय्या: क्या मैं यह जान सकता हूं कि आज प्रातः काल जो मत लिया गया था वह मौलाना के संशोधन को अस्वीकार कराने के लिए मतदान था? प्रस्तावना की शब्दावली पर कोई मत नहीं लिया गया था।

***अध्यक्ष:** हां, उस पर मैंने कोई मत नहीं लिया था।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैय्या:** अत: जो कुछ हुआ था वह 'लोकतंत्रात्मक' शब्द के स्थान में 'स्वाधीन' या 'फेडरल' रखने वाले संशोधन को अस्वीकार कराने के लिए था।

***अध्यक्ष:** मौलाना, मुझे जो कुछ विनिश्चय करना है वह यह नहीं है कि आप अपनी बातें दुहरायेंगे या नहीं। प्रश्न यह है कि यह व्यवसथा के अंतर्गत है या नहीं। आपत्ति यह है कि यह उस समस्त संविधान से असंगत है जिसे हम पारित कर चुके हैं। इसके बारे में आपको क्या कहना है?

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं नहीं समझता हूं कि यह किस प्रकार असंगत है। क्योंकि प्रस्तावना में 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य' है। मैं यह कहता हूं कि इन शब्दों की जगह आप 'स्वाधीन गणराज्यों का संघ' कहें। तो फिर असंगति कहां है? इसमें मुझे कोई असंगति नहीं दिखाई देती है।

***अध्यक्ष:** क्या आप वास्तव में यही सुझाव रखते हैं कि जो संविधान हमने पारित किया है वह सोवियत रूस के संयुक्त राज्य के आधार पर है?

***मौलाना हसरत मोहानी:** इस प्रकार की मैं कोई बात नहीं कहूंगा। मैं यह नहीं कहता कि हम सोवियत राज्य में जाकर मिल जायें और न मैं यह कहता हूं कि आप वैसा संविधान स्वीकार करें, पर जो कुछ मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि हमें अपने संविधान को सोवियत रूस के आधार तथा शैली के अनुसार क्रियान्वित करना चाहिये। वह एक विशेष शैली है तथा गणतंत्रात्मक शैली है और वह विकेन्द्रीयकरण शैली भी है।

***श्री जयनारायण व्यास** (राजस्थान): क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि माननीय सदस्य भाषण दे रहे हैं या औचित्व प्रश्न का उत्तर दे रहे हैं?

***अध्यक्ष:** वे औचित्य प्रश्न का उत्तर दे रहे हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी:** जब मैं यह विचार प्रस्तुत करता हूं कि हम रूस से नहीं मिलेंगे या हम सोवियत रूस का संविधान ग्रहण नहीं करेंगे तो मैं केवल यह सुझाव दे रहा हूं कि द्वितीय पठन में यहां हम जिस संविधान और प्रस्तावना को ग्रहण कर रहे हैं वह उसी प्रकार के उसी शैली के होने चाहियें जैसे सोवियत रूप के हैं और मैं नहीं समझता हूं कि इसमें कोई असंगति है। वे बातें क्या हैं? सोवियत रूस के मूल सिद्धांत क्या हैं? वे सिद्धान्त तीन हैं। सर्वप्रथम यह कि उनका संविधान फेडरल होगा। दूसरा यह कि वह विकेन्द्रीयकरण के सिद्धांत का फेडरेशन होगा और साथ ही साथ केन्द्र ने कुछ केन्द्रीय शक्तियां पाकर फिर उन शक्तियों को अपने अंगभूत एककों को दे दिया यह घोषणा करते हुए कि वे....

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि यदि मैं मौलाना साहब को बिना नियम-निर्देश के उनका संशोधन पेश करने की आज्ञा दे दूं तो समय की बचत होगी। अत: आप अपना भाषण समाप्त करें।

***मौलाना हसरत मोहानी:** यहां उपस्थित मेरे कुछ मित्र जब 'सोवियत' शब्द को सुनते हैं तो कहते हैं कि "यह सोवियत सरकार का अभिकर्त्ता है और यह सोवियत सरकार से वेतन पाता है।" मैं नहीं समझता हूं कि इस संसार में कोई भी व्यक्ति मुझ पर ऐसा दोषारोप कर सकता है।

***अध्यक्षः** सभा में ऐसा किसी ने नहीं कहा।

***मौलाना हसरत मोहानीः** सोवियत के विश्वस्त अनुचर हैं, और वे सोवियत सरकार से प्राप्त आदेशों का पालन करते हैं। मेरा उनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरा भारत के साम्यवादी पक्ष से भी कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि मैंने इस आधार के कारण उनमें सम्मिलित होने से इंकार कर दिया कि एक बार उन्होंने यह कहने की गलती की कि चूंकि हमारा और इंग्लैंड का राष्ट्र दोनों वीर राष्ट्र हैं और इसलिए इंग्लैंड का और हमारा आधार एक ही है। उस समय मैंने यह कहा था और अब भी कहता हूं "कोई भी व्यक्ति किन्हीं भी निबन्धनों के अधीन अथवा किसी उद्देश्य के लिए किसी विदेशी सरकार को और विशेषकर ब्रिटिश सरकार को सहायता करता है तो मैं कहता हूं कि वह गलती करता है....

***अध्यक्षः** मौलाना साहब, मैं आपको यह याद दिला दूं कि हमारा इन जीवन सम्बन्धी विवरणों से कोई सम्बन्ध नहीं है। आप कृपा कर अपने संशोधन पर भाषण दें।

***मौलाना हसरत मोहानीः** मैं ऐसी कोई बात नहीं कहूंगा जिस पर कोई आपत्ति कर सके। सोवियत सरकार अथवा सोवियत संविधान से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं केवल यह चाहता हूं कि हमारा संविधान और हमारी प्रस्तावना उस आधार का अनुसरण करे जिसे सोवियत सरकार ने ग्रहण किया है और ये वे तीन आधार हैं जिनका मैं जिक्र कर चुका हूं। कहने का तात्पर्य यह है कि हमारा संविधान फेडरल होना चाहिये और फेडरल होने के साथ-साथ ऐसा भी होना चाहिये कि केन्द्र को अधिक शक्तियां न हों और अंगभूत राज्य या गणराज्य अपनी इच्छा से कुछ केन्द्रीय शक्तियां केन्द्र को दे दें। और इसके पश्चात् अंगभूत एककों को सद्भावना प्राप्त करने के लिए वह फिर, मेरा आशय यह है, कि सोवियत सरकार फिर अपने अंगभूत एककों या गणराज्यों को स्वतन्त्रता दे। यह कह दे कि "यदि आप किसी समय यह देखें कि केन्द्र आपके हित के विरुद्ध विनिश्चय कर रहा है तो केन्द्र से मतभेद रखने की आपको स्वतन्त्रता है।" और इस प्रकार उसने उसे उसी समय अधिकार दे दिया और यदि उन्होंने कोई बात गलत होते देखी, केन्द्र का कोई प्रस्ताव गलत देखा तो वे एक दम उससे बाहर हो सकते थे और उसने यह उस समय भी कहा जब युद्ध हो रहा था। उसने सोवियत रूस के सब मुस्लिम गणतंत्रों से यह कह दिया था "यदि आप चाहते हैं तो आप जिस पक्ष में युद्ध करना चाहते हैं आप उस पक्ष में जाकर युद्ध कर सकते हैं। यदि आप हमारे लिये युद्ध करना नहीं चाहते तो हम आप पर दबाव नहीं डालते।" इसका क्या फल हुआ? सोवियत रूस ने उनमें अपने प्रति विश्वास पैदा किया और फल यह हुआ कि एक भी मुसलमान सोवियत गणराज्य के विरुद्ध नहीं हुआ। प्रत्येक ने सोवियत सरकार की ओर से अपनी पूरी सहानुभूति से युद्ध किया। इसका क्या कारण था? उन्होंने यह इसलिए किया कि उन्होंने देखा कि सोवियत सरकार ने उन्हें अपना विश्वासपात्र बना लिया है। सोवियत समूह को छोड़ देने का उन्हें अवसर नहीं दिया। और वे उसे छोड़ते भी क्यों? वह भी सावधान थी। उसने कभी कोई ऐसी बात नहीं रखी जो स्पष्टतया अपने अंगभूत एककों के विरुद्ध हो।

अतः इस प्रकार की सान्तवनाप्रदायक प्रवृत्ति ग्रहण करने से उन्हें इस प्रकार की स्वतंत्रता और इस प्रकार की सफलता मिली जो इससे पूर्व संसार में किसी को नहीं मिली थी। श्रीमान, मैं यह कहता हूं कि हम भी इसी नीति का अनुसरण

करें और हम भी इसी प्रवृत्ति को ग्रहण करें। हम भी अपने अल्पसंख्यक वर्गों को अपना विश्वासप्रद बनायें। ऐसा करने की अपेक्षा आप तो उन्हें बिल्कुल बाहर निकाल फैंक रहे हैं। आप अपने राजनैतिक अल्पसंख्यक वर्गों तक के हितों पर किंचित मात्र विचार किये बिना जो चाहते हैं वह पारित कर रहे हैं। आपको हमारी कुछ भी चिंता नहीं। आप देखते हैं कि आपकी बंगाल सरकार और आपकी मद्रास सरकार ने इस आधार पर कि साम्यवादियों ने कुछ अवैध उपायों को अपनाया है—वे लड़ रहे हैं, मार काट कर रहे हैं, हत्या कर रहे हैं और लूटमार कर रहे हैं—साम्यवादी पक्ष को अवैध घोषित कर दिया है। ठीक है, मैं कहता हूं कि साम्यवादी भी यही बात कह सकते हैं। वे कह सकते है "आप हमें कोई अवसर नहीं देते हैं, आप हमें स्वाधीन तथा संविधानिक विचार नहीं रखने देते हैं और आप.....

***अध्यक्षः** क्या मैं आपको यह याद दिला सकता हूं कि यह विधान सभा नहीं है, बल्कि यह संविधान सभा है और इस समय देश में क्या हो रहा है उससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है।

***मौलाना हसरत मोहानीः** बहुत अच्छा श्रीमान, इस सम्बन्ध में मुझे कुछ थोड़े से वाक्य और बोलने हैं और उनमें मैं अधिक समय नहीं लगाऊंगा।

मान लीजिये कि आप यह कहें कि आगामी निर्वाचन में संयुक्त निर्वाचक मंडल सहित तथा अन्य सब बातों के सहित बिना किसी निबंधन के साम्यवादी स्वतंत्र रूप से चुनाव लड़ सकते हैं। पर आप ऐसा कैसे करेंगे? मान लीजिए कि साम्यवादी पक्ष इस संविधानिक उपाय को काम में लेना चाहते हैं क्या उन्हें आप अपना घोषणापत्र निकालने देंगे जो अवश्य ही आपके सिद्धान्तों के प्रतिकूल होगा? निर्वाचनों के लिए क्या आप उन्हें अपने अभिकर्ता रखने देंगे? क्या आप उन्हें अपने कार्यकर्ता रखने देंगे जो प्रत्येक मतदाता के सम्पर्क में आयेंगे? आप ऐसी कोई बात नहीं करेंगे। एक बार यदि उन्होंने अपना घोषणापत्र निकाला आप उन्हें तुरन्त कारावास में डाल देंगे। अतः यह एक ऐसा प्रश्न है कि पहले मुर्गी हुई या अंडा। आप उन्हें कारावास में इसलिये बन्द करते हैं कि वे हिंसात्मक उपाय काम में लाते हैं और वे यह कहते हैं "कि हमें बाध्य होकर हिंसात्मक उपायों की शरण लेनी पड़ती है क्योंकि संविधानिक उपायों की आप हमारे लिये कोई गुंजाइश नहीं रहने देते हैं।"

***अध्यक्षः** मौलाना साहब, आप अपने संशोधन पर भाषण नहीं दे रहे हैं।

***मौलाना हसरत मोहानीः** बहुत अच्छा। मुझे डॉ. अम्बेडकर और इस सभा से केवल यह निवेदन करना है कि सब राजनैतिक अल्पसंख्यक वर्गों के प्रति वैसी ही सान्तवनाप्रदायक प्रवृत्ति ग्रहण की जाये और वैसे ही सिद्धान्त ग्रहण किये जायें जैसे सोवियत संघ द्वारा ग्रहण किये गये हैं। मैं आपसे यह निवेदन नहीं कर रहा हूं कि आप सोवियत संघ में सम्मिलित हों या उनके संविधान को स्वीकार करें। इन चन्द शब्दों के सहित में अपना संशोधन पेश करता हूं और डॉ. अम्बेडकर से प्रार्थना करता हूं कि वे इसे स्वीकार करें।

***अध्यक्षः** क्या कोई व्यक्ति इस संशोधन पर कुछ कहना चाहता है?

***माननीय सदस्यगणः** जी नहीं।

***अध्यक्षः** तो मैं इस पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic' शब्दों के स्थान में 'We, the people of India, having solemnly resolved to constitute India into a Union of Indian Socialistic Republics to be called U.I.S.R. on the lines of U.S.S.R.' शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** हमारे पास अब ऐसे बहुत से संशोधन हैं जिनकी सूचना अन्य सदस्यों ने दी है। इन संशोधनों में से कुछ संशोधन दो बातों से सम्बद्ध हैं। उनमें से कुछ में ईश्वर का नाम प्रस्तावना में किसी न किसी रूप में लाया गया है। अन्य संशोधनों में महात्मा गांधी का नाम किसी न किसी रूप में लाया गया है। और कुछ संशोधन ऐसे हैं जिनमें शब्दावली पर कुछ संशोधनों का सुझाव दिया गया है। पर कदाचित् ये बातें साधारण हैं, और मुख्य संशोधन वास्तव में वे हैं जिनमें ईश्वर का या महात्मा गांधी का या दोनों का नाम लाया गया है। अब मैं सदस्यों से यह पूछना चाहूंगा कि क्या वे इन संशोधनों को पेश करने का आग्रह करेंगे क्योंकि मैं उनको संशोधन पेश करने से रोक नहीं सकता हूं; पर मैं यह सुझाव दूंगा कि इस सभा में न तो ईश्वर पर और न महात्मा गांधी पर वाद-विवाद हो (*वाह-वाह*)।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, क्या मैं अपने संशोधन संख्या 430 को पेश कर सकता हूं?

***अध्यक्षः** यदि वह पेश किया जायेगा तो उस पर मत भी लिया जायेगा।

***श्री देशबन्धु गुप्तः** श्रीमान, इसके पूर्व कि श्री कामत अपना संशोधन पेश करें क्या मैं सभा का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित कर सकता हूं कि जब इस सभा ने सत्यनिष्ठ होकर लक्ष्यमूलक संकल्प सब सदस्यों ने खड़े होकर पारित किया था और उस समय प्रधान मंत्री ने इन शब्दों में अपील की थी:

फिर भी'

"यह एक संकल्प है और यह एक संकल्प से बहुत कुछ अधिक भी है। यह एक घोषणा है। यह एक दृढ़ संकल्प है। यह एक प्रतिज्ञा है, एक बीड़ा है और मुझे आशा है कि यह हम सबके लिए एक समर्पण है....और यदि मैं सम्मानपूर्वक ऐसा कह सकता हूं तो मैं यह चाहता हूं कि यह सभा इस संकल्प पर संकीर्ण विधि सम्बन्धी शब्दावली के रूप में विचार न करे वरन् इस संकल्प के पीछे जो भावना है उस पर विचार करे"

प्रस्तावना किसी रूप में भी कम महत्वपूर्ण नहीं है और प्रधान मंत्री के वाक्य समान रूप से उस पर प्रयोज्य हैं। अत: मैं श्री कामत से निवेदन करता हूं कि इस बात पर ध्यान रखा जाये।

***अध्यक्ष:** क्या श्री कामत को मैं एक बात बता सकता हूं? अनुसूची 3 में जिसे हम पारित कर चुके हैं मंत्रियों तथा अन्य व्यक्तियों के लिए जो कि पद धारण करेंगे एक शपथ या प्रतिज्ञान विहित कर दिया गया है। हमने इसे वैकल्पिक रूप में रख दिया है जैसे कि "ईश्वर की शपथ लेता हूं" या "सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं" और इस प्रकार आस्तिकों और नास्तिकों के लिए शपथ लेने अथवा प्रतिज्ञान करने की स्वतन्त्रता दी है। यहां भी क्या आप इस बात को वैकल्पिक रूप में लायेंगे?

***श्री एच. वी. कामत:** यहां हम व्यक्तिगत रूप में नहीं हैं यहां हम सब भारत की जनता के रूप में हैं। इन दोनों में बहुत कुछ अन्तर है।

***अध्यक्ष:** भारत की जनता के अंतर्गत व्यक्ति सम्मिलित हैं। यदि आप अपने संशोधन को पेश करने का आग्रह करेंगे तो आपको मैं रोक नहीं सकता हूं। पर मैं आपको यह सुझाव देता हूं कि आप इसका आग्रह न करें।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं....

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): मैं आपसे इस बात पर ध्यान रखने के लिए निवेदन करूंगी कि बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक वर्गों में ईश्वर सम्बन्धी विषय को वाद-विवाद का विषय नहीं बनाया जाये। इस विषय में बड़ी उलझने हैं। हममें से अधिकांश व्यक्तियों को चाहे वे आस्तिक हों अथवा नास्तिक हों ईश्वर की सत्ता को सिद्ध तथा असिद्ध करना कठिन होगा। उसके नाम को व्यर्थ लाने का प्रयत्न हम न करें। यहां उसका नाम न लाया जाये। संसार में प्रत्येक राष्ट्र ईश्वर की स्तुति करता है और ईश्वर एक निष्पक्ष सत्ता है और उसका रूप निष्पक्ष है और सदस्यों को इस विषय पर किसी न किसी पक्ष में मत देना होगा। उसकी संज्ञा इसी रूप में रहने दी जाये। इन शब्दों में मैं श्री कामत से अपील करती हूं कि ईश्वर पर मत देने की उलझन में हमें न डालें।

***श्री एच.वी. कामत:** मुझे खेद है कि मैं इस अपील को स्वीकार नहीं कर सकता। अपने नाम के संशोधन संख्या 430 को मैं पेश करूंगा। श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 2 में प्रस्थापित प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जाये:–

'In the name of God,

We, the people of India,

having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic, and to secure to all her citizens

Justice, social, economic and political;

[श्री एच.वी. कामत]

Liberty of thought, expression, belief, faith and worship;

Equality of status and of opportunity; and to promote among them all;

Fraternity, assuring the dignity of the individual and the unity of the nation;

in our Constituent Assembly do hereby adopt, enact and give to ourselves this Constitution.'

[ईश्वर का नाम लेकर हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए

दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।]"

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैय्या:** श्रीमान, आप देख लीजिये, संशोधन केवल प्रथम पंक्ति में है।

***अध्यक्ष:** वह ठीक वैसा ही है जैसी कि प्रस्तावना है सिवा इसके कि उसका आरम्भ 'ईश्वर का नाम लेकर' शब्दों द्वारा हुआ है।

माननीय सदस्यगण: इस विषय पर कृपया भाषण न हों।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** मैं एक औचित्य प्रश्न रखने के लिए खड़ा होता हूं। पेश किये गये संशोधन का कुछ अर्थ होना चाहिए।

***अध्यक्ष:** वास्तव में यह औचित्य प्रश्न नहीं है।

***श्री एच. वी. कामत:** श्री सन्तानम को मैं उत्तर दे सकता हूं। मेरे संशोधन का अर्थ यह है कि ईश्वर का नाम लेकर हम अमुक कार्य करते हैं। इस प्रस्ताव को प्रस्तुत करने के लिए किसी लम्बे भाषण की आवश्यकता नहीं है। ईश्वर का नाम लाने के साथ-साथ मैंने केवल एक शब्द के लिए कुछ थोड़ी-सी स्वतन्त्रता और ले ली है, और वह यह है मैंने 'its' citizens के स्थान में 'her' citizens शब्द रखे हैं।

***श्री ए. थानू पिल्ले** (तिरुवांकुर और कोचीन राज्य): श्रीमान, क्या मैं एक औचित्य प्रश्न रख सकता हूं। यद्यपि मैं आस्तिक हूं, परन्तु यदि श्री कामत का संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो क्या उसका अर्थ विश्वास के विषय में विवश करना नहीं होगा? क्या इस प्रकार का प्रस्ताव पेश करना व्यवस्था के विरुद्ध नहीं है? यह विश्वास स्वातन्त्र्य के मूलाधिकार पर प्रभाव डालता है। संविधान के अनुसार किसी व्यक्ति को ईश्वर में विश्वास करने या न करने का अधिकार है। इस दृष्टिकोण से यह संशोधन नियम विरुद्ध ठहराया जाना चाहिये, यद्यपि मैं स्वयं कट्टर आस्तिक हूं।

***श्री एच.वी. कामत:** श्री थानू पिल्ले के लिए मेरा उत्तर यह है कि इस संविधान को हम भारतीय जनता के नाम में तथा उसकी ओर से पारित कर रहे हैं। इस सभा में हमने जो कुछ किया है वह सब भारतीय जनता के नाम से और उसकी ओर से किया है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): क्या मैं श्री कामत के संशोधन पर यह संशोधन पेश कर सकता हूं कि "ईश्वर का नाम लेकर" के स्थान में "देवी का नाम लेकर" रखना श्री कामत स्वीकार करें। (*हंसी*)

***श्री एच.वी. कामत:** इस सभा में जो कुछ हमने किया है वह सब भारतीय जनता की ओर से भारतीय जनता के लिए ही किया है और यहां सब विनिश्चय सभा का मत लेकर किये गये हैं। यह विषय चाहे सभा के मत के लिए हो या न हो, पर मुझे यह विश्वास है कि वह भारत की जनता जिसके लिए हम विगत तीन वर्षों से यहां काम तथा परिश्रम कर रहे हैं वह पूर्ण रूप से इस संशोधन की पुष्टि करेगी। यहां तक तो श्री पिल्ले द्वारा उठाये गये प्रश्न के सम्बन्ध में है।

प्रस्तावना के मूल पाठ के सम्बन्ध में मैने केवल थोड़ी-सी स्वतन्त्रता बरती है। जैसाकि मैं बता चुका हूं, मैं पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा दिसम्बर 1946 में पेश किये गये लक्ष्यमूलक संकल्प की शब्दावली का ही अनुसरण कर रहा हूं। उसके प्रथम भाग में देश के शासन के निर्देश में भावी शब्द के साथ "her future governance" शब्दों का प्रयोग किया गया है; 'her' मातृभूमि के लिए उपयुक्त प्रयोग है। ऐसा होने से प्रस्तावना में हमें 'her citizens' कहना चाहिये न कि 'its citizens'। इस विषय को मैं मसौदा समिति पर छोड़ दूंगा।

प्रस्ताव के सार के सम्बन्ध में मैं कोई लम्बा भाषण नहीं देना चाहता हूं। यह देश जो प्राचीन होते हुए भी सदैव तरुण रहा है, जो ईश्वरीय ज्ञान के निर्मल स्रोत की शरण लेकर युग-युगान्तरों से अपना कायाकल्प करता रहा है उस देश की इस विशाल सभा में, जो भारत की—हमारे भारतवर्ष की प्रथम संविधान सभा है, इस संविधान के पवित्र संस्कार को गीता के निम्नलिखित श्लोक के अनुसार हम ईश्वर के प्रति सम्पूर्ण दृढ़ संकल्प द्वारा करें।

यत्करोसि यदश्नासि

यज्जुहोसि ददासियत्

यत्तपस्यसि कौन्तेय

तत्कुरुष्व मदर्पणम्।

[श्री एच.वी. कामत]

हमारी कमियां चाहे जो कुछ भी हों, इस संविधान में चाहे जो कुछ दोष और त्रुटियां हों हम ईश्वर से यह प्रार्थना करें कि वह हमें ऐसी शक्ति, साहस और बुद्धि दे जिससे हम भारत और भारत की जनता के लिए कठोर परिश्रम करके कष्ट सहकर और त्याग करके अपने लोहे को सोना बना दें। हमारी प्राचीन सभ्यता का यही मत है और इन समस्त शताब्दियों में भी यही मत रहा है—यह एक ऐसा मत है जो विशिष्ट, प्रमुख तथा सृजनात्मक है और यदि हम, भारत के लोग, इस मत पर ध्यान दें तो हमारा कल्याण होगा।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास : जनरल): श्री कामत द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव का मैं जोरदार समर्थन करता हूं।

(प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना बोलने के लिए खड़े हुये।)

***अध्यक्षः** क्या आप कोई संशोधन पेश करना चाहते हैं?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** जी हां, संशोधन संख्या 3।

***अध्यक्षः** क्या श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन पर कोई बोलना चाहता है?

***श्री एम. थिरुमल राव** (मद्रास : जनरल): क्या आप श्री सक्सेना को अपना संशोधन पेश करने दे रहे हैं? मैं श्री कामत के संशोधन पर चन्द शब्द कहना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** इस समय हम श्री कामत के संशोधन पर हैं।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या मैं डॉ. अम्बेडकर को उस वचन की याद दिला सकता हूं जो उन्होंने मुझे एक बार दिया था। श्रीमान, क्या मैं चन्द पंक्तियां पढ़ सकता हूं? श्रीमान, 15 नवम्बर 1948 को जब इस प्रश्न पर विचार हो रहा था, डॉ. अम्बेडकर ने सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के इस प्रश्न के बारे में याद दिलाने के लिए मुझसे कहा था। मैंने कहा था–

> "मैं आशा करता हूं.....कि उनके मसौदे का अभिप्राय है कि वह (सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता) जनता में निहित है, और उनकी व्याख्या अभिलेखों में भावी निर्देशन के लिए अंकित होगी।"

इसका उन्होंने यह उत्तर दिया था–

> "निःसन्देह वह जनता में निहित है। मैं अपने मित्र को यह भी बता दूं कि यदि यह विषय उस समय उठाया जाये जबकि हम प्रस्तावना की चर्चा कर रहे हों तो मैं इस पर कोई भी आपत्ति नहीं करूंगा।"

***अध्यक्षः** यह बात नहीं है। इस समय हमारे सामने श्री कामत का संशोधन है, यह बात नहीं है। इस समय हम इस प्रश्न को नहीं ले रहे हैं।

***श्री एम. थिरुमल राव:** यह दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि श्री कामत ने इस संशोधन पर जोर न देने के मार्ग को नहीं अपनाया है। यह बात इतने प्रमुख महत्व की है और समस्त राष्ट्र के जीवन पर इतनी प्रभाव डालता है कि वह तीन सौ व्यक्तियों की सभा के मत के अधीन नहीं होनी चाहिये चाहे भारत ईश्वर को चाहे या न चाहे। हमने यह स्वीकार कर लिया है कि शपथ में ईश्वर का नाम होना चाहिये, पर जो लोग ईश्वर में विश्वास नहीं करते उनके लिये वहां एक विकल्प है, पर प्रस्तावना में इन दोनों बातों का उपबन्ध करने की कोई सम्भावना नहीं है। इसलिए मैं समझता हूं कि यह अच्छा होगा कि श्री कामत अपना संशोधन वापस कर लें और उस ईश्वर को इस सभा के मत के अधीन न लायें जिसके प्रति उन्होंने इतने सम्मानसूचक शब्दों में भाषण दिया है और यदि इस पर मत लिया जाता है तो न तो यह हमारे लिये उचित है और न राष्ट्र के लिये।

***डॉ. वी. पट्टाभि सीतारमैय्या:** क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूं कि किसी अन्य कार्य के लेने के पूर्व उस संशोधन को पहले समाप्त कर दिया जाये।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** यह बड़े ही खेद का विषय है कि वह विषय, जिसका हमारी आन्तरिक तथा बहुत ही पवित्र भावनाओं से सम्बन्ध है, चर्चा का विषय बनाया जाये। अपने सर्वोच्च सद्विश्वासों और अपनी निश्चित धारणाओं के प्रति यह अधिक सुसंगत होगा कि हम उन पर आरूढ़ रहें और हम अपने विश्वासों को दूसरों पर लादने का प्रयास न करें। श्री कामत तथा उन लोगों की, जो उनसे सहमत हैं, निष्ठा को मैं अभिज्ञान करता हूं, पर मैं नहीं समझता हूं कि एक ऐसे विषय में, जिसका प्रत्येक व्यक्ति से वैयक्तिक सम्बन्ध है, क्यों सामूहिक विचार किसी व्यक्ति पर लादा जाये। इस प्रकार की कार्रवाई प्रस्तावना से असंगत है जिसमें विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता का वचन प्रत्येक व्यक्ति को दिया गया है। इस प्रश्न पर संकीर्ण रूप में हम कैसे विचार कर सकते हैं? हम ईश्वर का आह्वान करते हैं, पर मैं यह साहसपूर्वक कह सकता हूं कि जब हम ऐसा करते हैं तो हम एक संकीर्ण साम्प्रदायिक भावना का प्रदर्शन करते हैं जो संविधान की आत्मा के विरुद्ध है और जिसे हमें इस समय भूल जाना चाहिए जबकि हम अपने परिश्रम के इस महत्वपूर्ण अंत तक पहुंच गये है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** श्रीमान, मेरे मित्र श्री कामत ने जो संशोधन पेश किया है उसका विरोध करने में मैं अपने मित्र पंडित कुंजरू के साथ हूं। अपने मित्र श्री कामत में मुझे बड़ी श्रद्धा है। जहां तक राजनैतिक विषयों का सम्बन्ध है मैं वह व्यक्ति हूं जो श्री कामत में असीम विश्वास रखता है। मुझे यह कहना पड़ेगा कि आज सायंकाल को मुझे उनसे बड़ी निराशा हुई। इस संशोधन से उन्होंने कई व्यक्तियों की भावनाओं को कुचल डाला जबकि उन्होंने उस संशोधन को बड़ी जोरदारी से अस्वीकार किया जिसको मैंने प्रस्थापित किया था। श्रीमान, मेरे लिये यह हंसी का विषय नहीं है। मैं देवी में विश्वास करता हूं। मैं कामरूप का रहने वाला हूं जहां कामाख्या देवी की उपासना की जाती है।

***एक माननीय सदस्य:** ईश्वर के अंतर्गत देवी आ जाती है।

***अध्यक्षः** यह उतना ही बुरा है जितना कि इस चर्चा में हम ईश्वर के नाम को ले आये हैं। इस विषय में हमें अविनीत नहीं होना चाहिए।

***श्री रोहिणीकुमार चौधरीः** हमें स्मरण रखना चाहिए कि जब हमने अपना राजनैतिक आन्दोलन आरम्भ किया था हमने बन्देमातरम् के गान से उसे आरम्भ किया था। बन्देमातरम् का क्या अर्थ है? वह देवी की स्तुति है। उसका अर्थ है देवी में विश्वास। श्रीमान, हम लोग जो शक्ति सम्प्रदाय के हैं देवी की पूर्णतया उपेक्षा कर केवल ईश्वर का आह्वान करने में विरोध करते हैं। मेरा यह निवेदन है। यदि हम ईश्वर का नाम लाते ही हैं तो हमें देवी का नाम भी लाना चाहिये। जैसा कि मैंने कहा था इस संशोधन को लाना ही न चाहिये था। पर चूंकि यह ले आया गया है मेरे विचार ये हैं।

***माननीय श्री सत्यनारायन सिन्हा** (बिहार : जनरल): श्रीमान, इस विषय पर अब मत लिया जाये।

***पंडित गोविन्द मालवीय** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान, मैं कुछ बातें कहना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** और भी बहुत से व्यक्ति बोलना चाहते हैं। पर यह सुझाव दिया गया है कि इस विषय पर अब वाद-विवाद समाप्त किया जाये।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** यह कहा गया है कि हमें अपनी इच्छा को किसी पर लादना नहीं चाहिये। मैं आशा करता हूं कि इस सभा का दूसरा वर्ग भी ऐसा नहीं करेगा। इस विषय पर आपकी अनुज्ञा से मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** पर विवादान्तक प्रस्ताव पेश हो चुका है। मैं विवादान्तक प्रस्ताव पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अब मत लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अब मुझे श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन पर मत लेना पड़ेगा। मेरे लिये और कोई विकल्प नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** उनसे वापस कर लेने के लिए कहा जाये।

***अध्यक्षः** मैंने उनसे न पेश करने के लिए कहा था। इसको वापस लेना उन पर निर्भर करता है।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं इसे वापस नहीं ले रहा हूं।

***अध्यक्षः** वे कहते हैं कि वे वापस नहीं लेते।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन 2 में प्रस्थापित प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जाये:–

'In the name of God,

We, the people of India,

having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic, and to secure to all her citizens

Justice, social, economic and political;

Liberty of thought, expression, belief, faith and worship;

Equality of status and of opportunity; and to promote among them all;

Fraternity, assuring the dignity of the individual and the unity of the nation;

in our Constituent Assembly do hereby adopt, enact and give to ourselves this Constitution.'

[ईश्वर का नाम लेकर हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए

दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।]"

***श्री एच.वी. कामतः** मैं मत-विभाजन की मांग करता हूं।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** इस प्रश्न पर मैं मत-विभाजन चाहता हूं।

***मौलाना हसरत मोहानीः** इस प्रश्न पर मैं भी मत-विभाजन चाहता हूं।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** मैं इसलिए मत-विभाजन चाहता हूं कि मैं समझता हूं कि हम उस देश और उसकी जनता के साथ अन्याय कर रहे हैं और मैं यह जानना चाहता हूं। कि कौन इस विषय पर क्या कहता है।

सभा में हाथ उठा कर मत-विभाजन हुआ।

पक्ष में: 41

विपक्ष में: 68

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान, हमारे इतिहास में आज का दिन कलंक का दिन है। ईश्वर भारत की रक्षा करे।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** श्रीमान, यह बड़ा ही महत्वपूर्ण विषय है और मैं आपसे फिर निवेदन करता हूं कि हम इस विषय पर मत-विभाजन करें।

***अध्यक्षः** मैंने अभी मत-विभाजन किया था।

***श्री ए. थानू पिल्लेः** श्रीमान, श्री कामत को वह कथन नहीं करना चाहिये और उन्हें उसे वापस कर लेना चाहिये।

***अध्यक्षः** पंडित गोविन्द मालवीय को मैं यह कहूंगा। हमारे नियमों में इस प्रकार की व्यवस्था है:

> "जिस विषय के लिये सभा का विनिश्चय अपेक्षित हो वह विषय सभापति द्वारा मतदान के लिए रखे गये प्रश्न के द्वारा प्रस्तुत किया जायेगा।
>
> उन सब विषयों में जिनके लिये सभा के सदस्यों द्वारा विनिश्चय किया जाना अपेक्षित है सभापति मत बराबर होने की दशा में ही मत का प्रयोग करेगा।
>
> मत शब्द द्वारा या मत-विभाजन द्वारा लिया जायेगा और यदि कोई सदस्य चाहता है तो मत-विभाजन द्वारा लिया जायेगा।"

यहां मैंने शब्द द्वारा मत लिया है और उसके पश्चात् इसकी अपेक्षा कि सदस्यों से अपने-अपने स्थानों में खड़े होने के लिए कहा जाये मैंने उनसे अपने-अपने हाथ उठाने के लिए कह कर मत-विभाजन की विशिष्ट रीति को अपनाया है। मैं समझता हूं कि नियमों में जो कुछ अपेक्षित है उसकी मैंने सारवत् रूप में पूर्ति की है।

***श्री महावीर त्यागीः** एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान, अध्यक्ष एक स्थायी आदेश द्वारा यह निर्धारित कर चुके हैं कि मत-विभाजन की क्या रीति होगी। मेरे पास वह आदेश नहीं है चूंकि वह पृथक् रूप में निकाला गया थ। उस स्थायी आदेश में यह कहा गया है कि जब कोई सदस्य मत-विभाजन की मांग करता है तो अध्यक्ष सब दरवाजों को बन्द करा देंगे और कहेंगे "समर्थक दाईं ओर को और

विरोधी बाईं ओर को।" और इसके पश्चात् सदस्य अपने-अपने पक्ष में पंक्ति में खड़े होंगे। यह स्थायी आदेश इसी सत्र में निकाला गया था और उस स्थायी आदेश में जो अपेक्षित है उसकी पूर्ति नहीं हुई।

***अध्यक्षः** आपने उस नियम को ठीक से नहीं पढ़ा। नियम 30 की कंडिका (4) में कहा गया है "मत-विभाजन द्वारा मत लेने की रीति को सभापति विनिश्चित करेगा।" मैंने इसका पालन किया है।

***श्री महावीर त्यागीः** मेरा प्रश्न यह है कि एक बार स्थायी आदेश निकाल देने पर वह जबानी नहीं बदला जा सकता।

***अध्यक्षः** क्या यह सुझाव दिया जा रहा है कि नियम 30 की कंडिका (4) का उल्लंघन हुआ है?

***श्री एच. वी. कामतः** आपकी कार्यालय की गश्ती चिट्ठी में उसको विस्तृत तथा स्पष्ट कर दिया गया है।

***अध्यक्षः** उसके लिए कोई स्पष्टीकरण अपेक्षित नहीं है। वह बहुत ही स्पष्ट है। मत-विभाजन द्वारा मत लेने की रीति को सभापति विनिश्चित करेगा।

"यदि सभापति का आसन ग्रहण करने वाले व्यक्ति की सम्मति में मत-विभाजन की मांग व्यर्थ की गई है (अर्थात्, जब कि किसी विशिष्ट विषय में उसको यह समाधान हो जाये कि उसकी घोषणा के समर्थन में तथा आपत्तिकर्त्ता के विरुद्ध स्पष्ट बहुमत है) तो वह मत-विभाजन लाबियों में मतों को लेखबद्ध करने की साधारण रीति का पालन नहीं करेगा वरन् सदस्यों से यह कह कर कि जो 'पक्ष में' हैं और जो 'विपक्ष में' हैं वे क्रमशः अपने-अपने स्थानों में खड़े हो जायें, सभा का मत प्राप्त करेगा और उसके आधार पर जैसा वह ठीक समझे या तो तुरन्त ही सभा के विनिश्चय की घोषणा कर देगा या मत-विभाजन करने का आदेश देगा। जबकि सभापति सभा के विनिश्चय की घोषणा उसी समय कर देगा तो साधारणतया मतदाताओं के नाम अंकित नहीं किये जायेंगे।"

***एक माननीय सदस्यः** "मत-विभाजन" शब्द का पदावली के अनुसार एक विशिष्ट अर्थ है। मत-विभाजन की मांग का अर्थ है कि नाम अंकित किये जायेंगे। उसका अर्थ केवल हाथों को गिन लेना ही नहीं है। विधान सभा में इसी प्रथा का पालन किया जाता है।

***अध्यक्षः** किसी अन्य स्थान की प्रक्रिया से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। हमारी प्रक्रिया हमारे अपने नियमों द्वारा शासित है और मैंने मत-विभाजन को उसी रूप में लिया है जो आदेश द्वारा अभिप्रेत है। यह मेरा अंतिम नियम-निर्देश है।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** नियमों के बारे में मुझे कोई सन्देह नहीं है। यह अध्यक्ष का कार्य है कि वह उस रीति को विनिश्चित करे जिसके अनुसार सभा के विचार प्राप्त किये जा सकें। जब मैंने आपसे यह प्रार्थना की थी उस समय मेरे मन में ऐसी कोई शंका नहीं थी। परन्तु चूंकि यह एक ऐसा महत्वपूर्ण विषय है जिसके प्रति हममें से बहुतों की धारणायें बड़ी प्रबल हैं, मैं आपके विनिश्चय पर छोड़ता हूं कि इस विषय में कुछ और किया जाये या नहीं। यदि आपको यह समाधान हो गया है कि जो कुछ कहा गया है वह पर्याप्त नहीं है तो हमारी प्रार्थना और भावनाओं पर ध्यान देते हुए यदि आप मत-विभाजन के लिए किसी अन्य रीति को उचित समझें तो हम बड़े कृतज्ञ होंगे।

***अध्यक्षः** मुझे पूर्ण समाधान हो गया है कि मैंने सभा के सही विचार जान लिये हैं, और मेरा सम्बन्ध केवल इसी बात से है। अब हम अगले मद को लेंगे।

***पंडित गोविन्द मालवीयः** इस प्रश्न पर मेरे नाम से एक संशोधन था। आपने यह विनिश्चय किया है कि केवल श्री कामत का संशोधन पेश किया जायेगा, पर मेरा संशोधन बिलकुल अलग है। उसमें ईश्वर का नाम नहीं है और हो सकता है कि वह किसी भी व्यक्ति को बुरा न लगे।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों को उस रूप में ले रहा हूं जैसेकि वे कार्यावली में हैं। जब हम आपके संशोधन पर आयेंगे उस समय मैं यह देखूंगा कि उसका क्या किया जाये। प्रो. शाह यहां पर नहीं हैं अतः उनका संशोधन पेश नहीं किया जाता है। इसके पश्चात्, श्री सक्सेना का संशोधन है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान् मैं प्रस्ताव पेश करता हूंः

"कि प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जायेः

'In the name of God the Almighty, under whose inspiration and guidance, the Father of our Nation, Mahatma Gandhi, led the Nation from slavery into Freedom, by unique adherence to the eternal principles of Satya and Ahimsa, and who sustained the millions of our countrymen and the martyrs of the Nation in their heroic and unremitting struggle to regain the Complete Independence of our Motherland,

We, the people of Bharat, having solemnly resolved to constitute Bharat into a Sovereign, Independent; Democratic, Socialist Republic, and to secure to all its citizens:

Justice, social, economic and political, LIBERTY of thought, expression, belief, faith and worship, EQUALITY of status and of opportunity; and to promote among them all

FRATERNITY assuring the dignity and freedom of the individual and the unity of the country and the nation;

In our Constituent Assembly this.....day of Vikrami Samvat 2006 (the 26th day of January, 1950 A.D.) do hereby enact, adopt and give to ourselves this Constitution.'

[सर्वशक्तिमान् ईश्वर के नाम पर जिसकी प्रेरणा तथा मार्ग प्रदर्शन के अधीन हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने सत्य और अहिंसा के शाश्वत् सिद्धान्तों पर अटल रहकर राष्ट्र को दासत्व से मुक्त कर स्वतन्त्रता प्राप्त कराने का मार्ग दिखाया और जिन्होंने हमारे करोड़ों देशवासियों तथा राष्ट्र पर प्राणोत्सर्ग करने वाले व्यक्तियों को अपनी मातृभूमि की खोई हुई पूर्ण स्वाधीनता को पुन: प्राप्त करने के लिए उनके वीरोचित तथा निरन्तर होने वाले संघर्ष में, सहारा दिया,

हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न, स्वाधीन, लोकतंत्रात्मक, समाजवादी गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता, प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और स्वतन्त्रता और देश तथा राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए

दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज मिति.....संवत् 2006 विक्रमी (26 जनवरी, 1950 ई.) को एतद्द्वारा इस संविधान को अधिनियमित, अंगीकृत और आत्मार्पित करते हैं।]"

अपने संविधान के आरम्भ में ईश्वर के पवित्र नाम और राष्ट्रपिता के पुर:स्थापन करने के सम्बन्ध में अपने कुछ मित्रों की प्रवृत्ति देखकर मुझे बहुत दु:ख हुआ है। जबकि उनको अपने विचार प्रकट करने का अधिकार है तो अन्य व्यक्तियों को भी अपने विचार प्रकट करने का पूर्ण अधिकार है। आत्मज्ञान के क्षेत्र में अपने अन्वेषणों पर इस देश को सदैव गर्व रहा है और अब हम अपने संविधान के आरम्भ में ईश्वर का नाम रखने तक में डरते हैं। मैं उन लोगों में से हूं जिनका यह विचार है कि इस संविधान को तैयार करके हमने एक महान् कृति की रचना

[प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना]

की है। सम्भव है इसमें कुछ दोष हों। पर मुझे यह विश्वास है कि हमने कुछ बहुत बड़ी बातें निश्चित की हैं। यही उचित और ठीक है कि अपने संविधान के आरम्भ में ईश्वर और राष्ट्रपिता के नाम रखे जायें। मुझे दुख है कि कुछ लोगों का यह विचार हुआ कि हम इस बात को उन पर लाद रहे हैं। संसार में ऐसे और संविधान हैं, उदाहरणार्थ आयरलैंड का संविधान जिसके आरम्भ में, प्रस्तावना में ईश्वर का उल्लेख किया गया है और जिन वीरों ने प्राणोत्सर्ग पर स्वतन्त्रता प्राप्त की उनके प्रति श्रद्धांजलि भेंट की गई है। अतः मुझे यह देखकर बड़ा दुख हुआ कि ईश्वर के नाम और राष्ट्रपिता के उल्लेख मात्र से कुछ सदस्यों ने यह समझा कि किसी पर कुछ लादने का प्रयास किया जा रहा है। यदि उनके इस प्रकार के विचार हैं तो इन विचारों के रखने की उन्हें स्वतन्त्रता है, पर जिन लोगों के इस विषय में बड़े दृढ़ विचार हैं उनको ईश्वर का नाम हटाने के लिए क्यों बाध्य किया जाये? अपने मित्रों की इस प्रवृत्ति पर मुझे बड़ा खेद है। मैं आशा करता हूं कि वे इस विषय पर फिर विचार करेंगे। कदाचित् यह संविधान हमारे देश का एक नये रूप में राष्ट्रपिता द्वारा निश्चित आदर्शों के आधार पर निर्माण करेगा। अतः यह उचित और ठीक है कि संविधान के आरम्भ में इनके नाम रख कर ईश्वर के समक्ष हम अपनी विनम्रता प्रकट करें और राष्ट्रपिता के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करें।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र प्रो. शिब्बन-लाल सक्सेना द्वारा पेश किये गये संशोधन का विरोध करने के लिए मैं खड़ा होता हूं। मैं यह नहीं चाहता हूं कि महात्मा गांधी का नाम इस संविधान में लाया जाये क्योंकि यह संविधान गांधी जी के सिद्धांतों के आधार पर नहीं है। इस संविधान की आधारशिला अमरीका के उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय हैं। यह संविधान भारत शासन अधिनियम, 1935 की पुनरावृत्ति है। यदि हमारा संविधान गांधी जी के सिद्धांतों के आधार पर होता तो इसका समर्थन करने में सर्वप्रथम व्यक्ति मैं होता। मैं नहीं चाहता हूं कि महात्मा गांधी का नाम इस रद्दी संविधान के साथ घसीटा जाये।

***अध्यक्ष:** अब मैं इस संशोधन पर मत लूंगा।

***आचार्य जे.बी. कृपलानी** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): क्या इस संशोधन के प्रस्तावक महोदय से मैं यह निवेदन कर सकता हूं कि वे इसे वापस ले लें? इस संशोधन पर मत देना हमें शोभा नहीं देता है। महात्मा गांधी के नाम का प्रयोग हमें बहुत बचा-बचा कर करना चाहिये। मेरे मित्र शिब्बनलाल जानते हैं कि गांधी जी के प्रति प्रेम और सम्मान में मैं किसी से पीछे नहीं हूं। मैं समझता हूं कि उस सम्मान के प्रति यह बात सुसंगत होगी कि हम उनका नाम इस संविधान में न लायें जो किसी समय भी बदला या पुनर्निर्मित किया जा सकता है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** चूंकि आचार्य कृपलानी ने अपील की है, मैं अपने संशोधन को वापस लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।

(संशोधन संख्या 4 पेश नहीं किया गया।)

पंडित गोविन्द मालवीय: जिस संशोधन की मैंने सूचना दी थी वह इस प्रकार था:

"कि प्रस्तावना में 'We, the people of India' (हम, भारत के लोग) शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रखे जायें:

'By the Grace of Parameshwar, The Supreme Being, Lord of the Universe (called by different names by different peoples of the world),

From Whom emanates all that is good and wise, and

Who is the Prime Source of all Authority,

We the people of Bharata (India),

Humbly acknowledging our devotion to Him;

And gratefully remembering our great leader Mahatma Mohandas Karamchand Gandhi and the innumerable sons and daughters of this land who have laboured, struggled and suffered for our freedom, And.'

[परमेश्वर की कृपा से, जो पुरुषोतम तथा ब्रह्मांड का स्वामी है (जो संसार के भिन्न-भिन्न लोगों द्वारा भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है),

जिससे समस्त सत् और ज्ञान प्रस्फुटित होता है और जो समस्त प्राधिकार का मूल स्रोत है,

हम, भारत (इंडिया) के लोग,

उसके प्रति अपनी भक्ति विनयपूर्वक स्वीकार करते हुये,

और अपने महान् नेता महात्मा गांधी और इस देश के उन असंख्य पुत्र पुत्रियों का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण कर जिन्होंने स्वतन्त्रता के लिए घोर परिश्रम तथा संघर्ष किया और कष्ट सहे,

और]

डॉ. पी.एस. देशमुख: मैं एक औचित्य प्रश्न करने के लिए खड़ा होता हूं। इस संशोधन में दो विशेष बातें हैं। इसमें ईश्वर का नाम रखा गया है और महात्मा गांधी का नाम लाया गया है। इन दोनों बातों का सभा विनिश्चय कर चुकी है। एक बात पर जो कुछ वाद-विवाद भी हुआ था और मत भी लिया गया था; दूसरी बात को माननीय सज्जन ने वापस ले लिया। अत: मैं इस बात का आग्रह करता हूं कि इस संशोधन को व्यवस्था के विरुद्ध ठहरा दिया जाये क्योंकि इस संशोधन की मुख्य बातों पर सभा पहले ही विनिश्चय कर चुकी है।

पंडित गोविन्द मालवीय: जिन शब्दों का मैंने प्रयोग किया था यदि उन शब्दों पर ध्यान दिया जाता तो यह स्पष्ट विदित हो जाता कि मैंने यह कहा था कि मैं उस संशोधन को पढ़ रहा हूं जिसको मैंने पेश करना चाहा था। मैंने कहा

[पंडित गोविन्द मालवीय]

था कि "वह इस प्रकार था।" यदि सभा मुझे एक क्षण का अवसर देती तो मैं यह कहने वाला था श्रीमान, कि मैंने इस संशोधन की सूचना दी थी, पर इस समय जो वाद-विवाद हुआ है उसको ध्यान में रखते हुए जो कुछ मैं पेश करना चाहता था वह यह है:

महात्मा गांधी और अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध रखने वाले अन्तिम अंश को मैं निकाल दूंगा और आरम्भ में के परमेश्वर शब्द को भी निकाल दूंगा। जो विचार यहां प्रकट किये गये हैं उनके अनुसार मैं यह कहने वाला था।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वे शब्द निकाल दिये गये।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** इसके बाद संशोधन इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

> "By the Grace of the Supreme Being, Lord of the Universe, called by different names...."

***मौलाना हसरत मुहानी:** क्या वे कोई नया संशोधन रख रहे हैं? मैं एक औचित्य प्रश्न करने के लिए खड़ा होता हूं। वे कोई नया संशोधन प्रस्थापित कर रहे हैं।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** इससे उस अयुक्तियुक्त बात का भी समाधान हो जायेगा जो यहां व्यक्त की गई थी। न तो हम ईश्वर का ईश्वर के रूप और न किसी व्यक्ति के विशिष्ट ईश्वर के रूप में उल्लेख करेंगे क्योंकि मेरे संशोधन में यह कहा गया है "संसार के भिन्न-भिन्न लोग भिन्न-भिन्न नाम से पुकारते हैं" और इस प्रकार हम अपनी प्रस्तावना में एक ऐसी बात रख सकेंगे जो अनादि काल से इस देश के लोगों के विचार और विश्वास का, परम्परा का, सभ्यता का तथा सम्पूर्ण जीवन के इतिहास का अति विशिष्ट तथा स्थायी लक्षण रही है। श्रीमान मैं निवेदन करता हूं कि हम यहां भारतीय जनता के प्रतिनिधियों के रूप में आये हुये हैं। ईमानदारी का यह तकाजा है कि हम यहां उनके विचारों का प्रतिपादन करें। इस प्रस्तावना में, श्रीमान......

***अध्यक्ष:** मैं औचित्य प्रश्न का निर्णय करूंगा। पहला प्रश्न यह है कि जो संशोधन अस्वीकार किया जा चुका है क्या यह उसके अंतर्गत है या नहीं। मैं समझता हूं कि यह उसके अंतर्गत है।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** अपमार्जनों के बाद भी, यदि आपका ऐसा विचार है तो मैं अपना स्थान ग्रहण करूं।

***अध्यक्ष:** परमेश्वर शब्द को केवल हटा कर ही आप उस संशोधन के क्षेत्र से बाहर नहीं निकल जाते हैं जिसे अस्वीकार किया जा चुका है।

***पंडित गोविन्द मालवीय:** मैंने समझा था कि हमारे कुछ मित्रों की आपत्ति 'ईश्वर' शब्द पर थी। श्रीमान्, मैं आपके नियम निर्देश का पालन करूंगा।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं अपने संशोधन संख्या 11 को पेश करना नहीं चाहता हूं, पर मैं डॉ. अम्बेडकर से यह पूछना चाहता हूं कि उन्होंने जो वचन दिये थे क्या वे उनका निर्वाह करेंगे।

***अध्यक्षः** यह एक अन्य विषय है।

***श्री महावीर त्यागीः** उन्होंने मुझ से कहा था कि जब प्रस्तावना पर वाद-विवाद हो उस समय मैं उनको याद दिला दूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यदि वचन-भंग किया जाता है तो मेरे मित्र को न्यायालय की शरण लेनी चाहिये।

***श्री महावीर त्यागीः** यह वचन-भंग करने का प्रश्न नहीं है। सम्पूर्ण प्रभुता निहित करने के बारे में जो कुछ डॉ. अम्बेडकर ने कहा था उस कार्रवाई के अनुसार मुझे आश्वासन दिया गया था। मैंने एक संशोधन पेश किया था और उन्होंने यह उत्तर दिया था कि उसका अर्थ "जनता में निहित" है, पर इस बात को इन शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं किया गया था, मैंने यह आग्रह किया था कि इसको सुनिश्चित कर देना चाहिये। डॉ. अम्बेडकर ने कहा "आपको इसमें संदेह है कि वह जनता में निहित है। मैं अपने मित्र को यह बता दूं कि मुझे कोई भी आपत्ति नहीं होगी।"

***अध्यक्षः** क्या कोई और संशोधन है?

***श्री महावीर त्यागीः** यह काम तो मसौदा समिति का है।

***श्री सतीश चन्द्र** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): सूची 21 में श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी और मेरे दोनों के नाम से एक संशोधन 452 इसी प्रकार का है।

***श्री महावीर त्यागीः** यदि आप मुझे अनुज्ञा दें तो मैं यह कहूंगा कि मसौदा समिति इस पर विचार कर लेगी।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि एक संशोधन इस प्रकार का है। जब हम उस पर आयेंगे तो हमें उसे लेना पड़ेगा। संशोधन संख्या 14 नाम के सम्बन्ध में कई संशोधन हैं। वे संशोधन अब पैदा ही नहीं होते।

क्या कोई सदस्य, जिसने प्रथम अंक में छपे हुये संशोधनों की सूचना दी है, अपना संशोधन पेश करना चाहता है?

***माननीय सदस्यः** जी नहीं।

***अध्यक्षः** मैं अनुपूरक सूची को लूंगा। मुद्रित अनुपूरक सूची में संशोधन हैं और मैं यह समझता हूं कि कोई भी सदस्य इन संशोधनों को भी पेश करना नहीं चाहते हैं।

***माननीय सदस्यः** जी नहीं।

(इस समय श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी बोलने के लिए खड़ी हुईं।)

***अध्यक्षः** आपका संशोधन तो अभी के संशोधनों में से है, मैं तो इस समय पुरानी मुद्रित सूची का विचार कर रहा हूं।

इसके बाद हम संशोधन संख्या 452 पर आते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** इसके पहले सूची 13 द्वितीय पृष्ठ पर संशोधन संख्या 313 है।

***अध्यक्ष:** हां है, आप उसे पेश कर सकते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम से आठ संशोधन हैं, मैं संशोधन संख्या 313, 314, 316, 317, 318, 319, 320 और 323 का निर्देश करता हूं। श्रीमान् मैं केवल एक संशोधन पेश करना चाहूंगा।

मैं संशोधन संख्या 313 का निर्देश करता हूं।

अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों की सूची (अंक-1) के संशोधन संख्या 1 के स्थान में निम्नलिखित संशोधन पेश किया जाये:

'कि प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जाये:–

'WE THE PEOPLE OF INDIA, having resolved to constitute India into a SECULAR CO-OPERATIVE COMMONWEALTH to establish SOCIALIST ORDER and to secure to all its citizens.

1. An adequate means of LIVELIHOOD
2. FREE AND COMPULSORY EDUCATION
3. FREE MEDICAL AID
4. COMPULSORY MILITARY TRAINING

do hereby ordain and establish this Constitution for India.' "

[हम, भारत के लोग, भारत को एक असाम्प्रदायिक सहयोगी राष्ट्र बनाने के लिए, समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को

1. जीविका के पर्याप्त साधन
2. नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा
3. चिकित्सा सम्बन्धी नि:शुल्क सहायता
4. अनिवार्य सैनिक शिक्षा प्राप्त कराने के लिए

इस संविधान को एतद्द्वारा विनियमित तथा स्थापित करते हैं]

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** ऊंट और मोटर साइकिल का क्या हुआ?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** इनके सम्बन्ध का सुझाव देना आपका काम है। श्रीमान्, 'असाम्प्रदायिक' शब्द को हमारे संविधान में स्थान नहीं मिला है। यह वह शब्द है जिस पर हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने सबसे अधिक जोर दिया है। मैं यह निवेदन करता हूं कि इस शब्द को अपनी प्रस्तावना में रखना चाहिये क्योंकि यह अल्पसंख्यक वर्गों की मानसिक तथा नैतिक अवस्था में मृदुलता उत्पन्न करेगा और

यह गुंडागीरी की उस भावना में रुकावट डालेगा जिसका राजनीति में बोलबाला है। मैंने एक और शब्द पर जोर दिया है। मैं 'समाजवादी' शब्द की ओर संकेत कर रहा हूं। मेरा विश्वास है कि भारत का भविष्य समाजवाद में ही है। मैं समाजवादी व्यवस्था में विश्वास करता हूं। जब मैं यह कहता हूं कि मेरा विश्वास समाजवादी व्यवस्था में है तो मेरा आशय यह नहीं है कि मैं इसके इतिहास के मार्क्सवादी निर्वचन को स्वीकार करता हूं। मैं न तो वर्ग युद्ध में विश्वास करता हूं और न भौतिकवादी दर्शन में जिनका समाजवादी क्षेत्रों में बड़ा व्यापक प्रचार है। समाजवाद से मेरा अभिप्राय एक समतल सामाजिक व्यवस्था से है। आय-समता के बिना अवसर-समता केवल कोरा नारा ही है। मेरा विश्वास है कि भारत में हमें एक नये प्रकार के समाजवाद का विकास करना है जो इस देश की परम्परा और इतिहास के अनुकूल हो। भौतिकवाद का सिद्धान्त एक सुदृढ़ सिद्धांत है। मैं समझता हूं कि हम भारत के लोगों को दार्शनिक बातों में जर्मनी से कोई शिक्षा नहीं लेनी है।

इसके बाद मैं कुछ और उन शब्दों को लेता हूं जो प्रस्तावना में रखे गये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ विचार-अस्पष्ट हैं। मेरी यह धारणा है कि 'स्वातन्त्रय' और 'समता' शब्द साथ-साथ नहीं आते हैं। ये बेमेल शब्द हैं। वे एक दूसरे के शत्रु हैं। एक की हानि ही दूसरे के लाभ का कारण हो सकती है। आपकी दयापूर्ण अनुज्ञा से मैं एक पुस्तिका से एक छोटा-सा कुछ पंक्तियों का अंश उद्धृत करूंगा।

मूरियल जैगर की "स्वातंत्र्य और समता" (Liberty versus Equality) नामक पुस्तक का मैं उल्लेख कर रहा हूं।

"यह बात अब अधिकाधिक व्यापक रूप में स्वीकार होती चली जा रही है कि सम्पत्ति पर स्वामित्व उन स्वतन्त्रताओं में से है जो अन्य व्यक्तियों को स्वतन्त्रता का खंडन करता है और इस कारण इसे मिटा देना चाहिये या बहुत अधिक निर्बन्धित कर देना चाहिये। और इस स्थल पर आकर यह कहा जा सकता है कि "स्वातन्त्र्य का यह आत्मविरोध" बड़ा तीव्र रूप धारण कर लेता है। यदि ऐसी प्रत्येक स्वतन्त्रता को छीन लिया जाता है जो अपने साथियों को हानि पहुंचाती है या पहुंचा सकती है तब तो स्वतन्त्रता नाम की कोई वस्तु ही न रहेगी। निजी सम्पत्ति के मिटाने या उसको निर्बन्धित करने में एक प्रकार के लोक-नियंत्रण का भाव निहित है। लोक-नियंत्रण से अभिप्रेत है सार्वजनिक योजना, क्योंकि सम्पत्ति पर से निजी अधिकार छीनने का पूर्ण उद्देश्य सार्वजनिक कल्याण ही है इस निरर्थक सिद्धान्त की खूब धज्जियां उड़ चुकी हैं; पर इसके विवरण और उस प्रभाव में हमारी रुचि हो जाती है जो इस निरर्थक सिद्धान्त के प्रयोग करने से हमारे दिन प्रतिदिन, वर्ष प्रतिवर्ष और पीढ़ी दर पीढ़ी के जीवन पर पड़ेगा।

"सार्वजनिक योजना का अर्थ है कि उद्यम, श्रम और वितरण को कठोरतापूर्वक विनियमित कर देना चाहिये। अत: इसका अर्थ यह हुआ कि व्यक्ति को अपनी उप-जीविका पसन्द करने के कम अवसर होने चाहियें क्योंकि सम्भवत: योजना जब तक क्रियान्वित नहीं की जा सकती तब तक कि जहां आवश्यकता है वहां, बिना इस बात के विचारे कि पर्याप्त संख्या में लोग उस प्रकार के कार्य को करना चाहते हैं या नहीं, उस वृत्ति में श्रमिकों को लगाया जाये।"

श्रीमान्, कुछ चन्द मिनटों के लिए आप मुझ पर अनुग्रह करेंगे।

***अध्यक्षः** क्या आप पूरी पुस्तक पढ़ना चाहते हैं?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** जी नहीं।

***अध्यक्षः** मैंने समझा था कि आपने यह कहा था कि मैं एक वाक्य ही पढूंगा, पर आपने तो कम से कम एक पूरी की पूरी कंडिका पढ़ डाली।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मैंने कुछ पंक्तियां ही पढ़ी है। मैं 12 पंक्तियों की एक कंडिका समाप्त करना चाहता था।

मैं अभी एक और बात पर जोर दूंगा। मेरी यह धारणा है कि स्वातन्त्र्य और समता केवल असंगत ही नहीं है, वरन् उनको केवल एक वर्गविहीन समाज में ही संगत बनाया जा सकता है और इस सम्बन्ध में मैं एक और कंडिका का उल्लेख करूंगा और आपकी अनुज्ञा से मैं कुछ पंक्तियां पढ़ कर सुनाऊंगा:

> "अंतिम लक्ष्य के लिए मार्क्सवादी, जो काल्पनिक साम्यवादियों के प्रति बहुत उग्र हैं, सदैव कदाचित् करुणाजनक रूप से अस्पष्ट रहे हैं। पर कोई भी व्यक्ति यह मालूम कर सकता है कि उन्होंने एक ऐसे राज्य की पूर्वकल्पना कर ली थी जिसमें प्रत्येक व्यक्ति सार्वजनिक कल्याण के लिए हर्षपूर्वक कार्य करेगा, यदि वह कोई वस्तु चाहता है तो सार्वजनिक भंडार से वह स्वयं प्राप्त कर सकता है और वह भंडार इतना परिपूर्ण होगा कि किसी स्पर्धा या स्वार्थ-संघर्ष का संकट नहीं होगा। उनका विचार है कि जिस समाज पर बल का प्रयोग नहीं है और जो दासता के अधीन नहीं है उसका इसी रूप में स्वाभाविक विकास होगा और एक वर्गहीन समाज में शुभ सामाजिक आचरणों की स्वयं वृद्धि होती रहेगी और इस प्रकार राज्य के विशेष तंत्र शनैःशनैः व्यर्थ होते जायेंगे इससे यह प्रकट होता है कि अंतिम साम्यवादी विचार पूर्णसमता से संयुक्त पूर्ण स्वातन्त्र्य है।"

राष्ट्र के समक्ष मैं असम्भव आदर्श नहीं रखना चाहता हूं। श्रीमान, केवल वर्ग-हीन समाज में ही हम इन दो स्वातन्त्र्य और समता के विचारों में सन्धि कर सकते हैं।

मैंने यह सुझाव दिया है कि प्रस्तावना में इन आदर्शों के रखने के स्थान में हमें अपने समक्ष कुछ व्यावहारिक आदर्श रखने चाहिये। यदि हम जीविका के पर्याप्त साधन, निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा, चिकित्सा सम्बन्धी निःशुल्क सहायता और अनिवार्य सैनिक शिक्षा की व्यवस्था करने में सफल हुये तो मैं समझूंगा कि हमारे प्रयत्न सार्थक हुये हैं। राष्ट्र के समक्ष मैं ऐसे असम्भव आदर्श नहीं रखना चाहता हूं जिनके सम्बन्ध में हमें पूर्ण विश्वास है कि हम उनको न अपने जीवन काल में और न अपने नाती पोतों के जीवन काल में प्राप्त कर सकेंगे। समाप्त करने से पूर्व मैं एक और प्रश्न का उल्लेख करना चाहूंगा। इस प्रस्तावना में मैं "सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता" शब्दों पर आपत्ति करता हूं। मेरी यह धारणा है कि आस्टिन के सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के समूचे सिद्धान्त का खंडन हो चुका हैं किसी विधि सम्बन्धी विचारधारा का वास्तविक तथ्यों से कुछ न कुछ सम्बन्ध होना चाहिये। यदि ऐसा नहीं है तो उस विचारधारा का कुछ भी मूल्य नहीं है।

श्रीमान यह कहना ठीक नहीं है कि नेपाल की सरकार सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न है। उसे अधिकार है; वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न है और वह संयुक्त राज्य अमरीका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर सकती है। सोवियत रूस की सरकार को रूस के साम्यवादी पक्ष को खत्म करने की स्वतन्त्रता है। हम जानते हैं, कि दोनों आन्तरिक और बाह्य विषयों में कई बातों के कारण राज्य को एक घेरे में डाल दिया जाता है। यदि नेपाल सरकार अमरीका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करती है या सोवियत रूस साम्यवादी पक्ष को खत्म करने का प्रयत्न करता है तो हम जानते हैं कि परिणाम क्या होगा। इसलिए मेरी यह धारणा है कि हमें "सम्पूर्ण-प्रभुत्व सम्पन्न" शब्द पर अनुचित रूप में जोर नहीं देना चाहिये। मेरा यह विचार है कि यह आदर्श न तो आवश्यक है और न वांछनीय है क्योंकि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता युद्ध की ओर ले जाती है वह साम्राज्यवाद का कारण बनती है (*तालियां तथा बाधायें*)।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि माननीय सदस्य को संकेत मिल गया होगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** आपसे रक्षा पाने का मुझे अधिकार है। इस तरह से मुझे नहीं दबाया जा सकता है। मैं अपना भाषण देता रहूंगा और सदस्य अपने हाथ पीटते रहें, मैं भाषण देता रहूंगा और जब तक आप भाषण समाप्त करने को नहीं कहेंगे मैं बोलता रहूंगा। श्रीमान् अपना विरोध प्रकट किये बिना.....

***श्री महावीर त्यागीः** एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान् मैं आशा करता हूं कि माननीय सदस्यों के अधिकारों के संरक्षण होने के नाते आप इस बात का ध्यान रखेंगे कि सदस्य को इस प्रकार शोर मचा कर चुप नहीं किया जाये।

***अध्यक्षः** शोर मचा कर चुप करने का प्रयास नहीं है। वे ताली बजा कर वक्ता को निरुत्साहित करना चाहते है। अच्छा हो कि माननीय सदस्य अपना भाषण समाप्त कर दें।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** श्रीमान, अब मैं इस विषय के केवल एक पहलू को लूंगा। 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्द इस प्रस्तावना में हैं। मैं भी मोटा बेशरम हूं। मैं अपना स्थान कभी इस प्रकार ग्रहण नहीं करूंगा। अपनी बातें कह कर ही मैं अपना स्थान ग्रहण करूंगा। मैं समझता हूं कि यह 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्द का प्रयोग सर्वथा गलत है। राज्य का निर्माण व्यक्तियों द्वारा होता है। क्या किसी प्रकार से भी व्यक्ति सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न है? यदि व्यक्ति सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न नहीं है तो वह राज्य जिसका निर्माण व्यक्तियों से होता है किस प्रकार सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न हो सकता है। यह एक प्रसिद्ध तथ्य है कि मनुष्य की अपनी कोई स्वतन्त्र इच्छा नहीं होती और वह वंश तथा वातावरण सम्बंधी बातों के घेरे में पड़ जाता है। दोनों मानसिक तथा शारीरिक रूप में इस विश्व में उसका स्थान नगण्य सा है। जबकि मनुष्य इतना नगण्य है, जबकि संसार में मनुष्य की सत्ता कुछ भी नहीं है तो राज्य जिसका निर्माण व्यक्तियों से होता है वह किस प्रकार सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न हो सकता है? अतः श्रीमान, सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के इस विचार के मैं विरुद्ध हूं।

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

हम सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न हैं। हम केवल वहीं तक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न हैं जहां तक कि किसी आधुनिक राज्य का सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न होना सम्भव है। हम आस्टिन की उस सीमा तक पहुंचने की आकांक्षा नहीं करते हैं जो जैसाकि मैं कह चुका हूं एक गलत विचारधारा पर आश्रित हैं और भ्रमात्मक हैं। 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्दों के निकाल देने से उस सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के प्रकार्यों के प्रयोग में हमें कोई बाधा नहीं होगी जो भारत सरकार में निहित कर दी गई है। इससे सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता में लेशमात्र की कमी नहीं आती है। पर इन 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्दों के रहने देने से हम राष्ट्र के समक्ष एक गलत आदर्श, एक भ्रमात्मक आदर्श रख रहे हैं। इस कारण मैं इस प्रस्तावना के विरुद्ध हूं। हम कुछ व्यावहारिक आदर्श रखें जिनको हम अपने या अपनी संतानों के जीवन काल में प्राप्त कर सकें।

***अध्यक्षः** क्या कोई व्यक्ति इस संशोधन पर कुछ कहना चाहता है? मैं इस संशोधन पर मत लूंगा।

प्रश्न यह हैः

"कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 1 के स्थान में निम्नलिखित संशोधन पेश किया जायेः

कि प्रस्तावना के स्थान में निम्नलिखित प्रस्तावना रखी जायेः

"WE THE PEOPLE OF INDIA, having resolved to constitute India into a SECULAR CO-OPERATIVE COMMONWEALTH to establish SOCIALIST ORDER and to secure to all its citizens—

1. An adequate means of LIVELIHOOD
2. FREE AND COMPULSORY EDUCATION
3. FREE MEDICAL AID
4. COMPULSORY MILITARY TRAINING

do hereby ordain and establish this Constitution for India."

[हम, भारत के लोग, भारत को एक असाम्प्रदायिक सहयोगी राष्ट्र बनाने के लिए, समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को—

1. जीविका के पर्याप्त साधन
2. निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा
3. चिकित्सा सम्बन्धी निःशुल्क सहायता
4. अनिवार्य सैनिक शिक्षा

प्राप्त कराने के लिए

इस संविधान को एतद्द्वारा विनियमित तथा स्थापित करते हैं]

संशोधन अस्वीकार किया गया।

अध्यक्ष: अब हम उस संशोधन को लेंगे जिसकी सूचना श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी ने दी है, संशोधन संख्या 452।

श्री एच.वी. कामत: एक औचित्य प्रश्न है, श्रीमान, क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूं कि मैंने अपना संशोधन संख्या 2 पेश नहीं किया है? यह मेरे संशोधन के सम्बन्ध में है। अत: वह पेश नहीं हो सकता है।

श्री महावीर त्यागी: एक औचित्य प्रश्न है, श्रीमान, क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूं.....

अध्यक्ष: औचित्य प्रश्न कर दिया गया है। मैं उस पर विचार कर रहा हूं। मुझे यह देख लेने दीजिये कि उन्होंने क्या पेश किया है और क्या पेश नहीं किया है।

श्री महावीर त्यागी: मेरे माननीय मित्र श्री कामत द्वारा उठाये गये औचित्य प्रश्न पर मैं निवेदन करना चाहता हूं कि पूर्व अवसरों पर सभा में ऐसे संशोधनों को पेश होने दिया गया है। समय निकल जाने के कारण जब संशोधन भेजने का अवसर नहीं रह जाता था तो हम में से बहुतों ने अपने संशोधनों को पहले संशोधनों से जोड़ कर या उनसे सम्बन्ध स्थापित कर उनको रखने का अवसर प्राप्त किया था। यदि वे सदस्य अपने संशोधन पेश नहीं करते थे तो यह उन अन्य सदस्यों का दोष नहीं है जो अपने विचार और अपने संशोधन लेकर आये हैं। क्योंकि अपने संशोधनों को समयान्तर्गत सुसंगत बनाने के लिए अन्य कोई चारा नहीं है सिवा इसके कि वे अपने संशोधनों को उन पहले संशोधनों से सम्बद्ध करें जिनकी सूचना आ चुकी है। अत: श्रीमान्, मैं निवेदन करूंगा कि वाद-विवाद के इस अंतिम काल में आप कृपया कोई ऐसा नियम निर्देश न करें जिससे इस संशोधन के पेश होने में बाधा पड़ जाये।

श्री नज़ीरुद्दीन अहमद: श्रीमान, क्या मैं यह बता सकता हूं कि यह किसी अन्य संशोधन पर संशोधन नहीं है जिस दशा में कि नियमों द्वारा यह रोका जा सकता था, वरन् यह तो किसी अन्य संशोधन के निर्देश सहित एक संशोधन है। इस कारण यह संशोधन व्यवस्था के अनुकूल है।

अध्यक्ष: मैंने वास्तव में ऐसे संशोधनों को पेश होने दिया है। इस कारण मैं इसे नियम विरुद्ध नहीं ठहरा सकता हूं।

श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी: श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करती हूं:

> "कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 2 में प्रस्थापित प्रस्तावना की प्रथम कंडिका के स्थान में निम्नलिखित कंडिका रखी जाये:
>
> 'We on behalf of the people of India from whom is derived all power and authority of the Independent India....."

(हम, भारत की जनता की ओर से जिससे स्वाधीन भारत को...)

[श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी]

श्रीमान, आपकी अनुज्ञा से मैं 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' शब्द को छोड़ देना चाहूंगी।

" 'Its constituent parts and organs of Government, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic and to secure to all its citizens:—' "

(उसके अंगभूत भागों को तथा सरकार के अंगों को सब शक्ति और प्राधिकार प्राप्त होते हैं, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को:)

श्रीमान, मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी ने मेरे संशोधन को एक बात से सबल बना दिया है और मेरे पक्ष को और भी अधिक दृढ़ बना दिया है। मैं समझती हूं कि जिस प्रस्तावना पर इस समय हम विचार कर रहे हैं वह संविधान का एक बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है और हम जैसे व्यक्तियों के लिये, जिनकी मानसिक प्रवृत्तियां विधि सम्बन्धी बातों की ओर नहीं हैं, यह हमारी स्वतन्त्रता के अधिकार पत्र के रूप में है तथा हमारी सफलताओं और असफलताओं के मापदंड के रूप में है। यह उस लक्ष्य को निर्धारित करता है जिसकी ओर से हम अग्रसर हो रहे हैं और इस कारण यदि इस सभा के सदस्य कुछ धैर्य धारण कर मुझे जो कुछ हम इस विषय के सम्बन्ध में समझते हैं उसे व्यक्त करने देंगे तो मैं स्वयं उनकी बड़ी कृतज्ञ होऊंगी।

श्रीमान, मैं समझती हूं कि जो संविधान हमने बनाया है उसके द्वारा राष्ट्रपति और संसद में व्यापक शक्तियां निहित की गई हैं। इस समय मैं यह नहीं समझती हूं कि हमें यह सोच समझ कर ही सन्तुष्ट हो जाना चाहिये कि हमारी जनता ही वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न प्राधिकार है जिससे समस्त शक्ति प्राप्त होती है और जिसमें समस्त सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न प्राधिकार निहित रहते हैं केवल इस बात में विश्वास करके कि पांच वर्ष में केवल एक बार वह निर्वाचन स्थल पर मत देने जायेगी इसलिए उसकी सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता सुरक्षित है। अत: मैं समझती हूं कि प्रस्तावना में उस सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता का उल्लेख कर देना चाहिये। जो कुछ सभा पारित कर चुकी है मैं उससे परे नहीं गयी हूं। जिस शब्दावली को मैंने उद्धृत किया है वह अक्षरश: उस लक्ष्यमूलक संकल्प में से ली गई है जिसे इस सभा में 1947 में पहले पारित किया था। जैसाकि मैंने पहले कहा था कि इस संविधान के तीन भाग अथवा सम्भवत: इस संविधान में की तीन घटनायें, एक लक्ष्यमूलक संकल्प, दूसरी राज्य की नीति सम्बन्धी लक्ष्यों के सम्बन्ध का कथन और यह प्रस्तावना, ऐसी समझी जाती हैं कि इनका संविधान पर कोई विधि सम्बन्धी बन्धन नहीं है। पर वास्तव में वे ही जिस संविधान का हमने यहां निर्माण किया है उसका प्राण हैं। मैं आपका अधिक समय लेना नहीं चाहती हूं। मैं अपने तर्क को अपने माननीय मित्र श्री त्यागी द्वारा उद्धृत उस भाषण से पुष्ट करूंगी जिसको उन्होंने डॉ. अम्बेडकर के उस भाषण में से लिया था जिसे उन्होंने प्रस्तावना पेश करते समय दिया था। उस समय मैं सभा में उपस्थित न थी। पर उससे मेरे विचार की पुष्टि होती है कि जनता की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता का संविधान में कहीं न कहीं उल्लेख होना चाहिये। इन शब्दों के सहित मैं अपना संशोधन पेश करती हूं।

***श्री महावीर त्यागी:** अपनी माननीया मित्र श्रीमती बनर्जी के संशोधन का समर्थन करते हुए मैं सभा को 15 नवम्बर 1948 की कार्रवाई की याद दिलाऊंगा जब मैंने एक ऐसा ही संशोधन पेश किया था। उसके शब्द इस प्रकार के थे कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित होगी। उस पर खूब वाद-विवाद हुआ था और मुझे यह आश्वासन दिया गया था कि जिस अनुच्छेद पर मैं वह संशोधन पेश कर रहा था वह उस संशोधन के लिये ठीक अनुच्छेद न था और मुझे यह वचन दिया गया था कि जब प्रस्तावना पर वाद-विवाद होगा उस समय इस संशोधन पर विचार किया जायेगा। अब वह समय है जबकि मैं सभा को उस वचन की याद दिलाऊं जो मसौदा समिति के सभापति ने मुझे दिया था। मैं इस बात के लिए बड़ा उत्सुक हूं कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के स्थल की परिभाषा हो जानी चाहिये। मैं इसके प्रति और भी अधिक उत्सुक इस कारण हूं कि अब तक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता इंग्लैंड के राजा में निहित है। वह एक अंग्रेज है जिसमें पिछली शताब्दि से हमने सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता निहित कर दी है। अत: यदि हम शब्दों में यह नहीं कहेंगे कि यह संपूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता कहां निहित होगी तो वह एक अंग्रेज में निहित बनी रहेगी। हम उसे उससे पृथक् करना चाहते हैं। अत: हमें निश्चित रूप से यह कह देना चाहिये कि इंग्लैंड के राजा के साथ अब सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता नहीं है।

और फिर मैं यह भी नहीं चाहता हूं कि इस या किसी भावी सरकार के लिये संयुक्त राष्ट्र या संयुक्त बन्धुता या संयुक्त नागरिकता अथवा वह चाहे जो कुछ भी हो—उसके नाम से देश की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता के सौदा करने का कोई संदेह या संकट बना रहें। अत: स्पष्ट शब्दों में सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित होनी चाहिये। चीन ने अपने संविधान में यह रखा है कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता चीन की समस्त जनता में निहित है। चाहे साम्यवादियों का चीन पर अधिकार रहे या न रहे जनता तो रहेगी ही। यदि जनता साम्यवादी हो जाती है या किसी अन्य पक्ष को अपना लेती है तो पशु तो नहीं हो जाती। भारत में लोग तो रहेंगे ही और भारत के लोगों में सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता निहित रहेगी। इसकी परिभाषा हो जानी चाहिये जिससे कि सरकार इसका दुरुपयोग न कर सके। वह सरकार में भी निहित नहीं होती है। सरकार केवल जनता का प्रतीक है। क्योंकि डॉ. अम्बेडकर ने इसे संविधान में रखना स्वीकार कर लिया है मैं इस विषय को बढ़ाना नहीं चाहता हूं और मैं आशा करता हूं कि वे कृपा कर इन शब्दों को स्थान देंगे और सदैव के लिए यह स्पष्ट कर देंगे कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित है न कि किसी विदेशी में जैसी कि इस समय वह है और न किसी राज्य में चाहे उस राज्य का नाम "सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राज्य" हो।

***आचार्य जे.बी. कृपलानी:** अध्यक्ष महोदय, मेरा विचार भाषण देने का नहीं था। पर कुछ मित्र यह चाहते थे कि इस अंतिम समय में जबकि हम अपना संविधान प्राय: समाप्त कर रहे हैं मैं चन्द शब्द कहूं। मेरे कुछ मित्रों ने यह भी कहा कि एक औपचारिक भाषण द्वारा मैंने इस सभा की कार्यवाही का सूत्रपात किया था और इस द्वितीय पठन के समय जो समस्त व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए अंतिम पठन ही है मैं कार्रवाई को अपने भाषण द्वारा समाप्त करूं।

[आचार्य जे.बी. कृपलानी]

श्रीमान, एक अच्छे यजमान की तरह आपने बढ़िया से बढ़िया शराब को अन्त के लिए रख छोड़ा है। इस प्रस्तावना को संविधान के आरम्भ में आना चाहिये था और वह संविधान के आरम्भ में दी भी गई है। इसके लिए एक कारण भी था कि प्रत्येक विवरणपूर्ण उपबन्ध के लिए जिसे हम संविधान में रखना चाहते थे यह हमारे सामने रहती। यह हमें सावधान करती रहती कि कहीं हम उन आधारभूत सिद्धान्तों से दूर तो नहीं हो रहे है जिनको हम प्रस्तावना में निर्धारित कर चुके हैं। अभी हाल ही में हम लोकतन्त्र के महान सिद्धान्त के विरुद्ध चले गये थे। यह अभागा देश कई जातियों तथा आर्थिक वर्गों में विभाजित है। ये विभाजन असंख्य हैं। मैं समझता हूं कि संसार के संविधानों में यह प्रथम अवसर है कि दो प्रशासकों की एक नई जाति बनाई गई है और उसको एक विशेषाधिकार प्राप्त स्थिति में रखा गया है। उसको ऐसी स्थिति में रखा गया है कि जनता के प्रसिद्ध प्रतिनिधि भी उसके विशेषाधिकारों को नहीं छू सकते चाहे वे जनता विरुद्ध ही हों। मैं निवेदन करता हूं कि यह हमारे संविधान के प्रथम मूलभूत सिद्धान्तों के विरुद्ध है।

श्रीमान, इस गम्भीर समय में मैं सभा को यह याद दिलाना चाहता हूं कि इस प्रस्तावना में हमने जो सिद्धांत रखे हैं वे केवल नैतिक तथा राजनैतिक सिद्धांत ही नहीं हैं महान् नैतिक तथा आध्यात्मिक सिद्धांत भी हैं और यदि मैं कह सकता हूं तो यह कहूंगा कि ये गहन सिद्धांत हैं। वास्तव में ये प्रथम विधि सम्बन्धी तथा संविधानिक सिद्धान्त नहीं थे वरन् ये यथार्थ में नैतिक तथा आध्यात्मिक सिद्धान्त थे। यदि हम इतिहास की ओर ध्यान दें तो हमें विदित होगा कि चूंकि वकीलों और राजनीतिज्ञों ने अपने सिद्धांतों को विधि सम्बन्धी तथा संविधानिक रूप दिया इस कारण उनका जीवन और उनकी शक्ति क्षीण हो गई और अब भी क्षीण होती जा रही है। लोकतन्त्र को ही लीजिये। यह क्या है? उसमें मानव समता का भाव निहित है, उसमें बन्धुता का भाव निहित है। और सबसे बड़ी बात यह है कि उसमें अहिंसा के महान् सिद्धान्त का भाव निहित है। जहां हिंसा है वहां लोकतन्त्र कैसे हो सकता है? लोकतन्त्र की साधारण परिभाषा तक यह है कि सर तोड़ने की अपेक्षा हम सर गिनते हैं। तो फिर लोकतन्त्र के मूल में यह अहिंसा है। और मैं यह निवेदन करता हूं कि अहिंसा का सिद्धान्त एक नैतिक सिद्धांत है। वह एक आध्यात्मिक सिद्धान्त है वह एक गहन सिद्धान्त है। यह वह सिद्धान्त है जो यह बताता है कि जीव एक है, आप उसका विभाजन नहीं कर सकते हैं और हम सबों में वही एक जीव स्पंदन करता है। बाइबिल इसे इस रूप में कहती है कि "हम सब ईश्वर की संतान हैं इसलिये एक हैं" और वेदान्त इसे इस रूप में कहता है "यह सब एक ही ब्रह्म है"। यदि हम लोकतन्त्र का प्रयोग केवल एक विधि सम्बन्धी संविधानिक और औपचारिक योजना के रूप में करना चाहते हैं तो मैं निवेदन करता हूं कि हम असफल होंगे। चूंकि लोकतन्त्र को हमने संविधान के मूल में रखा है श्रीमान्, मैं चाहता हूं कि समस्त देश 'लोकतन्त्र' के नैतिक, आध्यात्मिक और गहन भाव को समझ ले। यदि नहीं समझा तो हम उसी प्रकार असफल होंगे जैसे और लोग अन्य देशों में असफल हुये हैं। लोकतंत्र को स्वैरतंत्र बना दिया जायेगा और फिर उसको साम्राज्यतंत्र बना दिया जायेगा और फिर एकतन्त्र हो जायेगा। पर एक नैतिक सिद्धान्त के रूप में उसे जीवन में चरितार्थ करना चाहिये। यदि उसको जीवन में चरितार्थ नहीं किया जाता है और समूचे सिद्धान्त

को जीवन के सब अंगों में चरितार्थ नहीं किया जाता है तो वह केवल एक औपचारिक तथा विधि सम्बन्धी सिद्धान्त रह जाता है। हमें इस बात पर ध्यान रखना है कि हम इस लोकतन्त्र को अपने जीवन में चरितार्थ करें। लोकतन्त्र को केवल विधि सम्बंधी और राजनैतिक क्षेत्र में रखना लोकतन्त्र से असंगत बात होगी। राजनैतिक रूप में हम लोकतंत्रवादी हैं पर आर्थिक रूप में हम इतने वर्गों में विभाजित हैं कि इन वर्ग भेदों को मिटाया नहीं जा सकता है। यदि हमको लोकतन्त्रवादी बनना है तो हमें आर्थिक स्थिति में भी ऐसा ही बनना है।

मैं यह भी कहता हूं कि लोकतंत्रवाद जाति-व्यवस्था से असंगत है। जाति-व्यवस्था सामाजिक शिष्ट-जन-सत्तावाद है। जातिभेद और वर्गभेद को हमें मिटा देना चाहिये। अन्यथा हम लोकतन्त्रवाद की शपथ ग्रहण नहीं कर सकते हैं। और हमें यह याद रखना चाहिये कि आर्थिक लोकतंत्र का केवल यही अर्थ नहीं है कि वर्गभेद न रहे, कोई गरीब तथा अमीर न रहे; वरन् यह कि यदि जनता दैवयोग से गरीब है तो राज्य स्वयं अपना जीवन इस रीति से बिताये कि वह उन गरीबों के जीवन के अनुसार हो। यह आर्थिक समता नहीं है कि शान शौकत के लिए हम हजारों लाखों रुपया खर्च कर दें। और यह भी लोकतन्त्र नहीं है कि राष्ट्रपति भवन के प्रत्येक कोने पर लोगों को निश्चल मूर्तिवत् खड़े होने के लिए बाध्य किया जाये। ऐसी बातें व्यक्तियों के गौरव के विरुद्ध हैं। यदि हम लोकतन्त्र स्थापित करना चाहते हैं तो उसे हमें अपने सम्पूर्ण जीवन में, उसके सब अंगों में चाहे उसका सम्बन्ध प्रशासन से हो समाज से हो या आर्थिक क्षेत्र से हो, स्थापित करना पड़ेगा। यह बात हमें जाननी चाहिये और समझ लेनी चाहिये।

हमने यह भी कहा है कि हम विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता रखेंगे। हमें इसकी जटिलता को भी समझ लेना चाहिये। इन सब स्वतन्त्रताओं की अहिंसा के आधार पर ही प्रत्याभूति हो सकती है। यदि हिंसा है तो आप विचार की स्वतन्त्रता नहीं पा सकते हैं, आप अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता नहीं पा सकते हैं, आप धर्म की स्वतन्त्रता या उपासना की स्वतन्त्रता नहीं पा सकते हैं। और इस अहिंसा का प्रसार इतना होना चाहिये कि वह हमें अन्य व्यक्ति के प्रति केवल सहिष्णु ही न बनाये जैसा कि लौकिक रूप में कहा जाता है वरन् किसी सीमा तक हम उसके विचारों को उसके लिए अच्छा समझें। केवल सहिष्णुता से ही हमें बहुत अधिक सहायता नहीं मिलेगी। बहुत से व्यक्ति सहिष्णु मात्र हैं। क्यों? क्योंकि वे उदासीन हैं। वे कहते हैं "इस व्यक्ति की उपासना हमारी उपासना से भिन्न है। वह गलत है। वह व्यक्ति अवश्य नरकगामी होगा; होने दीजिए, मुझे क्या मतलब।" यह सहिष्णुता नहीं है। यह तो असहिष्णुता है। यदि दैहिक रूप में अहिंसा प्रयोग में नहीं लाई जाती है तो इसलिये कि अहिंसा का प्रयोग सदैव सम्भव नहीं; पर मानसिक हिंसा तो है ही। हमें एक दूसरे के धर्म का सम्मान करना चाहिये। हमें उसका सम्मान इस रूप में करना चाहिये कि उसमें सत्य का तत्व है। संसार का कोई धर्म पूर्ण नहीं है परन्तु फिर भी ऐसा कोई धर्म नहीं है जिसमें ईश्वरीय सत्य का कुछ तत्व न हो।

इसके बाद हमने कहा है कि प्रतिष्ठा और अवसर की समता होनी चाहिये। इसका यह अर्थ है कि हमारे सरकारी कार्यों में हमको पूर्णतया कलंक मुक्त रहना चाहिये, कुल-पोषणता नहीं होनी चाहिये, पक्षपात नहीं होना चाहिये, "अपना" "पराया" नहीं होना चाहिये। यह हो सकता है। प्रतिष्ठा की समता और अवसर

[आचार्य जे.बी. कृपलानी]

की समता हम केवल तभी दे सकते हैं जबकि जिसे हम "अपना" समझते हैं उसे पीछे रखें और जिसे "अपना नहीं" समझते हैं उसे आगे रखें। जब तक हम ऐसा नहीं करते तब तक हम अपने संविधान के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकेंगे।

बन्धुता के महान सिद्धान्त को मैं फिर से लेता हूं जो लोकतन्त्र से सम्बंधित है। इसका अर्थ यह है कि हम सब उसी एक ईश्वर की सन्तान हैं जैसाकि कोई धार्मिक व्यक्ति कहेगा और एक रहस्यवादी यह कहेगा कि हम सबों में एक ही जीव है या बाइबिल यह कहती है "हम सब एक हैं"। इसके बिना बन्धुता हो ही नहीं सकती। अतः मैं चाहता हूं कि यह सभा इस बात को याद रखे कि जो हमने घोषित किये हैं वे केवल विधि सम्बन्धी संविधानिक और औपचारिक सिद्धान्त ही नहीं हैं वरन् नैतिक सिद्धान्त भी हैं, और नैतिक सिद्धान्तों को जीवन में चरितार्थ करना पड़ता है। उनको चरितार्थ करना पड़ेगा चाहे निजी जीवन हो या सार्वजनिक, चाहे वाणिज्यिक जीवन हो या राजनैतिक जीवन हो या एक प्रशासक का जीवन हो। उनको सर्वत्र चरितार्थ करना पड़ेगा। यदि अपने संविधान को सफल बनाना है तो हमें इन बातों को याद रखना होगा।

श्रीमान, एक बात और कह कर मैं समाप्त करने वाला हूं। मैं समझता हूं कि श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी द्वारा प्रस्थापित संशोधन स्वीकार कर लेना चाहिये, क्योंकि उसमें यथार्थ स्थिति का वर्णन है और इस कारण प्रस्तावना में उसको रख देना चाहिये। रस्मी मौकों पर, महान अवसरों पर, महत्वपूर्ण अवसरों पर हमें स्वयं अपने आपको यह याद दिलानी होती है कि हम यहां जनता के प्रतिनिधि के रूप में हैं। इतना ही नहीं बल्कि इससे भी अधिक। हमें स्वयं अपने आपको यह याद दिलानी होती है कि हम जनता के सेवक हैं। हम बहुधा यह भूल जाते हैं कि हम यहां प्रतिनिधि के रूप में हैं। हम बहुधा यह भूल जाते हैं कि हम जनता के सेवक हैं। सदैव यही होता है कि हमारे विचारों और कर्मों के कारण हमारी भाषा इस आधारभूत विचार के अनुसार नहीं होती है। एक मंत्री "हमारी सरकार" कहता है "जनता की सरकार" नहीं कहता। प्रधान मंत्री "मेरी सरकार" कहता है "जनता की सरकार" नहीं कहता। अतः इस गंभीर अवसर पर स्पष्ट तथा विशिष्ट रूप में यह निर्धारित करना आवश्यक है कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित है और वही उसका उद्गम है। (*तालियां*) अतः मैं आशा करता हूं कि यह सभा श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी के संशोधन को स्वीकार करेगी।

***अध्यक्षः** क्या कुछ अन्य व्यक्ति भाषण देना चाहते हैं?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान, आचार्य कृपलानी के प्रभावपूर्ण शब्दों के कारण एक बात की व्याख्या आवश्यक हो जाती है। मैं यह सम्मानपूर्वक कहता हूं कि उनके ऐसे विचार प्रतीत होते हैं कि लोकतन्त्र की सफलता संविधान में कुछ मीठे तथा मधुर शब्दों के पुरःस्थापन पर निर्भर है। पर मैं निवेदन करता हूं कि लोकतन्त्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसको किस प्रकार व्यवहार में क्रियान्वित किया जाता है। उसका इस बात से कोई सम्बन्ध नहीं है कि हम प्रस्तावना या संविधान में क्या कहते हैं। लोकतंत्र के वास्तविक क्रियाकरण पर उसकी सफलता निर्भर करती है।

***माननीय सदस्यः** विवादान्त, विवादान्त।

***अध्यक्ष:** मैं यह मान लेता हूं कि विवादान्तक प्रस्ताव स्वीकार हो चुका है। अब मैं डॉ. अम्बेडकर से उत्तर देने के लिए कहूंगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, संशोधन में की वह बात, जो उसे मसौदा समिति द्वारा बनाये गये मसौदे से भिन्न रूप प्रदान करती है, इन शब्दों के बढ़ाने में निहित है "जिससे समस्त शक्ति और प्राधिकार प्राप्त होते हैं"। अत: प्रश्न यह है कि जिस रूप में प्रस्तावना का मसौदा बनाया गया है उससे क्या इस सभा के सामान्य विचार से भिन्न कोई अन्य अर्थ निकलता है। वह सामान्य विचार यह है कि यह संविधान जनता से उद्भूत हो और इस बात को अभिज्ञात करे कि इस संविधान के बनाने की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित है। मैं समझता हूं कि ऐसी अन्य कोई बात नहीं है जो विवादास्पद हो। मेरा विचार यह है कि इस संशोधन में जो कुछ सुझाया गया है वह प्रस्तावना के इस मसौदे में पहले से ही है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** तो फिर आप उसे स्वीकार क्यों नहीं कर लेते?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** विवरणपूर्ण परीक्षण द्वारा अब मैं यह सिद्ध करूंगा कि मेरा विचार सही है।

श्रीमान, इस संशोधन का यदि कोई विश्लेषण करे तो उसके तीन विशिष्ट भाग होते हैं। एक भाग घोषणात्मक है। दूसरा भाग वर्णनात्मक है। तीसरा भाग यदि मैं उसके सम्बन्ध में यह कह सकता हूं तो वह लक्ष्यमूलक और आवश्यक है। घोषणात्मक भाग में निम्नलिखित पद है "हम, भारत के लोग, अपनी संविधान सभा में, अमुक दिवस अमुक मास......... एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।" इस सभा के वे सदस्य, जो इस बात के लिए चिन्तित हैं कि इस प्रस्तावना में यह कहा गया है या नहीं कहा गया है कि यह संविधान और इस संविधान के बनाने की शक्ति और प्राधिकार और सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता में निहित है, संशोधन के अन्य भागों को इस भाग से पृथक् कर दें जिसको मैंने पढ़ कर सुनाया है अर्थात् आरम्भ के शब्दों से पृथक् कर दें जो ये हैं "हम भारत के लोग, अपनी संविधान सभा में अमुक दिन, एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।" इस प्रकार से इसे पढ़ने पर.....

***श्री महावीर त्यागी:** लोग कहां से आ गये? इस कार्य में तो संविधान सभा के सदस्य हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वह विषय भिन्न है। इस समय मैं इस बारीक बात पर वाद-विवाद कर रहा हूं कि क्या इस संशोधन में यह कहा गया है या नहीं कहा गया है कि यह संविधान लोगों द्वारा निर्मित, अंगीकृत और अधिनियमित है। मैं समझता हूं कि यदि कोई व्यक्ति अन्य भागों से अर्थात् वर्णनात्मक तथा लक्ष्यमूलक भागों से पृथक् कर इसकी सरल भाषा को पढ़ता है तो उसे इस बात में कोई सन्देह नहीं हो सकता कि इस प्रस्तावना का अर्थ वही है।

मेरे मित्र श्री त्यागी ने यह कहा था कि यह संविधान जनता के एक ऐसे निकाय द्वारा पारित किया जा रहा है जिसका निर्वाचन एक संकीर्ण मताधिकार के आधार पर हुआ था। यह बिलकुल सत्य है कि यह वह संविधान सभा नहीं है

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

जिसमें इस देश का प्रत्येक वयस्क पुरुष और स्त्री सम्मिलित हो। पर यदि मेरे मित्र श्री त्यागी यह चाहते हैं कि यह संविधान तब तक प्रवृत्त न हो जब तक कि यह जनता के सामने जन-मत के रूप में न रखा जाये तो यह तो बिलकुल ही भिन्न विषय है जिसका उस विषय से कोई सम्बन्ध नहीं है जिस पर हम वाद-विवाद कर रहे हैं। चाहे इस संविधान को संविधान सभा द्वारा पारित होने पर मान्यता मिले या इसे मान्यता केवल तभी मिले जबकि यह जन-मत द्वारा पारित हो। यह बात बिल्कुल भिन्न है। इसका विवादान्तर्गत विषय से कोई सम्बन्ध नहीं है।

विवादान्तर्गत प्रश्न यह है। क्या यह संशोधन इस बात को स्वीकार, अभिज्ञात तथा घोषित करता है या नहीं कि यह जनता से उद्‌भूत है। मैं कहता हूं कि करता है।

मैं यह चाहूंगा कि माननीय सदस्य संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान को प्रस्तावना पर विचार करें। मैं उसके एक अंश को पढ़कर सुनाऊंगा। उसमें कहा गया है "हम, अमरीका के लोग"—मैं अन्य भागों को नहीं पढ़ रहा हूं—"हम, अमरीका के लोग, संयुक्त राज्य अमरीका के लिए इस संविधान को निर्मित तथा स्थापित करते हैं"। जैसाकि अधिकांश सदस्यों को विदित है इस संविधान का मसौदा एक छोटे से निकाय ने बनाया था। मैं इसका ठीक-ठीक विवरण और उन राज्यों की संख्या भूल गया हूं जिनका प्रतिनिधित्व उस छोटे से निकाय में था जिसकी बैठक फिलाडेल्फिया में संविधान बनाने के लिए हुआ था। (माननीय सदस्य—13 राज्य थे।) 13 राज्य थे। अत: यदि 13 राज्यों के प्रतिनिधि फिलाडेल्फिया में एक छोटे से सम्मेलन में एकत्रित होकर एक संविधान बना सके और यह कह सके कि जो कुछ उन्होंने किया वह जनता के नाम से था, उसके प्राधिकार पर था, उसकी सम्पूर्ण प्रभुता पर आधृत था तो मैं स्वयं तो यह नहीं समझता हूं—हां यदि कोई व्यक्ति पूर्णरूप से विद्याभिमानी हो तो बात दूसरी है—कि इस महान् महाद्वीप का प्रतिनिधित्व करने वाले 292 व्यक्तियों का निकाय अपनी प्रतिनिधित्व सामर्थ्य के अनुसार यह न कह सकें कि वह इस देश की जनता के नाम से कार्य कर रहे हैं। (*वाह, वाह*)।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं ऐसा नहीं समझता हूं। यह सब केवल एक सम्प्रदाय कर रहा है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यह विषय ही दूसरा है, मौलाना, मैं इस विषय को नहीं ले सकता हूं। अत: जहां तक इस विचार का सम्बन्ध है मैं निवेदन करता हूं कि किसी प्रकार के भय या शंका के लिए कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिये। इस सभा में कोई व्यक्ति यह नहीं चाहता है कि इस संविधान में ऐसी कोई भी बात हो जिससे ऐसा किंचित मात्र भी आभास हो कि यह संविधान ब्रिटिश संसद की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता से उद्‌भूत है। इसके लिए किसी व्यक्ति की कोई अभिलाषा नहीं हैं हम वास्तव में ब्रिटिश संसद की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जिस रूप में इस संविधान के प्रवर्तन से पूर्व वर्तमान थी हर प्रकार के अवशेष का अपमार्जन करना चाहते हैं। जहां तक इस विषय का सम्बन्ध है मसौदा समिति के किसी सदस्य और इस सभा के किसी सदस्य में कोई मतभेद नहीं है।

मैं समझता हूं कि कुछ सदस्यों को कुछ भय या शंका इस तथ्य के कारण है कि इस वर्ष के आरम्भ में संविधान सभा ने यह घोषणा निकालने में साथ दिया था कि यह देश ब्रिटिश कामनवेल्थ के साथ रहेगा। उनका विचार है कि इस मेल ने जनता की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता का कुछ अल्पीकरण किया है। श्रीमान, मैं नहीं समझता हूं कि ऐसा विचार करना ठीक है। प्रत्येक स्वाधीन देश को किसी अन्य देश से किसी न किसी प्रकार की संधि रखनी चाहिये। यदि एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न देश दूसरे सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न देश से संधि करता है तो इसके कारण वह देश कोई कम सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न नहीं हो जाता। मैं सबसे भद्दा उदाहरण ले रहा हूं। मैं जानता हूं कि कुछ लोगों को इस प्रकार का भय है। (*बाधायें*)।

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी:** श्रीमान, क्या मैं....

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर को भाषण देने दीजिये। उन्होंने किसी के प्रति उत्तेजनात्मक बात नहीं कही है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं यह कहता हूं कि इस प्रस्तावना में वह बात है जिसके लिए इस सभा का प्रत्येक सदस्य इच्छुक है कि यह संविधान अपना मूल स्रोत, अपना प्राधिकार और अपनी सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता जनता से प्राप्त करे। यह बात उसमें है।

इस कारण मैं इस संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूं। संशोधन के मूलपाठ के सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कहना चाहता हूं। यदि मैं कह सकता हूं तो सम्मानपूर्वक यह कहूंगा कि शायद इस संशोधन की रचना कुछ ऐसी है कि जिस रूप में प्रस्तावना का मसौदा हमने मनाया है उस रूप में वह उसमें ठीक नहीं बैठेगी, अत: इन दोनों बातों के कारण मैं समझता हूं कि मसौदा समिति द्वारा प्रयोग में लाई गई भाषा में परिवर्तन करना उचित नहीं है।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

> "कि संशोधनों की सूची (अंक 1) के संशोधन संख्या 2 में प्रस्थापित प्रस्तावना की प्रथम कंडिका के स्थान में निम्नलिखित कंडिका रखी जाये:
>
> 'We, on behalf of the people of India from whom is derived all power and authority of the Independent India, its constituent parts and organs of Government, having solemnly resolved to constitute India into a Sovereign Democratic Republic and to secure to all its citizens.'
>
> [हम, भारत की जनता की ओर से जिससे स्वाधीन भारत को, उसके अंगभूत भागों को तथा सरकार के अंगों को सब शक्ति और प्राधिकार प्राप्त होते हैं, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को]"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अन्य कोई संशोधन नहीं है। यदि कोई सदस्य कुछ कहना चाहता है तो प्रस्तावना जिस रूप में है उस पर वाद-विवाद हो सकता है।

***माननीय सदस्यः** अब मत ले लिया जाये।

***अध्यक्षः** यदि कोई नहीं बोलना चाहता तो मैं प्रस्तावना पर मत लूंगा। प्रश्न यह है "कि प्रस्तावना संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

प्रस्तावना संविधान में प्रविष्ट की गई।

***अध्यक्षः** अब हम इस सत्र को समाप्त करने वाले हैं। इससे पूर्व कि मैं इस सभा को स्थगित करूं कुछ ऐसी बातें हैं जिनका इस समय निश्चित करना आवश्यक है। एक प्रश्न जिसको निश्चित करना है वह इस संविधान के तृतीय पठन के लिए आगामी सत्र के सम्बन्ध में है, और पूर्व अवसरों पर सभा मुझे अनुज्ञा दे देती थी कि मैं किसी भी समय आवश्यक समझूं बुला लूं, और इस बार भी मैं समझता हूं कि सभा मुझे वैसी अनुज्ञा दे देगी, पर मैं श्री सत्यनारायण सिंह से निवेदन करूंगा कि वे इस प्रकार का एक औपचारिक संकल्प पेश कर दें।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हाः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> "कि यह सभा नवम्बर 1949 की की किसी ऐसी तिथि तक स्थगित की जाये जिसे राष्ट्रपति नियत करे।"

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

> "कि यह सभा नवम्बर 1949 किसी ऐसी तिथि तक स्थगित की जाये जिसे अध्यक्ष नियत करे।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि जिन संशोधनों की सूचना हमारे पास आई थी उन सबको हम समाप्त कर चुके हैं, और उनके बारे में मुझे कुछ और अधिक नहीं कहना चाहिये। अब हमने संविधान का द्वितीय पठन समाप्त कर दिया है। अभी हाल में इस सभा द्वारा पारित नियम 38-द के अधीन मुझ में सौंपी गई शक्ति के आधार पर अनुच्छेदों का फिर से मसौदा बनाने के लिए, विराम चिह्नों के पुनरीक्षण के लिए, हाशिये की टिप्पणियों के पुनरीक्षण और पूर्ण करने के लिए और संविधान में उन औपचारिक या आनुषंगिक या आवश्यक संशोधनों की सिफारिश करने के लिए, जो आवश्यक समझे जायें, संशोधनों सहित इस संविधान के मसौदे को मसौदा समिति के पास भेजूंगा। इस कार्य को समाप्त करने के लिए यह करना होगा और यह मैं जो प्राधिकार आपने मुझे दिया है उसके आधार पर करूंगा। इन बातों के सहित हम उस तिथि तक स्थगित होते हैं जिसे मैं घोषित करूंगा।

इसके पश्चात् सभा नवम्बर, 1949 की किसी उस तिथि तक के लिए स्थगित हो गई जिसे अध्यक्ष नियत करेगा।

GIPD–HS-271 PSD–6-12-52–320